भारतीय इतिहास पर टिप्पणियाँ

(६६४-१८५८)

ले० : कार्ल मार्क्स

इण्डिया पब्लिशर्स,
लखनऊ

NOTES ON INDIAN HISTORY (664–1858)

भारतीय इतिहास पर टिप्पणियाँ

(६६४–१८५८)

लेखक :
कार्ल मार्क्स

अनुवादक और सम्पादक :
रमेश सिनहा

द्वितीय संस्करण, अक्तूबर, १९७३

प्रकाशक :
इण्डिया पब्लिशर्स,
सी–७/२, रिवर बैंक कालोनी,
लखनऊ

मुद्रक :
चेतना प्रिंटिंग प्रेस,
२२ कैसरबाग,
लखनऊ

मूल्य : ६ रुपया

अन्तिम काल, १८२३-१८५८

प्रकाशक की विज्ञप्ति

कार्ल मार्क्स द्वारा रचित **भारतीय इतिहास पर टिप्पणियाँ** (Chronologische Auszuge uber Ostindien) का यह सस्करण सोवियत सघ की कम्युनिस्ट पार्टी की केन्द्रीय समिति के मार्क्सवाद-लेनिनवाद सस्थान द्वारा तैयार किये गये रूसी सस्करण पर आधारित है। इसका रूसी सस्करण १९४७ मे तैयार किया गया था। पाण्डुलिपि मे उक्त सस्थान ने बाद मे जो सुधार किये थे उनको भी इस सस्करण मे सम्मिलित कर लिया गया है।

रूसी सस्करण से इसमे एक अन्तर है लेखक ने बीच-बीच मे जो टिप्पणियाँ दी थी उन्हें इस सस्करण मे कोष्ठको के अन्दर दे दिया गया है।

टिप्पणियों की पाण्डुलिपि का सम्पादन लेखक नही कर सके थे। यही कारण है कि प्रकाशन के लिए तैयार करते समय टेक्निकल किस्म के कुछ परिवर्तन उसमें करने पड़े थे। स्वाभाविक रूप से इन परिवर्तनो का उस सामग्री पर भी प्रभाव पड़ा है जिसे मार्क्स ने अंग्रेज लेखको की रचनाओ से अंग्रेजी मे ही उद्धृत किया था। विशेष रूप से पाण्डुलिपि मे निम्न परिवर्तन किये गये है.

(१) भारतीय नामो के हिज्जे लेखक ने एल्फिस्टन तथा सीवेल के ग्रन्थो के आधार पर दिये थे; इस सस्करण मे उन्हे आधुनिक आधिकारिक स्वरूपों के अनुसार बदल दिया गया है। आमतौर से, नामो के परम्परागत हिज्जे को ही तरजीह दी गयी है। देशी हिज्जे से उसके काफी भिन्न होने पर भी उसे ही दिया गया है जिससे कि परम्परागत हिज्जे की कड़ी न टूटने पाए।

(२) जहाँ-जहाँ आवश्यक हुआ है वहाँ सर्वनामों, सहायक क्रियाओ तथा संयोजकों, आदि को जोड़ दिया गया है। जल्दी लिखने की वजह से जहाँ कोई छोटी-मोटी भूलें हो गयी थी उन्हे भी सुधार दिया गया है।

एक औपनिवेशिक देश के रूप में भारत का ध्यानपूर्वक अध्ययन करना मार्क्स ने पिछली शताब्दी के छठे दशक के बाद से ही शुरू कर दिया था। औपनिवेशिक शासन तथा लूट-खसोट के भिन्न-भिन्न स्वरूपों तथा उपायों का चलन भारत मे रहा है। भारत मे मार्क्स की दिलचस्पी इसलिए भी थी कि आदिम साम्यवादी समाज के विशिष्ट सम्बन्ध उसके अन्दर अब भी किसी हद तक मौजूद थे। "लेकिन", मार्क्स ने १८५३ में लिखा था, "भारत के अतीत का राजनीतिक स्वरूप चाहे कितना ही बदलता हुआ दिखलाई देता हो, पर, प्राचीन मे प्राचीन काल से लेकर १९वी शताब्दी के पहले दशक तक, उसकी सामाजिक स्थिति अपरिवर्तित ही बनी रही है।" ["भारत में ब्रिटिश शासन", भारत का प्रथम स्वातंत्र्य संग्राम, हिन्दी संस्करण, दिल्ली, पृष्ठ ११]

मार्क्स की टिप्पणियों मे भारतीय इतिहास के लगभग एक हजार वर्षों को—सातवी शताब्दी के मध्य से लेकर १९वीं शताब्दी के मध्य तक के समय को—लिया गया है। इनमे प्रथम मुस्लिम आक्रमणों से लेकर २ अगस्त, १८५८ के उस समय तक को लिया गया है जिसमे ब्रिटिश पार्लमिन्ट ने इण्डिया बिल पास करके भारत के अनुबन्धन को कानूनी जामा पहना दिया था।

शुरू का काल, जो १८वी शताब्दी के मध्य मे समाप्त हो जाता है, इन टिप्पणियों के एक तिहाई से भी कम भाग मे आ जाता है। पाण्डुलिपि के शेष भाग में अंग्रेजों की भारत-विजय का इतिहास दिया गया है।

मार्क्स ने उन मुस्लिम राजवंशो की सूची दी है जो उत्तरी भारत में, सिन्धु और गंगा की घाटियों मे, शासन करते थे। बाद में यहीं से इन शासकों ने दक्षिण की ओर अपना राज्य-विस्तार किया था। मुगल साम्राज्य के इतिहास पर मार्क्स ने और अधिक विस्तार से विचार किया है। मुगल साम्राज्य की स्थापना १५२६ मे, बाबर के आक्रमण के बाद हुई थी। तैमूर लंग और चंगेज़ खाँ को बाबर अपना पूर्वज बताता था।

अंग्रेजों की भारत-विजय के इतिहास पर विचार करने से पहले, संक्षेप में, एक बार फिर उन विभिन्न विदेशी आक्रमणों का मार्क्स उल्लेख करते है जिनका श्रीगणेश मैसिडोनियाई सिकन्दर के हमले से हुआ था। भारत पर ब्रिटेन की विजय पर विचार करने से पहले विभिन्न भारतीय राज्यों का भी वे सिंहावलोकन करते हैं।

अपने जीवन के अन्तिम वर्षों मे मार्क्स ने जो रचनाएं तैयार की थी उनमे **भारतीय इतिहास पर टिप्पणियां** का प्रमुख स्थान है। **मार्क्स और एंगेल्स के पुरालेखों** (खण्ड ५-८) के एक अग के रूप मे आम इतिहास के सम्बन्ध मे प्रकाशित की जाने वाली **कालक्रमानुसारी टिप्पणियों** का ये **टिप्पणियाँ** एक महत्वपूर्ण परिशिष्ट हैं।

भारत की भूमि व्यवस्था के बदलते हुए स्वरूपों का अध्ययन करते समय मार्क्स ने काल-क्रम के अनुसार घटनाओं का एक वृत्त तैयार किया था। इसका उद्देश्य उस देश की विशाल भूमि पर घटने वाली ऐतिहासिक घटनाओं का एक सुगठित *विवरण तैयार करना था।* उन्होने *भूमि-व्यवस्था के स्वरूपों की प्रकृति तक* ही नहीं अपने को सीमित रखा था, बल्कि सम्पूर्ण वास्तविक ऐतिहासिक क्रिया का अध्ययन करने का प्रयास किया था। अन्य वस्तुओं के साथ-साथ, उन्होने उन परिस्थितियों का भी अध्ययन किया था जिनके अन्तर्गत मुस्लिम कानून ने भारतीय भूमि-व्यवस्था को प्रभावित किया था। सामन्ती व्यवस्था का उसके अन्तर्गत कैसे विकास हुआ था इसका, तथा अंग्रेजो ने भारत पर कैसे विजय प्राप्त की थी और कैसे उसे दबाया-कुचला था, इसका भी उन्होंने अध्ययन किया था।

बाद में, मार्क्स ने इस बात का विश्लेषण किया था कि, कदम-ब-कदम, भारत मे ब्रिटिश शासन का कैसे विस्तार हुआ था। भारत को ब्रिटिश ईस्ट इण्डिया कम्पनी के आदेश के अनुसार फतह किया गया था। धनपतियों, व्यापारियों तथा अभिजात वर्ग के श्रीमानो के लूट के एक हथियार के रूप मे इस *कम्पनी की स्थापना सत्रहवी शताब्दी के प्रारम्भिक भाग मे हुई थी।* हुकूमत के उन साम्राजी स्वरूपो तथा उपायो को मार्क्स ने स्पष्ट रूप से खोल कर सामने रख दिया है जिनका अंग्रेजो ने भारत मे इस्तेमाल किया था। भारत मे ब्रिटिश शासकों की एक लम्बी शृंखला का परिचय उन्होंने प्रस्तुत किया है।

उस भाग मे जिसे मार्क्स ने **"अन्तिम काल, १८२३-१८५८ [ईस्ट इण्डिया कम्पनी का अन्त]"** कहा है, विजय के लिए की गयी उन लड़ाइयो की एक सूची उन्होंने दी है जो भारत तथा पड़ोसी देशों मे अंग्रेजो ने लड़ी थी।

मार्क्स की **टिप्पणियाँ** बतलाती है कि ब्रिटिश औपनिवेशिक साम्राज्य का विस्तार किस प्रकार भारतीय जनता का निर्मम शोषण करके किया गया था। भारत के लोगो के लिए ब्रिटिश शासन के जो आर्थिक और राजनीतिक परिणाम निकले है उन पर मार्क्स की **टिप्पणियों** मे खास जोर दिया गया है।

अपनी **टिप्पणियों** को तैयार करने के लिए मार्क्स ने पुस्तकों की एक भारी संख्या पढी थी। भारतीय इतिहास के प्रारम्भिक काल के सम्बन्ध मे—सातवी शताब्दी से अठारहवी शताब्दी के मध्यकाल तक के समय के सम्बन्ध में–उन्होने मुख्यतया एल्फिस्टन द्वारा रचित, **भारत का इतिहास** से सहायता ली थी। अंग्रेजों द्वारा भारत की विजय के राजनीतिक इतिहास का काल-क्रम के अनुसार वृत्त तैयार करने के लिए उन्हाने रौबर्ट सीवेल की रचना, **भारत का विश्लेषणात्मक इतिहास** (लदन, १८७०) का उपयोग किया था।

भारतीय इतिहास पर टिप्पणियाँ को प्रेस के लिए तैयार करते समय उन जगहो पर कुछ एकदम आवश्यक सुधार कर दिये गये है जहा कि उनकी पाण्डुलिपि आमतौर से स्वीकृत तथा अकाट्य तथ्यो से भिन्न थी। कुछ अन्य वातों के सम्बन्ध में, जिनके बारे में वाद के प्रामाणिक शोधकार्य ने ऐसे तथ्य प्रस्तुत किये है जो मार्क्स द्वारा दी गयी तिथियों से मेल नही खाते—पृष्ठ के नीचे टिप्पणियों के रूप मे अन्य तिथिया दे दी गयी है। इन तिथियो के साथ उन स्रोतों का भी उल्लेख कर दिया गया है जहां से वे ली गयी हैं।

पृष्ठो के नीचे की सारी टिप्पणिया सम्पादको ने जोडी हैं। जहां लेखक की कृति के अन्दर बीच मे कही सम्पादकीय टिप्पणिया जोडी गयी है वहाँ उन्हें बडे कोष्ठकों के अन्दर दिया गया है।

—सोवियत संघ की कम्युनिस्ट पार्टी की
केन्द्रीय समिति का
मार्क्सवाद-लेनिनवाद संस्थान

भारतीय इतिहास पर टिप्पणियाँ
(६६४-१८५८)

[मुसलमानों द्वारा भारत की विजय]

भारत में अरबों का प्रथम प्रवेश ६६४ ईसवी (हिजरी सन् का ४४वा वर्ष) । मुहल्लब मुल्तान मे घुस गया ।

६३२. **मुहम्मद साहब की मृत्यु ।**

६३३. अरबो ने **अबूबकर** के नेतृत्व मे **सीरिया** पर हमला कर दिया; उन्होंने **फ़ारस** पर आक्रमण किया, ६३८ में उसे कुचल दिया और फ़ारस के शाह को आमू नदी के उस पार भगा दिया; लगभग इसी समय खलीफा के एक सिपह-सालार, **उमर** ने **मिस्र** को फतह कर लिया ।

६५०. फारस के शाह ने अपने राज्य को वापिस लेने की कोशिश की, हार गया, और मारा गया, आमू के किनारे तक पूरे देश पर अरबों ने कब्जा कर लिया । अब फारस **और भारत को उत्तर में केवल** काबुल और **दक्षिण में बिलोचिस्तान अलग करते थे;** उनके बीच अफगानिस्तान था ।

६६४. **अरब काबुल** [पहुंच गये]; इसी वर्ष, एक अरब जनरल **मुहल्लब** ने भारत पर हमला **कर** दिया, वह **मुल्तान** तक बढ गया ।

६९०. **अब्दुर्रहमान ने काबुल की फ़तह** पूरी कर ली; **बसरा** के गवर्नर, हज्जाज ने उसे जनरल बनाकर फारस की खाड़ी में [शत्तुल अरब के मुहाने पर] भेज दिया ।

७११. **मुहम्मद क़ासिम** (हज्जाज के भतीजे) ने **सिन्ध को जीत लिया** (वह बसरा से नावों पर वहा गया था) ।

७१४. **मुहम्मद** कासिम की, जलन के कारण, खलीफा वलीद ने हत्या कर दी; इसने **सिन्ध में मुसलमानियत के पतन का** रास्ता खोल दिया । ३० वर्ष

बाद, एक भी अरब बाक़ी नहीं रह गया था। —हिन्दुओं की अपेक्षा फ़ारस के लोगों के दरम्यान मुसलमानी धर्म अधिक तेज़ी से फैला, क्योंकि वहां के मुल्लाओ का वर्ग अत्यन्त निकृष्ट तथा पतित था; इसके विपरीत, भारत के पुरोहित वर्ग का राष्ट्र मे सर्वाधिक शक्तिशाली राजनीतिक स्थान था। (एल्फिंस्टन)

(१) खुरासान के मुसलमान राजवंश

७१३. अरब लोग आमू के उस पार[1] जम गये। (६७० में उन्होने आमू नदी को पार कर लिया और कुछ समय बाद तुर्कमानियों से बुखारा और समरकन्द को छीन लिया); इस नये क्षेत्र का खलीफा कौन बने, इसको लेकर उस समय फ़ातिमा (मुहम्मद साहब की बेटी) तथा अब्बास (उनके चचा) के परिवारों के बीच जबर्दस्त संघर्ष हुआ था; जीत अब्बास के परिवार की हुई, और हारुनल रशीद उस कौम का पांचवां खलीफा बन गया। उसकी—

८०९—में, आमू के उस पार के प्रदेश मे एक विद्रोह को दबाने के लिए जाते समय, मृत्यु हो गयी; उसके बेटे मामून ने खुरासान मे फिर से अरब आधिपत्य की स्थापना की; बाद मे अपने पिता के स्थान पर वह बगदाद का खलीफ़ा बन गया; उसके मन्त्री, ताहिर ने विद्रोह कर दिया और—

८२१—में अपने को उसने खुरासान का स्वतंत्र राजा घोषित कर दिया, उसका परिवार वहां पर—

८२१-८७०—तक ताहिरी राजवंश के नाम से राज्य करता रहा; फिर सफारी राजवंश ने उसे गद्दी से हटा दिया।

८७२-९०३—सफारी राजवंश, उसके अन्तिम सदस्य याकूब को सामानी के परिवार वालो ने हरा दिया।

९०३-९९९. सामानी राजवंश। इस परिवार के भिन्न-भिन्न सदस्य, जिनके पास आमू पार के प्रदेश मे स्वतन्त्र राज्य थे, आमू को पार करके फ़ारस की तरफ चले गये और वहां एक बड़े क्षेत्र पर उन्होंने अधिकार कर लिया; किन्तु बुइया घराने के लोगों ने (जिन्हें डिलेमाइट भी कहा जाता है) जो उस वक्त बग़दाद के खलीफ़ा थे, उन्हे भगाकर खुरासान वापिस भेज दिया; फिर वे वहीं बने रहे।

---

[1] आधुनिक इतिहासकार उस क्षेत्र के अरबी नाम, 'मावराए नहर' का इस्तेमाल करते हैं।

९६१. सामानी वंश के पाँचवें राजा[1] **अब्दुल मलिक** के शासन काल मे, **अलप्त-गीन** नाम के एक तुर्की राजा गुलाम को, जिसे एक दरबारी विदूषक के रूप मे नौकर रखा गया था, अन्त मे **खुरासान** का गवर्नर नियुक्त कर दिया गया था। इसके बाद ही अब्दुल मलिक की मृत्यु हो गयी और अलप्तगीन, जिसे नया बादशाह नापसंद करता था, अपने चुने हुए अनुयायियो के गिरोह को लेकर **ग़ज़नी** भाग गया; उसने अपने को वहाँ का गवर्नर बना लिया। अलप्तगीन का एक गुलाम **सुबुक्तगीन**, बाद में, खुरासान के दरबार मे उसका वारिस बना। **ग़ज़नी** भारतीय सिमान्त से केवल दो सौ मील की दूरी पर था; **लाहौर का राजा जयपाल**, एक मुसलमान सरकार के इतने नज़दीक होने की बात से चिन्तित रहता था, इसीलिए एक सेना लेकर उसने **ग़ज़नी पर हमला कर दिया**; दोनो के बीच समझौता हो गया; राजा ने इस समझौते को तोड दिया; इस पर **सुबुक्तगीन** ने भारत पर हमला कर दिया और सुलेमान पर्वत-माला के अन्दर से वह आगे बढ आया। *जयपाल ने दिल्ली, कन्नौज और कालिंजर के राजाओ के साथ समझौता* करके, कई लाख की सेना लेकर, सुबुक्तगीन का सामना करने के लिए आगे बढना शुरू किया; **सुबुक्तगीन ने उसे हरा दिया**। इसके बाद ही **पंजाब में एक मुसलमान अफसर को पेशावर का गवर्नर** नियुक्त करके वह वापिस लौट गया। इसी दरम्यान उसके परिवार के सातवें सदस्य, सामानी बादशाह नूह के विरुद्ध तातारो ने बगावत कर दी और उसे आमू नदी के पार फारस की तरफ भगा दिया। सुबुक्तगीन उसकी मदद के लिए दौडा, बागियो को उसने निकाल बाहर किया, कृतज्ञतावश नूह ने (सुबुक्तगीन के के सबसे बडे लडके) महमूद को **खुरासान का गवर्नर** बना दिया। चूँकि सुबुक्तगीन की मृत्यु के समय महमूद मौजूद नही था, इसलिए उसके छोटे भाई **इस्माईल** ने गजनी के सिंहासन पर कब्ज़ा करा लिया; परन्तु महमूद ने उसे हराकर क़ैद कर लिया। महमूद ने **मंसूर** के पास, जो उस समय का सामानी बादशाह था, अपना एक राजदूत भेजा और यह माग की कि उसे **ग़ज़नी का गवर्नर** मान लिया जाय; यह मांग नही मानी गयी; **महमूद** ने अपने को **ग़ज़नी का स्वतंत्र बादशाह** घोषित कर दिया; थोड़े ही समय बाद **मंसूर** को गद्दी से हटा दिया गया और–

९९९– मे, **ग़ज़नी के महमूद** ने **सुलतान** की पदवी धारण कर ली।

---

[1] शासक।

९९९. से अप्रैल २९, १०३० तक (जब उसकी मृत्यु हो गई) महमूद गजनी का सुलतान रहा।

९९९. सामानी राजवंश के पतन का फायदा उठाकर, मंसूर के एक सिपहसालार, इलेक खां ने बुखारा तथा आमू-पार के तमाम मुसलमानी इलाकों पर कब्जा कर लिया। उसके और महमूद गजनी के बीच युद्ध हुआ।

१०००. महमूद ने इलेक खां के साथ सन्धि कर ली और उसकी बेटी से शादी कर ली। इस कदम के पीछे उसकी योजना यह थी कि भारत पर हमला करने के लिए इस तरफ से वह पूर्णतया आजाद हो जाय।

(२) महमूद ग़जनवी और उसके और वारिसों द्वारा भारत पर क्रमशः ९९९-११५२ और ११८६ में आक्रमण

१००१. भारत पर महमूद का पहला आक्रमण। लाहौर। एक विशाल सेना के साथ महमूद ने सुलेमान पर्वत-माला को पार किया; पेशावर के समीप लाहौर के राजा, जयपाल पर हमला कर दिया; फिर सतलज नदी पार करके भटिण्डा पर उसने क़ब्ज़ा कर लिया; जयपाल के पुत्र, आनन्दपाल को राजा बनाकर वह गजनी वापिस लौट गया।

१००३.[1] महमूद का दूसरा आक्रमण। भाटिया। आनन्दपाल ने तो सन्धि की उन शर्तों का पालन किया था जो उस पर लाद दी गयी थी, किन्तु भाटिया के राजा ने, जिसने खुद भी सन्धि पर दस्तखत किये थे, कर देने से इन्कार कर दिया। महमूद ने उस पर हमला कर दिया और उसे हरा दिया।

१००५. महमूद का तीसरा आक्रमण। मुल्तान। मुल्तान के अफ़ग़ानी शासक, अबुल फ़तह लोदी ने विद्रोह कर दिया। महमूद ने उसे हरा दिया और उससे हरजाना भरने के लिए कहा। उसकी अनुपस्थिति में, इलेक खां ने आमू नदी पार करके एक बड़ी तातारी सेना के साथ खुरासान पर हमला बोल दिया। महमूद (भारतीय हाथियों को लेकर) गजनी से तेजी से खुरासान आया और इलेक खां को खदेड़कर उसने बुखारा भगा दिया।

१००८. महमूद का चौथा आक्रमण। पंजाब। नगरकोट का मन्दिर। भटिण्डा के आनन्दपाल ने महमूद के विरुद्ध भारतीय राजाओं को इकट्ठा करके एक शक्तिशाली सेना तैयार कर ली थी। हिन्दू बहुत डटकर लड़े, महमूद ने उन्हें हरा दिया; नगरकोट के मन्दिर को उसने लूट लिया।

---

१ एल्फिस्टन के 'भारत के इतिहास' (लंदन, १८६६) के अनुसार : १००४।

१०१०. महमूद ने **गोर राज्य** को विजय कर लिया, **इसमें अफग़ान बसते थे। १०१० का शीतकाल। महमूद का पाँचवाँ आक्रमण। मुल्तान पर** नया आक्रमण, अबुल फ़तह लोदी को एक कैदी के रूप मे गजनी लाया गया।

१०११. महमूद का छठा आक्रमण। थानेश्वर (यमुना के तट पर); राजा लोग अपनी फौजों को इकट्ठा कर सके इससे पहले ही महमूद ने वहाँ के *सोने-चाँदी से भरे मन्दिर पर क़ब्ज़ा कर लिया।*

१०१३ और १०१४. सातवाँ और आठवाँ आक्रमण। कश्मीर में लूट-खसोट करने और वहाँ की परिस्थिति का पता लगाने के लिए दो अचानक आक्रमण।

१०१३. इलेक खाँ की मृत्यु हो गई। १०१६ मे, महमूद गज़नी ने **बुखारा और समरकन्द** पर अधिकार कर लिया, और १०१७ में आमू-पार के पूरे प्रदेश को उसने फतह कर लिया।

१०१७ का शीतकाल नवां आक्रमण। महमूद का विशाल आक्रमण; **पेशावर** के अन्दर से कूच करता हुआ वह **कश्मीर में** घुस गया, वहाँ से **यमुना** की तरफ बढ़ा, उसे पार किया, **कन्नौज** (प्राचीन नगर) ने उसके सामने आत्म-समर्पण कर दिया; फिर वह **मथुरा** की तरफ बढ़ता गया, उसे उसने एकदम मिस्मार कर दिया; **महावन** और **मुञ्ज** को **नष्ट-भ्रष्ट करने** और **लूटने** के बाद वह **लौट** आया।

१०२२. दसवाँ और ग्यारहवाँ आक्रमण। क़न्नौज के राजा को नगर से निकाल *दिया गया था, उसकी सहायता के लिए, महमूद ने दो अभियान किये।* इनमे से एक अभियान के दौरान **लाहौर को एकदम बर्बाद कर दिया गया।**

१०२४. बारहवाँ आक्रमण। गुजरात और सोमनाथ। महमूद गजनवी का अन्तिम बडा आक्रमण; गज़नी से कूच करके वह मुल्तान आया, फिर **सिन्ध के रेगिस्तान से होता हुआ गुजरात** पहुंचा, उसकी राजधानी अह्निलवाड पर उसने क़ब्ज़ा कर लिया; रास्ते मे **अजमेर के राजा के राज्य** को उजाडकर बर्बाद कर दिया; फिर **सोमनाथ के मन्दिर** को लूट डाला। राजपूत सेनाओं ने बहुत बहादुरी से उसकी रक्षा करने की कोशिश की थी। इसके बाद, महमूद अह्निलवाड़ लौट गया और वहाँ एक वर्ष तक टिका रहा। रेगिस्तान के अन्दर से जब वह वापिस लौटा तो उसे भयकर नुकसान पहुंचा।

१०२७. सेलजुकों के तुर्की कबीले ने विद्रोह कर दिया, महमूद ने उसे कुचल दिया।

१०२८. फ़ारस के ईराक़ को डेलमाइटों के हाथों से फिर छीन लिया गया; इस प्रकार पूरा फ़ारस गजनी के महमूद के शासन के नीचे आ गया।

२९ अप्रैल, १०३०. महमूद गज़नवी की मृत्यु। महाकवि फ़िरदौसी उसके दरबार में रहते थे। उसकी सेना के मुख्य सैनिक तुर्क थे। तुर्कों को फ़ारस के लोगों का गुलाम समझा जाता था और उन्हे लेकर ममलूक (गुलाम) सैनिकों के रेजीमेन्ट तैयार किये गये थे। गड़रिये अधिकांशतया तातार थे। अमीर-उमरा और उच्च वर्ग की आबादी का अधिकांश भाग अरबों से बना था; न्याय तथा धर्म के सारे अधिकार उन्ही को थे; नागरिक प्रशासन के कार्य को अधिकांशतया फ़ारसी लोग चलाते थे।

महमूद गज़नवी अपने पीछे तीन बेटे छोड़ गया था : मुहम्मद, मसऊद और अब्दुल रशीद; मरते समय उसने अपने सबसे लड़े लड़के, मुहम्मद को सुलतान नियुक्त किया था, किन्तु उसी साल (१०३०) मसऊद ने, जो सिपाहियों का प्रियपात्र था, अपने बड़े भाई को गिरफ्तार कर लिया, उसकी आँखे फोड़ दी, उसे बन्दी बनाकर डाल दिया, और राजसिंहासन पर स्वयं अधिकार कर लिया।

१०३०-१०४१. सुलतान मसऊद प्रथम। उसके राज्यकाल में आमू के उस पार के सेलजुक तुर्कों ने बग़ावत कर दी, मसऊद ने उन्हें खदेड़कर उनके देश भगा दिया।

१०३४. मसऊद प्रथम। लाहौर में उठते हुए विद्रोह को कुचलने के लिए वह भारत [गया], फिर उसने सेलजुकों के ऊपर चढ़ाई कर दी।

१०३४-१०३९. सेलजुकों से उसकी लड़ाई; मर्व के समीप जिन्दगान [दन्दनकान] में वह बहुत बुरी तरह पराजित हुआ और भारत की तरफ़ भाग गया; उसके अफ़सरों ने बग़ावत कर दी; उन्होंने मुहम्मद के बेटे अहमद को गद्दी पर बैठा दिया; अहमद ने अपने चचा मसऊद का पीछा करवाया, उसे पकड़वा लिया, और—

१०४१—में, मरवा डाला। मार डाले गये सुलतान के बेटे मौदूद ने सुल्तान अहमद पर [हमला किया]। [उसने] बल्ख से कूच किया, नगरहार में अहमद से उसकी मुठभेड़ हुई, उसे उसने पराजित कर दिया, उसे और उसके पूरे परिवार को उसने मरवा डाला, और अपने को सुल्तान घोषित कर दिया।

१०४१-१०५०. सुलतान मौदूद। आमू पार के प्रदेश के सेलजुकों ने तुग़रिल बेग को अपना नेता चुना, इन्होंने भारी विजयों के उपरान्त

करने की कोशिश की, और अपनी सेना को चारों तरफ फैला दिया; इससे मौदूद को आमू पार के प्रदेश को फ़तह करने का मौका मिल गया। दूसरी तरफ, दिल्ली के राजा ने विद्रोह कर दिया, थानेश्वर, नगरकोट तथा लाहौर को छोडकर सतलज पार के पूरे प्रदेश को मुसलमानों से उसने छीन लिया। लाहौर को मुसलमानो की एक छोटी गैरीसन ने बचा लिया।

१०४६. मौदूद से, जो अपने सारे जीवन सेलजुको के खिलाफ़ लड़ता रहा था, ग़ोर के राजा ने उस कबीले के विरुद्ध लडाई मे मदद करने की प्रार्थना की, मौदूद ने उसे सहायता देने का वचन दिया; किन्तु मदद देने के बजाय उसने अपने उस सहयोगी की हत्या कर दी और ग़ोर पर अधिकार कर लिया; १०५० मे ग़ज़नी मे उसकी खुद की मृत्यु हो गयी; उसका छोटा भाई—

१०५०-१०५१—सुलतान अबुल हसन उसका उत्तराधिकारी बना; सारे देश ने उसके विरुद्ध विद्रोह कर दिया; गजनी के सिवा उसके पास कुछ नही बचा। उसका सेनानायक अली इब्न रबिया भारत गया, वहाँ उसने स्वयं जीतें हासिल की। सुलतान महमूद के सबसे छोटे बेटे, अबुल रशीद के पक्ष मे, जो कि सुलतान अबुल हसन का चचा था, पूरा पश्चिमी क्षेत्र हथियार लेकर [उठ खड़ा हुआ]; अबुल रशीद ने अबुल हसन को गजनी की गद्दी से हटा दिया।

१०५१-१०५२. सुलतान अबुल रशीद; विद्रोहियों के सरदार, तुग़रिल ने गज़नी मे उसे घेर लिया, उसके किले पर चढाई कर दी और नौ राजपुत्रों के साथ सुलतान की हत्या कर दी; क्रुद्ध आबादी ने तुगरिल को मार डाला और उसके कबीले को वहाँ से बाहर खदेड़ दिया। देश मे सुबुक्तगीन वंश के किसी राजकुमार की तलाश होने लगी; एक किले मे कैद फर्रुखज़ाद का पता लगा, उसे मुक्त किया गया, और गद्दी पर बैठा दिया गया।

१०५२-०१५८. सुलतान फ़र्रुखज़ाद। शान्तिपूर्ण शासन; स्वाभाविक मृत्यु मे मरा; उसके स्थान पर उसका भाई—

१०५८-१०८९—सुलतान इब्राहीम (धर्मात्मा) सुलतान बना। इसके शासनकाल मे कोई विशेष बात नही हुई; उसका उत्तराधिकारी उसका पुत्र—

१०८९-१११४—सुलतान मसऊद द्वितीय हुआ; मुसलमान फ़ौजों को वह गंगा के उस पार तक ले गया; उसका उत्तराधिकारी उसका बेटा—

१११४-१११८—सुलतान अर्सलान बना; उसने बहराम को छोडकर अपने तमाम भाइयों को पकड कर कैद कर दिया; बहराम सेलजुकों के पास भाग

कर बच गया था; इन लोगों ने उसका साथ दिया, अर्सलान के ऊपर चढ़ाई कर दी, उसे हरा दिया और बहराम को गद्दी पर बैठा दिया।

१११८-११५२. सुलतान बहराम। कुछ वर्षों के शासन के बाद, उसने गोर के साथ छेड़खानी शुरू की, उसके एक राजकुमार को मरवा डाला, मारे गये शाहजादे के भाई, सैफुद्दीन ने उसके खिलाफ बगावत कर दी, गजनी पर कब्जा कर लिया, और बहराम को भगाकर पहाड़ों में खदेड़ दिया। बहराम फिर लौट आया, सैफुद्दीन को उसने गिरफ्तार कर लिया और सता-सताकर मार डाला; मारे गये व्यक्ति का एक भाई, अलाउद्दीन, गोर लोगों की फौज लेकर आगे बढ़ा, गजनी को उसने बिल्कुल बर्बाद कर दिया, उसे मिस्मार करके मिट्टी में मिला दिया, उसने केवल तीन इमारतों को—महमूद, मसऊद प्रथम, और इब्राहीम के मक़बरों को—साबुत खड़ा रहने दिया था। बहराम लाहौर भाग गया; गजनी राजवंश का अन्त हो गया। गजनी का शाही परिवार लाहौर में ३४ वर्ष तक (११८६ तक) और राज्य करता रहा, इसके बाद खत्म हो गया।

इस प्रकार, महमूद गजनवी द्वारा अपने को (९९९ में) सुल्तान घोषित करने के १८७ वर्ष बाद, महमूद गजनवी के राजवंश का अन्त हो गया।

(३) गजनी में सुबुक्तगीन वंश के ध्वंसावशेषों पर गोर वंश की स्थापना, ११५२–१२०६

११५२-११५६. अलाउद्दीन। अर्सलान से भागकर सेलजुकों के पास पहुंचने पर बहराम ने उनसे वादा किया था कि अगर वे उसे उसकी गद्दी फिर दिलवा देंगे तो वह उन्हें कर (खराज) देगा और वास्तव में जब तक वह गद्दी पर बना रहा तब तक उन्हें खराज देता भी रहा। अलाउद्दीन ने ज्यों ही अपने को गजनी का बादशाह घोषित किया, त्यों ही सेलजुकों के प्रधान, संजर ने उससे माँग की कि वह पहले की ही तरह खराज दे; अलाउद्दीन ने खराज देने से इन्कार कर दिया; संजर ने अपनी सेना लेकर उस पर चढ़ाई कर दी और उसे बन्दी बना लिया; फिर भी संजर ने उसे उसकी गद्दी पर बिठा दिया।

११५३. ओगुज के तातारी क़बीले ने संजर और अलाउद्दीन दोनों के राज्यों पर अधिकार कर लिया। अलाउद्दीन की मृत्यु के बाद उसका बेटा—

११५६-११५७—सैफुद्दीन उसका उत्तराधिकारी बना; उसे उसके एक

ने, जिसके भाई की उसने हत्या कर दी थी, मार डाला। अलाउद्दीन के दो भतीजे थे : ग़यासुद्दीन और शहाबुद्दीन।

११५७-१२०२. ग़यासुद्दीन गद्दी पर बैठा, उसने अपने भाई शहाब को अपनी फ़ौजों का सेनानायक बना दिया और उसके साथ मित्रता कर ली। दोनों भाइयों ने *ख़ुरासान को जीत कर सेलजुकों से छीन लिया।* वे दोनों मिल-जुलकर काम करते रहे।

११७६. शहाब लाहौर [गया]; वहाँ महमूद के वंश के अन्तिम प्रतिनिधि, ख़ुसरों द्वितीय को उसने हरा दिया।

११८१. शहाब ने सिन्ध पर क़ब्ज़ा कर लिया, और ११८६ मे ख़ुसरों को क़ैद कर लिया; इसके बाद उसकी नजर हिन्दुस्तान के शक्तिशाली राजपूत राज्यों की तरफ़ गयी; दिल्ली और अजमेर मे उस समय महान् राजा पृथ्वीराज राज्य करता था। शहाब दिल्ली के आक्रमण में हार गया। फिर वह ग़ज़नी लौट गया।

११९३. शहाब ने भारत पर फिर हमला किया, राजा पृथ्वीराज को उसने पराजित कर दिया, उसको मार डाला, अपने एक गुलाम,[1] क़ुतुबुद्दीन को, जो एक अमीर बन गया था, उसने अजमेर का शासक बना दिया और ख़ुद चला गया। कुतुबुद्दीन ने दिल्ली पर क़ब्ज़ा कर लिया, वहाँ शासक के रूप मे वह रहता रहा, बाद मे उसने अपने को स्वतंत्र घोषित कर दिया और, इस प्रकार, दिल्ली का पहला मुसलमान बादशाह बन गया।

११९४. शहाब ने कन्नौज और बनारस पर क़ब्ज़ा कर लिया (कन्नौज का राजा [मारा गया] और उसके परिवार के लोग भागकर मारवाड़ चले गये, वहाँ पर उन्होंने एक राज्य क़ायम किया); ग्वालियर को भी उसने अपने राज्य मे मिला लिया; इसी बीच कुतुबुद्दीन ने गुजरात, अवध, उत्तर बिहार तथा बंगाल को लूट-पाट कर उजाड़ दिया।

१२०२. ग़यास की मृत्यु हो गयी; उसका वारिस उसका भाई—

१२०२-१२०६—शहाबुद्दीन बना; इसने ख्वारिज्म को फतह करने की कोशिश की; हार गया और अपनी जान बचाने के लिए उसे वहाँ से भागना पड़ा।

१२०६. ख्वारिज्म पर उसने दूसरी बार हमला किया; अपने अंग रक्षकों से अलग पड़ जाने पर कुछ खोकरों ने उसकी हत्या कर दी (खोकर एक लुटेरी जाति है); उसका वारिस उसका भतीजा—

[1] पूर्वी देशों के राजाओं के गुलाम (ममलूक) उनके दरबारों में अक्सर प्रमुख भूमिका अदा करते थे और कभी-कभी महल में होने वाली क्रान्तियों का भी नेतृत्व करते थे।

१२०६. महमूद बना; वह अपने राज्य को अन्दरूनी झगड़ों से न बचा सका; उसके राज्य के टुकड़े-टुकड़े हो गये; उसके विभिन्न भाग शहाब के प्रिय गुलामों के हाथों में चले गये। सल्तनत का बँटवारा हो गया; कुतुबुद्दीन ने दिल्ली और भारतीय इलाकों को लिया। (दिल्ली १२०० वर्षों से एक छोटे और महत्वहीन राज्य की राजधानी बनी चली आयी थी।) एक गुलाम यलदौज ने ग़जनी पर अधिकार कर लिया, परन्तु ख्वारिज्म के बादशाह ने उसे वहाँ से निकाल बाहर किया, वह भागकर दिल्ली पहुंचा। एक दूसरे गुलाम, नासिरुद्दीन ने अपने को मुलतान और सिन्ध का मालिक बना लिया।

(४) दिल्ली के गुलाम [ममलूक] बादशाह १२०६-१२८८

१२०६-१२१०. कुतुबुद्दीन; उसकी मृत्यु के बाद उसका बेटा—

१२१०. अरम मसका उत्तराधिकारी बना, अगले वर्ष उसे उसके बहनोई—

१२११-१२३६. शमसुद्दीन इल्तुतमिश ने गद्दी से हटाकर उसकी जगह ले ली।

१२१७. चंगेज खां (जन्म ११६४[1]) के नेतृत्व में मंगोलों की एक विशाल सेना ने, जो तूरान से आ रही थी, ख्वारिज्म के ऊपर हमला कर दिया; जलाल (शाह के बेटे) ने बड़ी बहादुरी से सिन्ध नदी के किनारे तक, जहाँ मगोलों की सेना ने उसे ढकेल दिया था, चगेज खाँ का मुकाबला किया। मंगोलों के डर से किसी भी राजा ने उसका साथ नहीं दिया, इसलिए उसने खोकरों का एक गिरोह इकट्ठा किया और दूर-दूर तक लूट-मार का राज्य कायम कर दिया।

तब चंगेज खां ने नासिरुद्दीन के मुलतान और सिन्ध प्रदेश को एक भारी सेना भेजकर उजाड़ डाला; मंगोल जब सिन्ध नदी के उस पार चले गये तो, परिस्थिति का फायदा उठा कर, शमसुद्दीन इल्तुतमिश ने देश पर हमला कर दिया और उसे जीतकर अपने राज्य में मिला लिया।

१२२५. शमसुद्दीन ने बिहार और मालवा को जीत लिया, और—

१२३२. पूरे उत्तरी हिन्दुस्तान में वह बादशाह मान लिया गया; १२३६ में,

---

१ मार्क्स ने श्लोशर के आधार पर जो कालक्रम-सारिका तैयार की थी उसमें ११५५ को चंगेज खाँ के जन्म का वर्ष बताया गया था ('मार्क्स और एंगेल्स अभिलेखागार', खण्ड ५, पृष्ठ २१६)। अब आमतौर से ११६४ को ही उसके जन्म का वर्ष माना जाता है।

जिस समय वह अपनी सत्ता के शिखर पर था, उसकी मृत्यु हो गयी; उसका उत्तराधिकारी—

१२३६—उसका बेटा रुकनुद्दीन बना; उसी वर्ष उसकी बहन ने उसे गद्दी से हटाकर उसके राज्य पर कब्ज़ा कर लिया।

१२३६-१२३९. सुलताना रजिया; अबीसीनिया के एक गुलाम के साथ चल रहे उसके प्रेम-व्यापार की वजह से दरबार के अमीर-उमरा उस पर नाराज हो उठे; भटिण्डा के अमीर, अल्तूनिया ने बगावत कर दी, रजिया को उसने कैद कर लिया, वह उस पर आसक्त हो गयी और उससे शादी कर ली, अलतूनिया ने फिर एक सेना लेकर दिल्ली पर चढ़ाई कर दी; अमीर-उमरा ने उसे हरा दिया और रजिया की हत्या कर दी, रजिया का उत्तराधिकारी उसका भाई—

१२३९-१२४१—मुईज़ुद्दीन बहराम बना, यह भयंकर अत्याचारी था; इसकी भी हत्या कर दी गयी, रुकनुद्दीन का बेटा—

१२४१-१२४६—अलाउद्दीन मासूद उसका उत्तराधिकारी बना; उसकी हत्या कर दी गयी। अब गद्दी शमसुद्दीन इल्तुतमिश के पोते और मुईज़ुद्दीन बहराम के बेटे—

१२४६-१२६६—नासिरुद्दीन महमूद को मिली। गयासुद्दीन बलबन नाम का गुलाम उसका मंत्री था; मुगलों के (मंगोलों के) हमलों को पराजित करने के लिए बलबन ने सीमा प्रदेश के राज्यों का एक जबर्दस्त संघ कायम किया; अनेक छोटे-छोटे हिन्दू राजाओं को उसने हरा दिया।

१२५८. बलबन ने पंजाब पर किये गये मंगोलों के एक अन्य आक्रमण को असफल कर दिया।

१२६६ बादशाह नासिरुद्दीन महमूद की मृत्यु हो गयी; उसके कोई सन्तान नहीं थी; उसकी गद्दी उसके मंत्री—

१२६६-१२८६—गयासुद्दीन बलबन को मिली। उसका दरबार भारत में मुसलमानों का अकेला दरबार था।

१२७९. बंगाल में विद्रोह उठ खड़ा होने की वजह से वह रणक्षेत्र में चला गया; उसकी अनुपस्थिति में दिल्ली के शासक, तुग़रिल ने बगावत कर दी और अपने को उस शहर का बादशाह घोषित कर दिया; लौटने पर, गयास ने उसे हरा दिया और उसकी तथा एक लाख बन्दियों की हत्या कर दी। १२८६ में उसकी मृत्यु हो गयी, उसका उत्तराधिकारी उसका दूसरा बेटा बुगरा खाँ, जो अभी जिन्दा था, नहीं बना (गयास का पहला

बेटा पहले ही मर चुका था), बल्कि बुगरा खाँ का बेटा—
१२८६-१२८८—कैकुबाद बना (बलबन का सबसे बड़ा बेटा मुहम्मद भी कैखुसरो नाम का एक लड़का छोड़ गया था, इसे मुलतान का शासक बना दिया गया) ।

१२८७. [कैकुबाद ने] अपने षड्यन्त्रकारी वजीर, निजामुद्दीन को जहर दे दिया (निजामुद्दीन ने कैखुसरो के साथ मिलकर पहले षड्यंत्र किया था, फिर उसी को मरवा दिया था; कैकुबाद को भी उसने इस बात के लिए राजी कर लिया था कि एक दावत के समय अपने दरबार के तमाम मंगोलों को वह धोखे से मरवा दे) । वजीर के मर जाने पर दरबार में गड़बड़ी फैल गयी । दिल्ली में उस समय (१२८७ में) मुख्य दल खिलजियों के पुराने गजनी वंश का था; १२८८ में इन लोगों ने कैकुबाद को मार डाला और—

१२८८—अपने नेता, जलालुद्दीन खिलजी को दिल्ली की गद्दी पर बैठा दिया ।

(५) खिलजी वंश
१२८८-१३२१

१२८८-१२९५. जलालुद्दीन खिलजी; इसने एक उदार शासन की नींव डाली; एक विद्रोही सरदार, गयासुद्दीन के भतीजे को उसने माफ कर दिया; मंगोलों के एक आक्रमण को विफल कर देने के बाद, उसने तमाम बन्दियों को रिहा कर दिया ।

१२९३. तीन हजार मंगोल आकर उसके साथ शामिल हो गये और दिल्ली में बस गये ।

अपने भतीजे अलाउद्दीन को उसने अवध का शासक बना दिया; उसने दक्षिण पर हमला करने की तैयारी की; इलिचपुर में होता हुआ देवगिरि (जिसे अब दौलताबाद कहा जाता है) अपनी सेना के साथ पहुंच गया, वहाँ जो हिन्दू राजा एकदम शान्तिपूर्वक रहता था उस पर उसने अचानक हमला कर दिया, उसके नगर और कोष को लूट लिया, तथा आस-पास के प्रदेश पर भारी हर्जाना लाद दिया; राजा ने उसके साथ सन्धि कर ली और वह मालवा वापिस चला गया; वहाँ से दिल्ली गया, दिल्ली में जिस समय उसका शाही चचा उसे छाती रहा था उसने उसकी छाती में छुरा भोंक दिया ।

१२९५-१३१७. अलाउद्दीन खिलजी (भयंकर रूप में गू

अपने चाचा की मृत्यु के बाद, इसने उसके बेटों और विधवा स्त्री को मरवा डाला। इसके फलस्वरूप विद्रोह हो गया, विद्रोह का उसने बाग़ियो की स्त्रियों और बच्चो का कत्लेआम करके अन्त किया।

१२९७. उसने **गुजरात** को जीता। थोड़े ही समय बाद एक **मंगोल आक्रमण** [हुआ], **अलाउद्दीन** ने उसे विफल कर दिया।

१२९८[1]. **अलाउद्दीन** शिकार पर गया हुआ था, तभी उसके भतीजे शाहजादा **सुलेमान** ने उसे घायल कर दिया; उसे मरा समझ कर **सुलेमान** वहाँ से चला गया। वह दिल्ली [गया] और वहाँ उसने गद्दी का दावा किया; किन्तु, इसी बीच, **अलाउद्दीन** अच्छा हो गया, अच्छा होकर वह अपनी सेना के सामने आया, वह **पूरेतौर** से उसके साथ हो गयी। सुलेमान और **दो दूसरे भतीजों के सिर उसने कटवा दिये**; इसके परिणाम-स्वरूप जन-विद्रोह हो गया, इसे भयकर निर्दयता के साथ कुचल दिया गया।

१३०३. अलाउद्दीन ने मेवाड़ जाकर चित्तौड़ पर क़ब्ज़ा कर लिया, चित्तौड एक पहाड़ी पर बना हुआ भारत का एक सर्वाधिक प्रसिद्ध किला था, वहाँ एक विद्रोही **राजपूत** का राज्य था; **मंगोल आक्रमण हुआ**।

१३०४. हिन्दुस्तान के अन्दर घुसने की **मंगोलों ने ३ बार** अलग-अलग कोशिशें की; हर बार उन्हे भगा दिया गया; **फ़रिश्ता** के कथनानुसार, ऐसे अवसरो पर **जितने भी मगोल बन्दी पकड़ कर** पड़ाव पर लाये जाते **थे उन सबको** बहुत बुरी तरह मौत के घाट उतार दिया जाता था।

१३०६. देवगिरि के राजा पर अलाउद्दीन ने जो खराज लगाया था उसे देने से उसने इन्कार कर दिया, इसलिए एक हिजड़े और पहले के गुलाम, **मलिक काफ़ूर** के नेतृत्व मे अलाउद्दीन ने उसके खिलाफ एक बडी फौज भेज दी। राजा पराजित हुआ और दिल्ली ले जाया गया, अपना शेष सारा जीवन उसने वही बिताया।

१३०९. मलिक काफ़ूर को दोबारा दक्षिण भेजा गया, इस बार **तेलंगाना**; *वहाँ उसकी विजय हुई, वारंगल के सुदृढ किले पर उसने अधिकार कर लिया।*

१३१०. मलिक काफ़ूर ने **कर्नाटक** तथा **पूरे पूर्वी तट को कन्याकुमारी** तक जीत लिया; बेशुमार दौलत लाद कर वह दिल्ली लौट आया; अपनी विजयो के विस्तार की स्मृति के रूप मे कन्या कुमारी अन्तरीप मे उसने एक मस्जिद बनवाई थी। **तमिल भूमि पर** यह पहला **मुसलमानी आक्रमण**

---

[1] एलफिस्टन के कथनानुसार, १२९९।

था। दिल्ली में जो १५ हजार मुगल रहते थे उन सबकी अलाउद्दीन ने हत्या करवा दी। **मलिक काफ़ूर** ने गद्दी के लिए षड्यंत्र करना शुरू कर दिया; लोग अलाउद्दीन की निर्दयता तथा अत्याचारों से ऊब उठे थे, इसलिए देश भर में जबर्दस्त अव्यवस्था पैदा हो गयी।

१३१६. "अत्याचारी" अलाउद्दीन को गुस्से के कारण मिर्गी का दौरा आया और वह मर गया; काफ़ूर ने गद्दी पर कब्ज़ा करने की कोशिश की; उसकी "हत्या" कर दी गयी; अलाउद्दीन का बेटा—

१३१७-१३२०—**मुबारक खिलजी** गद्दी पर बैठा; उसने अपने शासन का श्रीगणेश अपने तीसरे भाई की आँखें फुड़वाकर और जिन दो सेनानायकों ने गद्दी पर बैठने में उसकी मदद की थी उनकी हत्या करके किया; फिर उसने अपनी पूरी सेना को भंग कर दिया, एक गुलाम—**खुसरो खाँ**—को अपना वज़ीर बनाया, और खुद निकृष्टतम किस्म की ऐय्याशी में लग गया।

१३१९. **खुसरो** ने **मलबार** को फतह कर लिया—

१३२०—में वह दिल्ली लौटा, बादशाह **मुबारक** को उसने मार डाला, और उसके खानदान के तमाम बचे लोगों का कत्ल करके देश को **खिलजियों** से मुक्त कर दिया; फिर उसने सिंहासन पर अधिकार कर लिया; किन्तु—

१३२१—में पंजाब के शासक, **गयासुद्दीन तुग़लक़** के नेतृत्व में एक विशाल सेना आकर दिल्ली के सामने खड़ी हो गयी; दिल्ली को उजाड़ दिया गया, खुसरो को मार दिया गया, और पंजाब का वह भूतपूर्व शासक बादशाह तथा तुग़लक वंश का संस्थापक बन गया; इस वंश ने सौ वर्ष से अधिक तक दिल्ली पर शासन किया। **गयासुद्दीन तुग़लक (भूतपूर्व गुलाम) गयासुद्दीन बलबन** के एक गुलाम का लड़का था; **गयासुद्दीन बलबन नासिरुद्दीन** महमूद का वज़ीर तथा उत्तराधिकारी था।

(६) तुग़लक वंश, १३२१-१४१४

१३२१-१३२५. **गयासुद्दीन तुग़लक़ प्रथम**; इसका शासन अत्यन्त उदार था।

१३२४. अपने बेटे **जूना खाँ** पर शासन का भार छोड़कर, उसने बंगाल पर चढ़ाई कर दी। वापिस आने पर—

१३२५. में, खुशियाँ मनाते समय, एक मण्डप के गिर जाने से उसकी मृत्यु हो गयी; उसका बेटा **जूनाखाँ** उसका वारिस बना, उसने अपना नाम—

१३२५-१३५१—**मुहम्मद तुग़लक** रखा; अपने समय का [illegible] था। उसने खुद अपनी बड़ी-बड़ी योजनाओं से अपने को बर्बाद कर लिया।

उसका पहला काम यह था कि उसने मगोलो को मिला लिया और उनको इस हद तक अपना दोस्त बना लिया कि उसके पूरे शासनकाल मे उन्होंने एक भी हमला नही किया। फिर उसने **दक्षिण को अपने अधीन किया।** इसके बाद विश्व साम्राज्य कायम करने की उसकी योजनायें [आयी]। [उसने] एक इतनी विशाल **"फारस की सेना"** (फ़ारस को फतह करने के लिए) तैयार की कि उसे देने के लिए उसके पास पैसा नही रह गया; तब उसने **चीन** को अधीन करने की तजवीज़ रखी और एक लाख सैनिको को भेज दिया कि हिमालय के अन्दर से चीन जाने का कोई रास्ता वे ढूंढ निकाले, **तराई**[1] के जगलो में उनमे से लगभग हर आदमी मर गया। उसका ख़ज़ाना चूकि खाली हो चुका था, इसलिए **जनता के ऊपर** *उसने अत्यन्त* **विनाशकारी कर** *लादे;* **ये कर इतने भारी थे** *कि गरीब* लोग घर छोड़कर जगलो मे भाग गये; उसने इन लोगो के खिलाफ एक **फौजी घेरा** डलवा दिया और फिर तमाम भगोडो को पकडवा कर उसने एक नर-सहार रचा जिसमे उसने खुद भाग लिया, जैसे शिकार मे जानवरों को मारा जाता है वैसे ही उसने उन सबको मरवा डाला। फलस्वरूप, **फ़सल बिल्कुल मारी गयी और एक भयंकर अकाल पड़ा।** चारो तरफ विद्रोह उठ खडे हुए, **मालवा और पंजाब** के विद्रोह तो आसानी से कुचल दिये गये, किन्तु—

१३४०—**बंगाल** का विद्रोह सफल हो गया। **कारोमंडल तट** (कृष्णा नदी से कन्या कुमारी तक के पूर्वी तट) ने विद्रोह कर दिया और स्वाधीन हो गया। **तेलंगाना और कर्नाटक** के विद्रोह भी सफल हुए। **अफ़ग़ानों ने पंजाब को लूटमार कर उजाड़ दिया,** गुजरात ने बगावत कर दी, और अकाल पूरे जोर पर था। बादशाह ने गुजरात पर [चढाई कर दी], पूरे प्रान्त को लूटमार कर वीरान कर दिया, और फिर देश मे तेजी से इधर-उधर भागता हुआ बारी-बारी से हर विद्रोह को कुचलने की कोशिश करने लगा; वह इसी काम मे लगा हुआ था कि—

१३५१—मे, **सिन्ध के ठट्टा** नामक स्थान में बुख़ार से उसकी मृत्यु हो गयी। *(अपने भारत के* **इतिहास** *मे एल्फिंस्टन लिखता है कि,* **"पूर्व में किसी बुरे बादशाह को ख़त्म कर देने को आमतौर से इतना कम बुरा समझा जाता है कि ऐसा बहुत ही कम होता है कि एक आदमी का प्रशासन इतनी**

---

[1] पहाड़ के नीचे का घने जगल वाला इलाक़ा।

जबर्दस्त बर्बादी कर सके जितनी कि मुहम्मद तुग़लक ने की थी।") उसके बाद उसका भतीजा—

१३५१-१३८८—फ़ीरोज़ तुग़लक गद्दी पर बैठा; बंगाल को फिर से अपने राज्य में मिलाने की असफल कोशिश करने के बाद, उसने उस प्रान्त की तथा दक्षिण की स्वाधीनता स्वीकार कर ली; उसका शासन महत्वहीन था जिसमें छोटे-छोटे विद्रोह और छोटी-छोटी लड़ाइयाँ होती रही थीं।

१३८५. बहुत बूढ़ा हो जाने पर, उसने एक वज़ीर नियुक्त किया।

१३८६. उसने अपने बेटे नासिरुद्दीन को अपने स्थान पर बादशाह बना दिया; लेकिन भूतपूर्व बादशाह के भतीजों—

१३८७—ने नासिर को दिल्ली से भगा दिया, उन्होंने घोषणा की कि फ़ीरोज़ ने अपनी गद्दी अपने पोते ग़यासुद्दीन को दी थी; ९० वर्ष की उम्र में, १३८८ में फ़ीरोज़ की मृत्यु हो गयी।

१३८८-१३८९. ग़यासुद्दीन तुग़लक द्वितीय; जिन चचेरे भाइयों ने उसे गद्दी पर बैठाया था उनसे उसने तुरन्त झगड़ा कर लिया, उन्होंने जल्दी ही उसे गद्दी से हटा दिया; गद्दी उसके भाई—

१३८९-१३९०—अबूबकर तुग़लक को मिली; उसके चचा नासिर ने एक बड़ी सेना लेकर दिल्ली पर चढ़ाई कर दी और उसे क़ैद कर लिया।

१३९०-१३९४. चार साल के शासन के बाद नासिरुद्दीन तुग़लक की मृत्यु हो गयी; उसके सबसे बड़े बेटे हुमायूँ ने अपने ४५ दिन के ही शासन में शराबख़ोरी करके अपने को ख़त्म कर लिया; उसके स्थान पर उसका भाई—

१३९४-१४१४—महमूद तुग़लक गद्दी पर बैठा। विद्रोह, झगड़े, लड़ाइयाँ। मालवा, गुजरात और ख़ानदेश ने फ़ौरन ही अपने को स्वतंत्र कर लिया। यहाँ तक कि दिल्ली में भी विभिन्न दलों के बीच बराबर झगड़े और गड़बड़ियाँ होती रहती थीं; [तभी]—

१३९८— में तैमूर (तैमूर लंग) का पहला हमला [हुआ]। (यह हमला उसने चंगेज़ ख़ाँ के लगभग पूरे साम्राज्य पर अधिकार कर लेने और उसे अपने अधीन कर लेने के बाद किया था; फिर उसने फ़ारस, आमू पार के प्रदेश, तातारी प्रदेश और साइबेरिया पर चढ़ाई करके उन्हें अपने क़ब्ज़े में ले लिया)। तैमूर [भारत में] काबुल के रास्ते घुसा था; उसी समय उसके पोते पीर मुहम्मद ने मुल्तान पर चढ़ाई कर दी। सतलज के किनारे दोनों सेनाएँ मिल गयीं और दिल्ली की ओर बढ़ने लगीं, रास्ते में सारे इलाके को वे

वीरान बनाती गयी । महमूद तुग़लक गुजरात भाग गया; इसी बीच दिल्ली को लूट कर जला दिया गया और उसके बाशिन्दों की मौत के घाट उतार दिया गया। फिर मंगोलों ने मेरठ पर कब्जा कर लिया और—

१३९९—मे, काबुल के रास्ते से वे आमू पार के प्रदेश की ओर लौट गये। साथ में उनके लूट का सारा माल था। महमूद फिर दिल्ली वापस आया, १४१४ मे वहीं उसकी मृत्यु हो गयी। तैमूर लंग खिज़्र खाँ को शासक बना कर चला गया, खिज़्र खाँ ने सैय्यद, यानी पैगम्बर के असली वंशज के नाम से अपने को बादशाह घोषित कर दिया। सीद अथवा सीदी सेन्योर के अरबी पर्याय है[1]; यह सिद (Cid) की ही तरह है; यह एक सम्मानजनक पदवी है जिसे उन सब लोगों ने धारण किया था जो अपने को मुहम्मद का वशज कहते थे; il est porte aussi par tous les *Ismae liens.*[2]

(७) सैय्यदों का शासन, १४१४-१४५०

१४१४-१४२१. सैय्यद खिज़्र खां; शहर और आस-पास के एक छोटे-से इलाके को छोड़ कर दिल्ली के राज्य का कुछ भी शेष नहीं रह गया था, अला-उद्दीन खिलजी द्वारा विजित तमाम इलाके हाथ से जा चुके थे। खिज़्र खां तैमूर के केवल एक प्रतिनिधि के रूप में ही काम करता था, वह वास्तव मे एक बहुत छोटा शासक था। उसने रुहेलखण्ड और ग्वालियर पर कर लगाया था; उसके स्थान पर उसके बेटे—

१४२१-१४३६—सैय्यद मुबारक ने शासन का भार सभाला। पजाब मे इम समय बहुत गडबडी फैल रही थी, उसने कोई परवाह नही की। १४३६ मे उसके वज़ीर ने उसकी हत्या कर दी; उसके स्थान पर उसका बेटा—

१४३६-१४४४—सैय्यद मुहम्मद गद्दी पर बैठा; मालवा के राजा ने दिल्ली प्रदेश पर आक्रमण कर दिया; पजाब के शासक बहलोल खां लोदी की मदद से सैय्यद ने उसे मार भगाया; उसका वारिस उसका बेटा—

१४४४-१४५०—सैय्यद अलाउद्दीन बना; उसने बदायूं में, गंगा के उस पार,

---

१ 'अरबी शब्द' जिसका अर्थ प्रभु है।

२ इस पदवी को तमाम 'इस्माईली' लोग भी धारण करते हैं।

अपना महल बनाया; पंजाब के गवर्नर, बहलोल खाँ लोदी ने दिल्ली पर कब्जा कर लिया।

(८) लोदी वंश, १४५०-१५२६

१४५०-१४८८. बहलोल लोदी; उसने पंजाब और दिल्ली को मिला कर एक कर दिया। १४५२ में, जौनपुर के राजा ने दिल्ली को घेर लिया; फलस्वरूप युद्ध छिड़ गया जो २६ वर्षों तक चलता रहा (यह बात महत्वपूर्ण है; यह जाहिर करती है कि देशी राजे अब इतने शक्तिशाली हो गये थे कि पुराने मुस्लिम शासन का [विरोध कर सकें])। युद्ध का अन्त राजा की पूर्ण पराजय के रूप में हुआ; जौनपुर को दिल्ली में मिला लिया गया। बहलोल ने और भी जीतें हासिल की; जब वह मरा तो उसका र.ज्य यमुना से लेकर हिमालय तक फैल गया था, पूर्व में वह बनारस तक फैला हुआ था, पश्चिम में बुन्देलखन्ड तक। उसके बाद उसका बेटा—

१४८८-१५०६—सिकन्दर लोदी गद्दी पर बैठा; उसने बिहार को फिर अधिकार में ले लिया; वह एक योग्य और शान्तिप्रेमी शासक था; उसके बाद उसका बेटा—

१५०६-१५२६—इब्राहीम लोदी गद्दी पर बैठा; यह खूंख्वार आदमी था; अपने दरबार के तमाम सरदारों की उसने हत्या कर दी; पंजाब के गवर्नर को भी उसने मारने की कोशिश की; उसने अपनी मदद के लिए बाबर के नेतृत्व में मुगलों को बुला लिया।

१५२४. भारत पर बाबर का आक्रमण; बाबर ने पंजाब के गवर्नर को, जिसने उसे बुलाया था, कैद कर लिया; लाहौर पर कब्जा कर लिया; वहाँ दिल्ली के इब्राहीम का भाई, अलाउद्दीन उससे आकर मिल गया; मुगल सेना का प्रधान बनाकर उसे दिल्ली को फतह करने के लिये भेज दिया गया। इब्राहीम ने उसके परखचे उड़ा दिये; तब बाबर स्वयम् वहाँ आया; पानीपत (दिल्ली के उत्तर में, यमुना के समीप) में दोनों सेनाओं का मुकाबला हुआ।

१५२६. पानीपत को पहली लड़ाई। इब्राहीम पराजित हुआ, वह स्वयम् और ४० हजार हिन्दू रणक्षेत्र में खेत रहे। बाबर ने दिल्ली और आगरा पर अधिकार कर लिया।

... ...

रोबर्ट सोवेल (मद्रास सिविल सर्विस) ने भारत के विश्लेषणात्मक इतिहास (१८७०) में लिखा है :

एशिया में तीन बड़ी नस्लें हैं: (१) तुर्क (तुर्कमान), ये बुखारा के आस-पास तथा पश्चिम की ओर कैस्पियन सागर तक फैले हुए हैं; (२) तातार, ये साइबेरिया तथा रूस के एक भाग मे बसे हुये है, इनके मुख्य कबीले अस्त्राखान तथा कज़ान मे है और तुर्की क़बीलो के उत्तर के संपूर्ण प्रदेश मे फैले हुए है; (३) मुगल अथवा मंगोल, ये मंगोलिया, तिब्बत तथा मंचूरिया में बसे है; ये सब गड़रियों के क़बीले हैं। पश्चिमी मुगल अथवा काल्मुक, और पूर्वी मुग़ल अनेक कबीलो, अथवा उलूज मे बंटे हुए है। ये उलूज़, अथवा फ़िरक़े आपसी दोस्ती करके अक्सर एक नेता के नेतृत्व मे एक हो जाया करते है।

११६४. चंगेज़ ख़ां का जन्म; वह एक महत्वहीन फ़िरके का मुखिया था, खितान के तातारो को वह खराज चुकाता था; बाद मे, उसके हाथो पिटने के बाद, तातार भी उसकी फौजो मे शामिल हो गये थे, फिर उसकी फौजो की सख्या मगोलो की फौजो से बढ गयी थी। इस फ़ौज के साथ चंगेज़ ख़ां ने पूर्वी मगोलिया और उत्तरी चीन को फतह किया, फिर आमू पार के प्रदेश तथा खुरासान को जीत लिया; उसने तुर्की प्रदेश, अर्थात्, बुख़ारा, ख्वारिज्म, फ़ारस को फतह कर लिया, और भारत पर आक्रमण कर दिया। उस समय उसका साम्राज्य कैस्पियन सागर से पीकिंग तक फैला हुआ था, दक्षिण की तरफ हिन्द महासागर तथा हिमालय तक उसका विस्तार था, अस्त्राखान तथा कजान उसके साम्राज्य की पश्चिमी सीमाओ पर थे। उसकी मृत्यु के बाद उसका साम्राज्य चार भागों मे बट गया था किप्चक, ईरान, चग़तई, तथा चीन समेत मंगोलिया; पहले के तीन भागों पर खान लोग शासन करते थे, अन्तिम भाग चूंकि मूल शासक देश था इसलिए उसके शासक को सर्वोच्च, अथवा बड़ा ख़ान माना जाता था।

१३३६. चग़तई मे केश नामक स्थान पर तैमूर का जन्म हुआ, यह स्थान समरकन्द से अधिक दूर नही था; वह—

१३६०. में, केश के शहज़ादे के तथा बर्लास कबीले के प्रधान के रूप मे अपने चाचा सैफुद्दीन का उत्तराधिकारी बना; बर्लास कबीला चग़तई के खान, तुग़लक तैमूर के आधिपत्य मे था।

१३७०. तैमूर लंग ने खान के राज्य, आदि पर अधिकार कर लिया। १४०५ मे उसकी मृत्यु हो गयी। उसकी मृत्यु के बाद उसका साम्राज्य उसके बेटो मे बँट गया; उसका सबसे बड़ा भाग पीर मुहम्मद को मिला जो तैमूर के सबसे बड़े लड़के का दूसरा बेटा था।

इसी लेखक (सोवेल) के कथनानुसार, तुर्कों के मुख्य परिवारो मे थे आटोमान (१४ वी शताब्दी मे ये लोग पश्चिम की ओर चले गये थे, वहाँ फ्राइजिया मे उन्होंने अपनी सत्ता कायम की थी, वहाँ से उन्हें कभी नही हटाया जा सका), सेलजुक (मुख्यतया फ़ारस सीरिया तथा इकोनियम मे थे), तथा उज्बेक (इनका वंश १३०५ मे पैदा हुआ था), ये लोग किप्चक के तुर्क थे, उनका नाम उज्बेक उनके खान के नाम पर पड़ा था। यह ख़ान १३०५ मे पैदा हुआ था। बाबर के जमाने मे ये बहुत शक्तिशाली थे। (१)

१५२६. बाबर, तैमूर (तैमूर लंग) का छठा वंशज था; वह फ़रग़ाना वर्तमान कोकनद का एक प्रान्त) के बादशाह, उमरशेख मिर्जा का बेटा था। वह अकेला मुगल सम्राट था जिसने स्वय अपनी जीवनी लिखी थी, उसका अनुवाद लेडेन और अर्स्किन ने किया था (१८२६) जन्म १४८३, मृत्यु १५३० । ... ...

बाबर के आगमन के समय भारत के राज्य

१३५१—मुहम्मद तुगलक के दिल्ली राज्य के विध्वंस के बाद अनेक नये राज्य कायम हो गये थे। १३९८ के करीब (तैमूर के आक्रमण के समय),

१ रोबर्ट सीवेल की पुस्तक में कई गलतियां पायी जाती हैं। एक तो वह कहता है कि साइबेरिया के तातार तथा मंगोल दो अलग-अलग कौमों के लोग हैं। दूसरे, चगेज खाँ के जन्म की तिथि के सम्बन्ध मे देखिए पृष्ठ १६। तीसरे, तैमूर की मृत्यु के बाद, सबसे बडा राज्य उसके बेटे शाहरुख को प्राप्त हुआ था, पीर मुहम्मद को नही, जैसा कि सीवेल कहता है। शाहरुख खुरासान, सेयिस्तान तथा मजन्दरान का शासक था। चौथे, आटोमान तुर्कों के मध्य एशिया से एशिया माइनर जाने की बात को अनेक इतिहासकार सही नहीं मानते। १४वीं शताब्दी मे, आटोमान लोगों ने बरसा के आसपास के इलाके मे अपनी सत्ता स्थापित कर ली थी, आसपास के प्रदेश मे अपनी सत्ता का विस्तार यहीं से उन्होंने किया था। पांचवें, उज्बेकों की बात करते समय, सीवेल उज्बेक खाँ का उल्लेख करता है जो सुनहरी सेनाओं* (Golden Horde—किप्चकों) का १३१३ से १३४० तक प्रधान था। उज्बेक नाम को यूरोपी कबीलों के एक भाग ने उसी के आधार पर अपना लिया था, इन कबीलों ने उसी के कहने पर इस्लाम धर्म को स्वीकार कर लिया था।

* किप्चकों का नाम। ये तुर्क थे। मध्य और दक्षिण रूस मे इनके साम्राज्य की स्थापना तेरहवी शताब्दी में बातू ने की थी।—अनु०

दिल्ली के इर्द-गिर्द के कुछ मील के स्थानों को छोड़कर, पूरा भारत मुसलमानो के आधिपत्य से मुक्त था; मुख्य भारतीय राज्य निम्न थे :

(१) दक्षिण के बहमनी राजे; इस राज्य की स्थापना गंगू बहमनी नामक एक गरीब आदमी ने की थी; गुलबर्गा मे उसने अपना स्वाधीन राज्य कायम कर लिया था।

१४२१. बहमनी राजा ने तेलगांना [के राजा] को वारंगल से भगा दिया और हिन्दू बाद मे राज महेन्द्री, मछली पट्टम् तथा कंजीवरम् पर अधिकार कर लिया।

(तेलगाना मे उत्तरी सरकार, हैदराबाद, बालाघाट, कर्नाटक प्रान्त शामिल थे। गजम् और पुलीकट के बीच तिलगाना[१] भाषा अब भी बोली जाती है)। इसके बाद ही, शिया और सुन्नी दो धार्मिक सम्प्रदायो [की शत्रुता के कारण] आन्तरिक उथल-पुथल पैदा हो गयी; [शिया लोग] यूसुफ़ आदिल के नेतृत्व मे बीजापुर चले गये और वहाँ पर उन्होंने एक राज्य की स्थापना की, अपने नेता को उन्होने बादशाह आदिलशाह की पदवी दी।

(२) बीजापुर-अहमदनगर।

१४८९-१५७९—[२] राजवंश का शासनकाल। मराठो का उदय इसी छोटे-से राज्य हिन्दू मे हुआ था, एक प्रसिद्ध ब्राह्मण अपने शिष्यो को लेकर यहाँ से चला गया था और उसने अहमदनगर के राज्य की स्थापना की थी।

(३) गोलकुण्डा[३]-बरार-बीदर। ये तीनो छोटे-छोटे राज्य भी बहुत-कुछ इसी तरह पैदा हुए थे और १६ वीं शताब्दी के अन्त तक बने रहे थे।

(४) गुजरात (१३५१-१३८८)। फ़ीरोज तुगलक के शासनकाल में एक राजपूत, मुजफ्फरशाह को इसका गवर्नर बना दिया गया था; उसने उसे एक स्वतंत्र राज्य बना लिया। बाद मे, सख्त लड़ाई के बाद उसके हिन्दू उत्तराधिकारियो ने मालवा को अपने राज्य मे मिला लिया (१५३१)। यह राज्य १३९६ से १५६१ तक कायम रहा था।[४]

---

१ तिलगा अथवा तेलगू भाषा।

२ मार्क्स ने यहा पर उस काल को दिया है जिसमे राजवश के अन्तिम प्रतिनिधि का शासन शुरू हुआ था। उसका शासन १५९५ मे खत्म हो गया था।

३ १६वीं शताब्दी के अन्तकाल से ही गोलकुण्डा प्राय बीजापुर पर निर्भर रहने लगा था, क्योंकि उसका अपना राजनीतिक महत्व अधिकाशतया समाप्त हो गया था। मुगल साम्राज्य के अधीन वह १६३६ मे गया था; १६८७ मे, अन्त मे, उसे मुगल साम्राज्य मे मिला लिया गया था।

४ मार्क्स यहाँ वह वर्ष बता रहे हैं जिसमे राजवश के अन्तिम प्रतिनिधि के शासन का आरम्भ हुआ था। उसके शासन का १५७२ मे अन्त हो गया था।

(५) गुजरात के साथ-साथ मालवा भी स्वतन्त्र हो गया, १५३१ तक उस पर ग़ोर वश का शासन था; १५३१ मे गुजरात के बहादुरशाह ने उसे स्थायी रूप से अपने राज्य मे मिला लिया।

(६) खानदेश; १३९९ मे स्वतन्त्र राज्य बन गया; १५९९ मे अकबर ने उसे फिर दिल्ली के साम्राज्य मे मिला लिया।

हिन्दू

(७) राजपूत राज्य। मध्य भारत मे कई राजपूत राज्य थे; इनकी स्थापना आमतौर से मुक्त पहाडी कबीलो ने की थी; ये बहुत बढिया सैनिक थे; इनमे से अधिक महत्वपूर्ण राज्यो के नाम थे : चित्तौड़, मारवाड़ (या जोधपुर), बीकानेर, जैसलमेर, जयपुर।

भारत में मुग़ल साम्राज्य

१५२६-१७६१[1]

(२३५ वर्ष कायम रहा)

(१) बाबर का शासन

१५२६-१५३०. बाबर का शासनकाल ।

१५२६. कुछ ही महीनों के अन्दर, बाबर के **सबसे बड़े बेटे हुमायूं** ने इब्राहीम लोदी के पूरे राज्य को अपने अधीन कर लिया ।

१५२७. मेवाड़ के राजा संग्राम ने, जो एक राजपूत था, और जिसने अजमेर **और मालवा** को अपने शासन मे ले लिया था, एक विशाल सेना लेकर दिल्ली पर चढ़ाई कर दी, संग्राम को **मारवाड़ और जयपुर का सामन्ती नेता माना जाता था;** [उसने] आगरा के समीप **बयाना** पर अधिकार कर लिया और बाबर की फौज की एक टुकड़ी को पराजित कर दिया । **सीकरी की लड़ाई** ("भारतीय हेस्टिंग्स"[2]) हुई । बाबर की भारी विजय हुई, उसने भारत मे अपनी सत्ता स्थापित कर ली । (बाद की अपनी लड़ाइयों मे बाबर ने तीरो के साथ-साथ बारूद का भी इस्तेमाल किया;

---

१ तथाकथित 'मुगल साम्राज्य' की स्थापना १५२६ मे बाबर ने की थी, वह १७६१ तक चला था । बाबर अपने को एक "मुगल" ("मगोल का विकृत स्वरूप") कहता था; वह अपने को प्रसिद्ध तैमूरलग का (छठी पीढ़ी का) वशज बताता था । मा की तरफ से वह चङ्गेज खा का वशज था । वास्तव मे, न वह मगोल था और न उसकी सेना; वह फारस से आया था और उसकी सेना तुर्कों, फ़ारसियों तथा अफगानो से मिलकर बनी थी । मुगल साम्राज्य की सरकारी भाषा फारसी थी । १७०७ मे, औरगज़ेब की मृत्यु के बाद, मुगल साम्राज्य का विघटन होने लगा था यद्यपि सारे अधिकारो से वंचित, महान मुगल, अथवा शाहशाह दिल्ली के राजसिंहासन पर १८५७ तक बैठा रहा था ।

२ इस लड़ाई मे मुसलमान मुगल सेनाओ ने हिन्दू फौजो को हरा दिया था और भारत को फतह कर लिया था ।

वह अपने गोलों और तोड़ेदार बन्दूक चलाने वालों तथा अपने तीरंदाजों का जिक्र करता है; वह स्वयम् तीर-कमान का एक अच्छा निशानेबाज था।)

१५२८. चंदेरी (चंदारी; सिंधिया) पर, जिस पर एक राजपूत राजा का राज्य था, भारी नुकसान उठाकर अधिकार किया गया था, उस पर अधिकार करने में पूरी गैरीसन का एक-एक आदमी काम आ गया था। इसी समय अवध में अफगानों ने हुमायू को हरा दिया; उसकी सहायता के लिए बाबर ने चंदेरी से कूच कर दिया, वहाँ पहुंचकर उसने दुश्मन को हरा दिया और दिल्ली लौट गया। इसके बाद ही संग्राम [के बेटे] ने रणथम्भौर के किले को समर्पित कर दिया।

१५२९. यह सुनकर कि महमूद लोदी ने बिहार पर कब्जा कर लिया है, बाबर ने उसके ऊपर चढ़ाई कर दी, उसकी फ़ौजों को उसने भगा दिया और उसके राज्य को अपने साम्राज्य में मिला लिया, इसके बाद उसने घाघरा नदी के घाट पर बंगाल के राजा को, (जिसके अधिकार में उत्तर बिहार था) हरा दिया; अपने अभियान का अन्त उसने अर्ध जंगली अफ़ग़ानों के एक क़बीले को जड़मूल से मिटाकर किया। इन लोगों ने लाहौर पर कब्जा कर लिया था।

२६ दिसम्बर, १५३०. बुख़ार से दिल्ली में बाबर की मृत्यु हो गयी, उसकी इच्छा के अनुसार उसे काबुल में, ख़ुद उसके द्वारा चुने गये एक स्थान पर, दफन किया गया, काबुल के निवासी आज भी उस स्थान पर छुट्टियाँ मनाने जाते हैं। (देखिए बर्नेस)।

(२) हुमायू का पहला और दूसरा शासन-काल, बीच में सूरवंश का शासन,

१५३०–१५५६

१५३०. बाबर चार बेटे छोड़ गया था : हुमायूं, शाहंशाह (जो उसका उत्तराधिकारी बना); कामरान, जो उस वक्त काबुल का गवर्नर था, अपने पिता की मृत्यु के बाद उसने अपने को स्वतन्त्र घोषित कर दिया था; हिन्दाल, मह सम्भल का गवर्नर था; और मिर्ज़ा अस्करी, यह मेवात का गवर्नर और एक बहादुर सिपाही था। हुमायूं का पहला काम जौनपुर (भानपुर) के विद्रोह को कुचलना था; इसके बाद [उसने] गुजरात के ख़िलाफ़ युद्ध छेड़ दिया; गुजरात के राजा, बहादुरशाह ने,

बाबर की मृत्यु की खबर पाकर, मुगलो के खिलाफ लड़ाई छेड़ दी थी। **५ वर्षों के अन्दर,** अर्थात्—

१५३५—तक, **हुमायूं ने गुजरात की सेना** को नष्ट कर दिया; इसके बाद उसने चम्पानेर के किले पर जहाँ **बहादुरशाह** चला गया था, अधिकार कर लिया।

१५३६. उस किले पर जल्दी हो कब्जा हो गया; बहादुर ने ऊपरी तौर मे उसके साथ दोस्ती कर ली।

१५३७. हुमायूं शेर खाँ के साथ लड़ाई मे उलझा हुआ था, क्योकि यह बंगाल पर कब्ज़ा करने की कोशिश कर रहा था; मौका देखकर **बहादुरशाह** ने **गुजरात** पर फिर अधिकार कर लिया और **मालवे पर चढ़ाई कर दी।**

१५३७-१५४०. शेर खाँ के खिलाफ हुमायूं के सैनिक अभियान। शेर खाँ, उर्फ **शेरशाह, दिल्ली के गोर राजाओं का वंशज था।**

१५२७. लोदियो को हराने के बाद, एक अफसर के रूप मे वह **बाबर** की **सेना** मे शामिल हो गया था; अपने काम से उसने इज्जत हासिल की थी; बाबर ने उसे बिहार का एक सेनानायक बना दिया था।

१५२९. महमूद लोदी ने बिहार पर अधिकार कर लिया, और शेर खाँ उससे मिल गया; महमूद की मृत्यु पर वह **बिहार** का मालिक बन गया।

१५३२. जिस समय हुमायू गुजरात मे था, **शेरशाह** ने बगाल की तरफ बढ़ना शुरू कर दिया, इसलिए—

१५३७—मे **हुमायूं** अपनी सेना लेकर उसकी तरफ रवाना हो गया; वहाँ, दोनो तरफ की फौजी चालो के बावजूद—

१५३९—मे, हुमायूं को गगा के किनारे उसके शिविर मे **शेरशाह ने अचानक घेर लिया, उसको बुरी तरह हरा दिया, हुमायूं को भागना पड़ा;** और **शेर खाँ,** उर्फ **शेरशाह** ने बंगाल पर कब्ज़ा कर लिया।

१५४०. हुमायूं ने फिर पहल की और **कन्नौज पर चढ़ाई कर दी;** वह फिर हार गया; भागते समय गगा मे डूबते-डूबते बचा; **शेर खाँ** ने लाहौर तक उसका पीछा किया, हुमायू भाग कर सिंध चला गया, एक-दो बार घेरा डालने की असफल कोशिशें करने के बाद, वह **मारवाड़** (जोधपुर) भाग गया; किन्तु वहाँ के राजा ने उसे वहाँ रहने देने से इन्कार कर दिया, और वह **जैसलमेर के रेगिस्तान** मे भटकता रहा, वहाँ भी उसके और उसके थोडे-से साथियो के पडावों पर बराबर हमले होते रहे; वहीं—

१४ अक्टूबर, १५४२—को, उसके हरम की एक अतीव सुन्दरी **नर्तकी हमीदा**

के गर्भ से प्रसिद्ध अकबर का जन्म हुआ। १८ महीने तक रेगिस्तान में भटकते रहने के बाद, वे सब अमर कोट पहुंचे, वहाँ उनको आदर-सत्कार के साथ रखा गया।

हुमायूं ने एक बार फिर सिंध को फतह करने की असफल कोशिश की; इसके बाद उसे क़ंधार चला जाने दिया गया; वहाँ उसने देखा कि वह प्रान्त उसके भाई मिर्जा अस्करी के अधिकार में था, उसने हुमायूं को मदद देने से इन्कार कर दिया। हुमायूं भागकर हेरात [फ़ारस] चला गया। फारस में उसके साथ एक बन्दी जैसा व्यवहार किया गया; शाह तहमास्प ने उसे सफ़ावी धर्म स्वीकार करने के लिए मजबूर किया। (सफ़ावी, या सूफ़ी बादशाह सन्त दरवेशों के एक परिवार के वंशज थे, ये सन्त दरवेश शिया सम्प्रदाय के मानने वाले थे; उन्होंने आज़ादी हासिल कर ली थी और अपने नाम पर एक नये धर्म की स्थापना की थी, यही फारस का धर्म बन गया था।) इसके बावजूद—

१५४५—में, तहमास्प ने १४,००० घोड़ों से हुमायूं की सहायता की। हुमायूं ने अफ़ग़ानिस्तान पर धावा कर दिया, अपने भाई मिर्जा अस्करी से उसने क़न्धार छीन लिया, अपने अफसरों के विरोध के बावजूद, उसने उसकी (अपने भाई की) जान नहीं ली। फिर उसने काबुल पर क़ब्ज़ा कर लिया। वहाँ पर, बाबर का तीसरा बेटा, हिन्दाल उसके साथ हो गया।

१५४८. कामरान, उसका तीसरा भाई, जिसने (उसके ख़िलाफ़) बग़ावत कर दी थी (अब) उससे मिल गया। (परन्तु उसने फिर विद्रोह किया और १५५१ में उसे कुचल दिया गया, उसने फिर गड़बड़ी की तो १५५३ में उसे क़ैद कर दिया गया और उसकी आँखें निकलवा ली गयीं)।

इस तरह, हुमायूं फिर अपने परिवार का प्रधान बन गया; वह काबुल में ही रहता रहा।

बीच में, १५४०-१५५५ तक, दिल्ली में सूरवंश का राज्य

१५४०-१५४५. दिल्ली में शेरशाह।

१५४०. दिल्ली के राज्य पर (उसने) क़ब्ज़ा कर लिया और अपना नाम बदल कर शेर ख़ाँ की जगह शेरशाह कर लिया; उसने हुमायूं के सारे इलाक़ों पर अधिकार कर लिया।

१५१४. उसने **मालवा** को जीत लिया; **१५४३ में रायसेन** [के किले को], और १५४४ में **कारवाड़** को जीत लिया ।

१५४५. उसने **चित्तौड़** के चारों तरफ घेरा डाल दिया, शहर की तोप के एक गोले से धोखे मे मर गया । उसका उत्तराधिकारी उसका **छोटा बेटा—**

१५४५-१५५३—जलाल खाँ बना; वह **सलीम शाह सूर** के नाम से दिल्ली का शाह बन गया । शेरशाह के **सबसे बड़े बेटे, आदिल** ने अपना हक लेने की कोशिश की, हार गया और वहा से भाग गया । **सलीम शाह सूर के शासन-काल में सार्वजनिक निर्माण के बहुत अच्छे काम** हुए ।

१५५३. सलीम शाह सूर की मृत्यु हो गयी, उसके बडे भाई **आदिल** ने गद्दी पर कब्ज़ा कर लिया ।

१५५३-१५५४ मुहम्मद शाह सूर आदिल; अपने नौजवान भतीजे, सलीम शाह के पुत्र की उसने हत्या करवा दी; ऐशो-इशरत में लग गया, **थोड़े ही समय के बाद** उसी के परिवार के एक व्यक्ति, **इब्राहीम सूर** के नेतृत्व मे विद्रोह उठ खडा हुआ; इब्राहीम सूर ने उसे भगा दिया, और **दिल्ली तथा आगरे** पर अधिकार कर लिया । **पंजाब, बंगाल, और मालवा ने भी फ़ौरन अपनी अधीनता खत्म कर दी** । इन उपद्रवों की ख़बर पाकर—

१५५४ मे, हुमायूं ने एक फौज इकट्ठा की, और अपने राज्य सिंहासन पर अधिकार करने के लिए काबुल से रवाना हो गया ।

जनवरी, १५५५. **हुमायूं** ने काबुल से कूच किया, **पंजाब** पर चढाई कर दी, **लाहौर, दिल्ली,** आगरा पर बिना किसी कठिनाई के उसने कब्जा कर लिया ।

जुलाई १५५५. हुमायूं ने फिर अपनी पुरानी सारी शानो-शौकत हासिल कर ली—

जनवरी, १५५६. संगमरमर के एक चिकने पत्थर पर पैर फिसल कर गिर जाने से **हुमायूं की मृत्यु हो गयी;** उस समय उसका **पुत्र अकबर** (जो १३ वर्ष का हो चुका था) अपने पिता के वज़ीर, **बैराम खाँ** के साथ **पंजाब** में था; बैराम खाँ उसे फौरन दिल्ली ले आया ।

(३) अकबर का शासन, १५५६-१६०५

१५५६. *स्वाभाविक था कि* **शुरू-शुरू में बैराम खाँ** *ही वास्तविक शासक था;* किन्तु जिस समय वह दिल्ली में स्थानीय शासन को ठीक-ठाक करने में

लगा हुआ था, उस समय बदख्शां के बादशाह ने काबुल पर कब्ज़ा कर लिया, और उसी समय शाह आदिल के वज़ीर, हेमू ने भी बगावत का झण्डा ऊँचा कर दिया।

पानीपत की दूसरी लड़ाई। हेमू ने आगरा पर अधिकार कर लिया, बैराम उसका मुकाबला करने के लिए आगे बढ़ा, दोनों सेनाओं की पानीपत में मुठभेड़ हुई; हेमू की पराजय हुई, बैराम ने उसकी स्वयं अपने हाथों से हत्या की; इस प्रकार शेर खाँ के वंश का अन्त कर दिया गया।

बैराम जब दिल्ली लौटा तो उसको अपनी शक्ति का बहुत गुमान हो गया था; उसने अनेक लोगों को, जो उसका विरोध करते थे, मरवा दिया; इनमें खास तौर से अकबर के दोस्त भी थे; इसलिए—

१५६०—में अकबर ने शासन की बागडोर स्वयं अपने हाथों में ले ली; बैराम राजपूताना से नगर चला गया, और ज्योंही अकबर ने उससे उसके अधिकार छीनने की घोषणा की त्यों ही उसने बगावत कर दी। अकबर ने उसके खिलाफ़ एक सेना रवाना की, उसे बुरी तरह हरा दिया गया, फिर माफ़ कर दिया गया, किन्तु एक कुलीन वंशी सरदार (के बेटे) ने उसको मार डाला क्योंकि उसने धोखा देकर उसके पिता की हत्या कर दी थी। अकबर १८ वर्ष का हो गया था, उसका राज्य दिल्ली और आगरा के आस-पास के इलाक़े तथा पंजाब तक सीमित था।

गद्दी पर बैठने के लगभग तुरन्त बाद उसने अजमेर, ग्वालियर, और लखनऊ को फ़तह कर लिया; इसके बाद उसने—

१५६१—में मालवा को वहाँ के बागी गवर्नर, अब्दुल्ला खाँ से पुनः जीत लिया और उसे देश निकाला दे दिया। वह खान एक उज़्बेक था, इसलिए—

१५६४—में, उसके देश निकाले के परिणाम स्वरूप, उज़्बेकी फिरके ने विद्रोह कर दिया; अकबर ने स्वयं जाकर १५६७ में इस विद्रोह को कुचला।

१५६६. अकबर के भाई, हकीम ने काबुल पर कब्ज़ा कर लिया; एक लम्बे अर्से तक वही उसका स्वामी बना रहा।

१५६८-१५७०. राजपूत राज्य।

१५६८. अकबर ने चित्तौड़ पर घेरा डाल दिया, चित्तौड़ के राजा ने बड़ी बहादुरी से उसका मुकाबला किया, फिर एक तीर लगने से उसकी मृत्यु हो गयी, चित्तौड़गढ़ का पतन हो गया। बचे-खुचे राजपूत [सरदार] उदयपुर [भाग गये], वहाँ उनके प्रधान सेनानायक के वंशजों ने एक नये राज्य की स्थापना की और वह उनका राज्य आज तक [क़ायम] है। इसके बाद

हन्नू

जयपुर और मारवाड़ के साथ शान्तिमय सम्बन्ध कायम रखने के लिए **अकबर ने दो राजपूत रानियों से विवाह किया।**

१५७०.[1] **अकबर ने रणथम्भोर** तथा **कालिंजर** के दो और राजपूत [गढ़ों] को अपने राज्य मे मिला लिया।

१५७२-१५७३. गुजरात। वहाँ उपद्रव (उपद्रवकारियो के तीन दल थे : इनमे सबसे मजबूत **मिर्जाओ**[2] का, तैंमूर लंग के वंशजो का था; इसी रिश्ते से वे अकबर के सम्बन्धी थे, १५६६ मे उन्होंने सम्भल मे विद्रोह कर दिया था, वे हरा दिये गये थे और भागकर गुजरात चले आये थे)। गवर्नर एतमाद खाँ ने जोर दिया कि अकबर स्वय वहाँ आये।

१५७३. अकबर गुजरात [गया], उसे उसने **सीधे शाही शासन के अन्तर्गत ले लिया;** मिर्जा लोगों को उसने मार भगाया, और फिर **आगरा लौट** आया। मिर्जा लोगो ने फिर विद्रोह किया, अकबर ने उन्हे अन्तिम रूप से कुचल दिया।

१५७५. बंगाल। वहाँ शाहजादा दाऊद ने अधीन रहने से इन्कार कर दिया (कर, आदि देना बन्द कर दिया)। अकबर बंगाल [गया], दाऊद को उसने उडीसा भगा दिया; ज्योंही वहाँ से वह लौटा त्योंही दाऊद ने फिर बंगाल पर चढ़ाई कर दी, अपनी अमलदारी को पुन उसने हासिल कर लिया; जमकर लडाई हुई; **अकबर** ने उसे पराजित किया; दाऊद लडता हुआ मारा गया।

१५७५-१५९२. बिहार; १५३० से शेर खाँ के वंशज उस पर शासन करते आये थे, १५७५ मे [अकबर ने] उसको फिर अपने राज्य मे मिला लिया।— थोडे ही समय बाद, बिहार और बंगाल की शाही फौजों में विद्रोह उठ खडा हुआ, उसे पूरे तौर से तीन साल तक न दबाया जा सका। इसलिए, बिहार से निकाले गये **अफ़ग़ानों ने उड़ीसा के सूबे पर कब्जा** कर लिया और कुछ समय तक उस पर शासन करते रहे।

१५९२. अन्त में, उड़ीसा में अफ़ग़ानो को अकबर के एक सेनापति ने कुचल दिया।

१५८२. काबुल से **शाहजादा हकीम ने पंजाब** पर चढ़ाई कर दी; अकबर ने

---

१ बर्गेस के अनुसार, १५६१, देखिए : "आधुनिक भारत का कालक्रम" एडिनबर्ग, १९१३।

२ मिर्जा (शाहजादे) मुहम्मद सुलतान के वंशज और सम्बन्धी। मिर्जा बाबर के साथ भारत आये थे। उनके नाम उलुग मिर्जा, शाह मिर्जा और इब्राहीम हुसेन मिर्जा थे। उन्होंने दिल्ली के सिंहासन पर अधिकार करने की कोशिश की थी।

उसे मार भगाया, और काबुल पर अपना अधिकार कर लिया; अपने भाई हकीम को उसने माफी दे दी और अपने, यानी दिल्ली के शाहशाह के अधीन उसे काबुल के सूबे का गवर्नर-जनरल बना दिया।

१५८२-१५८५. शान्ति, अकबर ने साम्राज्य जमा लिया। धार्मिक मामलों की तरफ वह उदासीन था, इसलिए सहिष्णु था, उसके मुख्य धार्मिक तथा साहित्यिक परामर्शदाता फैज़ी और अबुलफ़ज़ल थे। फैज़ी ने प्राचीन संस्कृत काव्यों का अनुवाद किया; इनमें रामायण और महाभारत भी थे (बाद में, गोआ से अकबर द्वारा एक रोमन-कैथलिक पुर्तगाली पादड़ी के ले आये जाने के पश्चात्, फैज़ी ने ईसाई धर्म-प्रचारकों की रचनाओं का भी अनुवाद किया था)। हिन्दुओं के प्रति वह खास तौर से उदार था; अकबर सिर्फ सती प्रथा (पति की चिता पर विधवाओं को जला देने की प्रथा), आदि का अन्त करने पर ज़ोर देता था। उसने जज़िया, अर्थात् प्रति व्यक्ति पर लगाये जाने वाले उस कर का अन्त कर दिया जिसे प्रत्येक हिन्दू को मुसलमान सरकार को ज़बर्दस्ती चुकाना पड़ता था।

अकबर की राजस्व (मालगुज़ारी—अनु०) व्यवस्था (इसकी रचना उसके वित्त मंत्री, राजा टोडर मल ने की थी); काश्तकारों से लगान वसूल करने के लिए—

(१) पहले पैमाइश का एक एकविध मान स्थापित किया गया और फिर पैमाइश की एक निश्चित व्यवस्था कायम कर दी गयी।

(२) हर अलग-अलग बीघे की पैदावार का पता लगाने के लिए और उसके आधार पर यह निश्चित करने के लिए कि सरकार को उसे उसका कितना भाग देना चाहिये, ज़मीन को, उर्वरता की भिन्न-भिन्न मात्राओं के अनुसार, तीन अलग-अलग श्रेणियों में बांट दिया गया। फिर, प्रत्येक बीघा की औसत उपज उसकी श्रेणी के आधार पर निश्चित की गयी और पैदावार की इस मात्रा के १-तिहाई भाग को बादशाह का अंश निर्धारित किया गया।

(३) रुपये में पैदावार की इस मात्रा की क्या कीमत होगी इसे तै करने के लिए पूरे देश के पैमाने पर १९ साल की कीमतों के नियमित रिकार्ड तैयार किये गये थे; फिर उनका औसत निकालकर, नक़दी के रूप में उसका मूल्य लिया जाता था।

छोटे अधिकारियों की ज्यादतियों को सख्ती से ख़त्म कर दिया गया मालगुज़ारी की मात्रा को घटा दिया गया; किन्तु वसूली के ख़र्चे को

कर दिये गये; इससे असली आमदनी की मात्रा उतनी ही बनी रही। ठेके पर उठाकर मालगुजारी वसूलने की प्रथा को अकबर ने समाप्त कर दिया, इस प्रथा की वजह से बहुत जुल्म और लूट-खसोट होती थी।

साम्राज्य को १५ सूबों में बाँट दिया गया; हर सूबे के मुख्य अधिकारी को वाइसराय (सिपहसालार और बाद में सूबेदार—अनु०) कहा जाता था।

न्याय व्यवस्था : क़ाज़ी कानून बताता, पूरी तहकीकात के बाद मुकदमों की कैफियत पेश करता, मीर आदिल (प्रधान न्यायाधीश) बादशाह की मर्ज़ी का नुमाइन्दा होता, वह मुक़दमे के निष्कर्ष को सुनता और सजा देता। अकबर ने सज़ाओं की संहिता में सुधार किया, उसकी स्थापना आंशिक रूप से मुसलमानी रीति-रिवाजों के आधार पर और आंशिक रूप से मनु द्वारा निर्धारित नियमों के आधार पर उसने की।

सेना : सेना में तनखा देने की व्यवस्था में जबर्दस्त गड़बड़ी थी; शाही खज़ाने से नियमित रूप से सैनिकों को तनखा देने की व्यवस्था कायम करके अकबर ने कुचालों को रोक दिया, प्रत्येक रेजीमेन्ट में भर्ती किये जाने वाले तमाम सैनिकों की सूची उसने रखवानी शुरू कर दी।

दिल्ली को उसने उस समय की दुनिया का सबसे बड़ा और सबसे खूबसूरत शहर बना दिया।

१५८५-१५८७ कश्मीर; १५८५ में, उज़्बेकों के आक्रमण के डर से काबुल में उपद्रव शुरू हो गये, अकबर ने उन्हें जबर्दस्त शक्ति प्रदर्शन के द्वारा कुचल दिया।

१५८६. कश्मीर के आक्रमण में असफल हुआ; १५८७ में वह उसमें सफल हो गया और उसने कश्मीर को अपने साम्राज्य में मिला लिया।

१५८७. पेशावर तथा आस-पास के उत्तर-पश्चिमी ज़िले। देश के इस भाग पर एक शक्तिशाली अफ़गानी कबीले, युसुफ़ज़ाइयों का अधिकार था; इस कबीले का सम्बन्ध कट्टर रौशनी सम्प्रदाय के साथ था; इन लोगों ने काबुल को इतना हलाकान किया कि अकबर ने उनसे लड़ने के लिए दो डिवीज़न भेजे—एक डिवीज़न के नेता राजा बीरबल थे और दूसरे के ज़ैन खाँ। दोनों ही डिवीज़न करीब करीब काट डाले गये; शाही सेना के बचे खुचे जो लोग थे वे अटक की तरफ भाग गये। अकबर ने वहाँ एक और सेना भेजी और इन अफ़गानों को पहाड़ों में भगा दिया; यही एकमात्र विजय थी जो उनके खिलाफ लड़ाई में वह प्राप्त कर सका था।

१५९१. सिन्ध : किन्हीं आन्तरिक झगड़ों का बहाना बना कर अकबर ने उस पर हमला कर दिया और उसे अपने साम्राज्य में मिला लिया।

१५९४. हुमायूं की मृत्यु पर कंधार को पारसियों ने फिर अपने अधिकार में ले लिया था, [अकबर ने] उसे फिर लड़कर छीन लिया।

इस प्रकार, १५९४ में, पूरा उत्तरी भारत मुगलों के शासन में आ गया।

दक्षिण में लड़ाइयाँ,

१५९६-१६००

१५९६. शाहज़ादा मुराद (अकबर के दूसरे बेटे) और मिर्ज़ा ख़ाँ के नेतृत्व में दो सेनाओं ने अहमदनगर पर आक्रमण किया; अहमदनगर पर प्रसिद्ध सुलताना चाँद का अधिकार था; उसको घेरने और उसपर हमला करने की कोशिशें फेल हो गयी; अकबर को सिर्फ बरार पर कब्ज़ा करने का मौका मिल सका।

१५९७ नयी लड़ाइयाँ; खानदेश के राजा के उसकी सेना में आ मिलने तथा उसकी अधीनता स्वीकार कर लेने से अकबर की ताकत बढ़ गयी। गोदावरी नदी पर मुराद जो लड़ाई लड़ रहा था वह अनिर्णीत रही; नर्मदा के पास अकबर उनकी सेना से जा मिला।

१६०० अपने सबसे छोटे लड़के दानियाल को उसने अहमद नगर को घेरने के लिए आगे भेज दिया, फिर ख़ुद वहाँ जाकर उसके साथ शामिल हो गया, सेना ने वीरांगना सुलताना की हत्या कर दी और शहर को मुगलों के हवाले कर दिया।

सलीम के विद्रोह की वजह से अकबर को हिन्दुस्तान वापिस लौटना पड़ा; अपने पिता की अनुपस्थिति में, सलीम ने अवध और बिहार पर कब्ज़ा कर लिया था; अकबर ने उसे माफ कर दिया और बंगाल तथा उड़ीसा दे दिया; सलीम का शासन निर्मम था, अकबर उसके खिलाफ बारंबार करने ही वाला था कि सलीम ने आगरा में उससे माफ़ी माँग ली।

१६०५. उसके बेटों—मुराद और दानियाल की आकस्मिक मृत्यु की वजह से अकबर की भी ६३ वर्ष की अवस्था में जल्दी ही मृत्यु हो गयी। उसके एकमात्र जीवित बेटे सलीम ने शाहंशाह की हैसियत से जहाँगीर ("विश्वविजेता") के नाम से शासन करना शुरू कर दिया।

(४) जहाँगीर का शासन, १६०५-१६२७

१६०५. **जहाँगीर के गद्दी पर बैठने के समय** हिन्दुस्तान शांत था, किन्तु दक्षिण मे अशान्ति बढ़ रही थी और **उदयपुर के साथ युद्ध** चल रहा था। अपने पिता के तमाम प्रमुख अधिकारियो को जहाँगीर ने उनके पदो पर कायम रखा; **मुस्लिम धर्म** को पुनः राज्य-धर्म के रूप मे **स्थापित** कर दिया और एलान किया कि **न्याय व्यवस्था को पहले ही की तरह** वह कायम रखेगा। जिस समय जहाँगीर आगरा मे था, उसके बेटे, शाहज़ादा खुसरो ने दिल्ली और लाहौर मे बगावत कर दी थी, जहाँगीर ने उसे **हरा दिया और क़ैद कर लिया**; खुसरो के ७०० अनुयाइयो को उसने खूंटो पर लटकवा कर फाँसी दे दी और उनकी भयानक कतारो के बीच से खुसरो को निकाला।

१६१०. जहाँगीर ने दो सेनाएँ रवाना की, एक **दक्षिण** की तरफ दूसरी **उदयपुर** की तरफ। दक्खिन मे **अहमदनगर के युवा राजा** का मंत्री, **मलिक अम्बर** था, अहमदनगर के राजा की राजधानी **औरंगाबाद** ले जायी गयी थी; १६१० मे मलिक अम्बर ने **अहमदनगर** को फिर छीन लिया था (अकबर वहाँ पर जो दुर्गरक्षक सेना छोड गया था वह हार गयी थी) किन्तु—

१६१७—से पहले **मलिक अम्बर** के खिलाफ भेजी गयी सेनाएँ उसे हराने में सफल न हो सकी। यह सफलता भी उन्हे खुली लडाई मे नही, बल्कि मलिक अम्बर के मित्रो द्वारा उसका साथ छोड देने की वजह से ही मिल सकी थी।

१६११. जहाँगीर ने **नूरजहाँ** (फारस के एक उत्प्रवासी की बेटी) के साथ शादी कर ली। वह उसके ऊपर पूरे तौर से हावी थी, और पहले की शादी से हुए उसके बेटो के खिलाफ साज़िश करती थी।

१६१२. **शाहज़ादा ख़ुर्रम** (बाद में शाहजहाँ) ने **उदयपुर** को जीत लिया और **मारवाड़ को अधीन** कर लिया।

१६१५. जेम्स प्रथम के राजदूत के रूप मे—**ईस्ट इन्डिया कम्पनी** के सम्बन्ध मे, जो अभी बीज रूप मे ही थी, बातचीत करने के लिए दिल्ली के दरबार मे **सर टामस रो** आया। दिल्ली दरबार में पहुँचने वाला वह पहला अंग्रेज था। **जहाँगीर ने ख़ुर्रम** (अपने तीसरे बेटे) को अपना **उत्तराधिकारी** नियुक्त किया (उसका सबसे बड़ा बेटा, ख़ुसरो, जेल मे ही बन्द रहा; १६२१ मे

वहीं उसकी मृत्यु हो गयी; और अपने दूसरे बेटे, परवेज़ को वह नाकारा समझता था) ख़ुर्रम को उसने गुजरात का सूबेदार बना दिया और मलिक अम्बर के खिलाफ़, जिसने फिर विद्रोह कर दिया था, लड़ने के लिए भेज दिया।

१६२१. नूरजहाँ ने जहाँगीर को इस बात के लिए राज़ी कर लिया कि ख़ुर्रम (शाहजहाँ) को वह कन्धार भेज दे, इसके पीछे उसका इरादा यह था कि उसे दिल्ली से हटाकर अपने प्रिय बेटे परवेज़ को गद्दी पर बैठा दे। इसलिए शाहजहाँ ने विद्रोह करने की बेकार कोशिशें की—

१६२४—में वह एक शोकार्त्त अपराधी के रूप में दिल्ली में हाज़िर हुआ। थोड़े ही समय बाद, नूरजहाँ महावत खाँ से, जिसे शाहजहाँ के ख़िलाफ़ लड़ने के लिए भेजा गया था, नाराज़ हो गयी, उसे दक्षिण से वापिस बुलवा लिया गया, दिल्ली में उसके साथ अच्छा व्यवहार नहीं किया गया। जहाँगीर उसी समय काबुल जाने वाला था, उसने महावत को अपने साथ ले लिया और उसके साथ इतना कठोर बर्ताव किया कि, जिस समय तमाम शाही फौजें वितस्ता (झेलम—पश्चिम से पूर्व की ओर जाने पर पंजाब की पाँच नदियों में यह दूसरे नम्बर पर पड़ती है) को पार कर गयी थीं, महावत ने जहाँगीर को क़ैद कर लिया और बन्दी के रूप में उसे अपने शिविर में ले गया। नूरजहाँ ने नदी पार की, फौरन महावत पर हमला कर दिया, काफी नुकसान उठाने के बाद उसकी हार हो गयी, इसके बाद उसने महावत की अधीनता स्वीकार कर ली। बन्दिनी बनकर वह जहाँगीर के पास पहुँच गयी। महावत अपने शाही क़ैदियों को साथ ले गया, उनके साथ उसका व्यवहार सम्मानपूर्ण था, किन्तु नूरजहाँ उसकी सेना में से अपने समर्थकों को इकट्ठा करने लगी।

१६२७. नूरजहाँ की सलाह पर फौज की एक बड़ी परेड के समय जहाँगीर घोड़े पर बैठकर महावत के आसपास के सैनिकों के घेरे से बाहर निकल गया और एक ऐसी सैनिक टुकड़ी के पास पहुँच गया जो पूरे तौर से उसके साथ थी, उसने उसे छुड़ा लिया। महावत को माफ़ कर दिया गया और शाहजहाँ से लड़ने के लिए भेज दिया गया, किन्तु वहाँ जाकर वह फौरन उससे मिल गया।

२८ अक्तूबर, १६२७. लाहौर के रास्ते में जहाँगीर की मृत्यु हो गयी। दिल्ली के गवर्नर आसफ़ ख़ाँ ने फौरन शाहजहाँ को बुलवा भेजा; थोड़े ही समय में महावत के साथ वह वहाँ आ पहुँचा और पूरे शान-शौकत से आगरे

मे उसका राज्याभिषेक कर दिया गया; **नूरजहाँ** को मजबूर होकर राजनीतिक जीवन से सन्यास लेना पड़ा।

(५) शाहजहाँ का शासन, १६२७-१६५८

१६२७.[1] **खान जहाँ लोदी का विद्रोह**। यह **शाहजादा परवेज** का एक सेनानायक था, वह मलिक अम्बर के निष्क्रिय बेटे की सेनाओं मे मिल गया, फिर माफी का आश्वासन पा जाने पर वह दिल्ली लौट आया, किन्तु उसको विश्वास नही था इसलिए वह चम्बल नदी की तरफ भाग गया, वहाँ शाही सेनाओं का उसने मुकाबला किया, हार गया, तब चम्बल पार कर बुन्देलखण्ड की ओर से वह **अहमदनगर** चला गया।

१६२९. उसके खिलाफ **शाहजहाँ** स्वयं सेनाएँ लेकर **दक्षिण** गया; **बुरहानपुर** में शाहजहाँ से उसकी मुठभेड़ हुई और शाहजहाँ ने उसे **अहमदनगर** की ओर वापिस खदेड़ दिया, खान जहाँ को उम्मीद थी कि **बीजापुर** में अपने मित्र **मुहम्मद आदिलशाह** के पास वह सुरक्षित रह सकेगा, किन्तु उसने उसे वहाँ पनाह देने से इन्कार कर दिया, तब वह **मालवा** की ओर भागा, वहाँ से उसने बुन्देलखण्ड में घुसने की कोशिश की, परन्तु वह बुरी तरह हारा और मार डाला गया। इसके बाद शाहशाह ने अहमदनगर पर चढ़ाई कर दी।

१६३०.[2] अहमदनगर जिस समय शाही सेनाओं से घिरा हुआ था, उसी समय अहमदनगर के राजा के मन्त्री, **फतह खाँ** ने उसकी हत्या कर दी और **नगर को शाहजहाँ के हवाले कर दिया**। इसके बाद, शाहजहाँ ने **बीजापुर** नगर पर अधिकार करने की असफल कोशिश की; फिर बीजापुर को घेरने तथा दक्षिण में मुख्य सेनानायक का काम करने की जिम्मेदारी **महाबत खाँ** पर छोड़कर शाहजहाँ दिल्ली वापिस लौट गया।

१६३४. बीजापुर के असफल घेरे के बाद महाबत खाँ को वहाँ से वापिस बुला लिया गया।

१६३५. शाहजहाँ ने खुद जाकर **बीजापुर** को घेर लिया—पर वह उस पर अधिकार न कर सका।

१६३६. इसलिए, शाहजहाँ ने बीजापुर के राजा **मुहम्मद आदिलशाह** के साथ

१ बर्नेस के अनुसार, १६२८।
२ बर्नेस के अनुसार, १६३१।

सन्धि कर ली और अहमदनगर राज्य को उसी को दे दिया, किन्तु इसकी वजह से अहमदनगर राज्य की स्वाधीनता खत्म हो गयी। ६ साल तक आदिल ने पूरी मुगल सेना को आगे बढ़ने से रोक रखा था।

१६३७.[1] शाहजहाँ काबुल [गया], वहाँ से अलीमर्दान खां (जो अकबर द्वारा १५९४ मे फ़ारसियों से छीने गये कन्धार के नये मुगली सूबे का सूबेदार था) और अपने बेटे मुराद के नेतृत्व मे उसने बलख के खिलाफ अपनी सेनाएँ भेजी।

१६४६. चूंकि दोनों ही हमले सफल हुए, इसीलिए बलख पर कब्ज़ा कर लिया गया और शाहंशाह के तीसरे बेटे, औरंगजेब को वहाँ का शासक बना दिया गया।

१६४७. बलख मे उज्बेकों ने औरंगजेब को घेर लिया, उसको बहुत क्षति उठानी पडी और वह हिन्दुस्तान भाग गया।

१६४८. शाह अब्बास के नेतृत्व मे ईरानियों ने फिर कन्धार पर अधिकार कर लिया; उस पर फिर से अधिकार करने के लिए औरंगजेब को भेजा गया, दुश्मन ने उसकी रसद को उसके पास पहुँचने से रोक दिया, बाध्य होकर उसे काबुल लौट जाना पडा।

१६५२. कन्धार पर पुन अधिकार करने का नया प्रयत्न असफल हुआ; १६५३ मे भी, जब बादशाह के सबसे बडे लडके दारा शिकोह ने उस पर अन्तिम आक्रमण किया था, ऐसा ही हुआ था। मुगल वहा से चले आये, कन्धार फिर ईरानियो के हाथ में चला गया।

१६५५. गोलकुण्डा के वज़ीर मीरजुमला की प्रार्थना पर मुगल सेनाएँ फिर दक्षिण मे लौट आयीं, मीर जुमला को उसके स्वामी राजा अब्दुल्ला खाँ ने मारने की धमकी दी थी। इसके बाद, औरंगजेब ने हैदराबाद पर अधिकार कर लिया और—

१६५७—मे, उसने गोलकुण्डा को घेर लिया; अब्दुल्ला खाँ ने अधीनता स्वीकार कर ली और दस लाख पौंड सालाना की भेंट देने का उसने वायदा किया। शाहजहाँ की बीमारी का समाचार पाकर औरंगजेब जल्दी-जल्दी दिल्ली की ओर चला। शाहजहाँ के चार बेटे थे. दाराशिकोह, शुजा, औरंगजेब, और मुराद। दारा राज्य का शासन चलाता था; शुजा बगाल का सूबेदार था, मुराद (जो सबसे छोटा था) गुजरात का सूबेदार था। औरंगज़ेब, शाहजहाँ का तीसरा बेटा पक्का और सोच-विचार कर काम करने वाला था, वह स्वयं बादशाह बनना चाहता था और चूंकि वह जानता था

[1] एल्फिन्स्टन के अनुसार, १६४४।

कि **मजहब साम्राज्य की बहुत बड़ी प्रेरणा-शक्ति** था, इसलिए उसने **इस्लाम** के रक्षक के रूप में लोकप्रियता प्राप्त करने की चेष्टा की।

बीमार होने पर, **शाहजहाँ** ने राज-काज का काम **दारा** को सौंप दिया; शुजा ने विद्रोह कर दिया, बिहार पर चढाई कर दी; यही **मुराद** ने किया, उसने सूरत पर अधिकार कर लिया। औरंगजेब ने **दाराशिकोह और शुजा** को आपस में लडाकर एक दूसरे को कमजोर करने दिया और यह कहकर अपनी सेना को लेकर **मुराद** के पास पहुँच गया कि, यद्यपि वह तो फकीर बनकर दुनिया से दूर चला जाना चाहता है, किन्तु ऐसा करने के पहले वह अपने सबसे छोटे भाई को राजसिंहासन पर बैठा देना चाहता है। **दाराशिकोह** ने **शुजा** को हरा दिया, फिर उसने मुराद और औरंगजेब के ऊपर हमला कर दिया। उसे हरा दिया गया।

१६५८. शाहजहाँ की स्पष्ट आज्ञा के विरुद्ध, **दाराशिकोह** फिर लडने के लिए मैदान में पहुँच गया; आगरे के पास **सामूगढ़** मे सेनाएँ मिली; मुराद की बहादुरी के सामने [दाराशिकोह] न टिक सका, भागकर वह अपने पिता के पास आगरे चला गया; औरंगजेब ने उसका वहाँ भी पीछा किया, दोनो को महल के अन्दर एक सुरक्षित स्थान मे कैद कर लिया; विश्वासघात करके उसने **मुराद** को भी पकड़ लिया और दिल्ली मे नदी पार **सलीमगढ़** के किले मे कैद कर दिया; फिर जंजीरो से बँधवाकर उसे ग्वालियर के किले मे भेज दिया; **शाहजहाँ** के स्थान पर, जिसे उसने **राजसिंहासन से हटा दिया था, औरंगजेब** ने स्वयम् अपने को बादशाह घोषित कर दिया, उसने **आलमगीर** की पदवी धारण की।

(६) औरंगजेब का शासन, और मराठों का उदय

१६५८-१७०७

१६५८ **दाराशिकोह** बन्दीगृह से निकल भागा और **लाहौर** जा पहुँचा (वहाँ पर उसके बेटे **सुलेमान** ने उसके पास पहुँचने की कोशिश की, किन्तु उसे बीच मे ही रोक दिया गया और कश्मीर की राजधानी **श्रीनगर** मे कैद कर दिया गया), तब दारा सिन्ध की तरफ [बढा], और **शुजा** ने दिल्ली पर चढाई कर दी। यद्यपि लड़ाई के बीचो-बीच राजा जसवन्तसिंह के नेतृत्व में शाही सेनाओं के एक भाग ने धोखा देकर उसका साथ छोड दिया था, फिर भी खजवा की लडाई में औरंगजेब ने उसे हरा दिया; शुजा की पराजय के बाद राजा जसवन्तसिंह **जोधपुर** भाग गया।

इसी समय दाराशिकोह फिर रणक्षेत्र मे कूद पडा [हार गया], वहाँ से भागता हुआ वह अहमदाबाद, कच्छ, कन्धार, और अन्त मे सिन्ध मे जुन पहुचा; वहाँ उसके साथ विश्वासघात हुआ और उसे पकड़वा दिया गया, दिल्ली मे लाकर उसको मार डाला गया; दिल्ली के निवासियों ने बगावत की, उसे बलपूर्वक कुचल दिया गया।

१६६०. शाहजादा मुहम्मद सुल्तान (औरंगजेब का बेटा) और गोलकुडा का भूतपूर्व मंत्री, मीरजुमला बगाल मे शुजा के विरुद्ध लड़ाई मे विजयी हुए। शुजा भागकर अराकान[1] की पहाडियो की शरण मे चला गया। इसके बाद उसके बारे मे कभी कुछ सुनायी नही दिया। मुहम्मद सुलतान ने मीरजुमला के खिलाफ विद्रोह कर दिया था [और शुजा से मिल गया था], फिर वह वापिस अपनी ड्यूटी पर लौट आया था। औरंगजेब ने वर्षों तक उसे एक क़ैदी की तरह बन्द रखा; अन्त मे जेल मे ही उसकी मृत्यु हो गयी। श्रीनगर के राजा ने दाराशिकोह के बेटे, सुलेमान को पकड़कर आगरा भेज दिया; वहाँ पर औरंगजेब ने उसे जहर दे दिया और थोडे ही समय बाद उसकी मृत्यु हो गयी। इसी के साथ-साथ मुराद को भी मरवा दिया गया। इसके बाद से औरंगजेब एकदम सर्व-सर्वा बन गया (शाहजहाँ अब भी "बन्द कोठरी" मे कैद था)।

मीरजुमला को वजीर बना दिया गया, जिस समय वह आसाम पर चढ़ाई करने जा रहा था ढाका मे [१६६३ मे] उसकी मृत्यु हो गयी, उसका स्थान उसके सबसे बड़े बेटे मुहम्मद अमीन ने ग्रहण किया।

मराठों का उदय

१६६०-१६७०

मलिक अम्बर के उत्तराधिकारियों मे एक मालोजी भोंसले थे, उनके शाहजी नाम का एक पुत्र था, सेना के एक प्रधान अधिकारी यदुराव की पुत्री से उसकी शादी हुई थी; इस शादी से शिवाजी नाम का एक पुत्र पैदा हुआ; अपने पिता की जागीर (विशेष योग्यता के लिए किसी व्यक्ति विशेष को बादशाह द्वारा पारितोषिक-स्वरूप दिया गया इलाका) के उजड्ड सिपाहियों के सम्पर्क मे हमेशा रहने के कारण, उसमे एक डाकू की आदतें पड गयी थी। इसका अभ्यास उसने शुरू मे अपने ही आश्रित व्यक्तियों के ऊपर किया। उसने खुद अपने पिता की रियासत पर अ

[1] बर्मा का पुराना नाम।

कर लिया। कई किलो को छीन लिया; फिर शाही ख़जाना ले जाने वाले एक दल को पकडकर उसने **खुला विद्रोह** शुरू कर दिया; उसके सहायक ने **कोंकण के शासक** को कैद कर लिया और राजधानी, **कल्याण** सहित उसके पूरे सूबे पर कब्जा कर लिया। इस सफलता के बाद, **शिवाजी** ने **शाहजहाँ** के साथ सम्बन्ध स्थापित करने की कोशिश की जिसे शाहजहाँ ने भी नापसन्द नहीं किया। इसके बाद उसने **दक्षिणी कोंकण** पर अधिकार कर लिया और—

१६५५—अपनी सत्ता का निरन्तर विस्तार करता गया। इस मराठा के अभिमान को चूर्ण करने के लिए **औरंगजेब** भेजा गया। **शिवाजी** ने कपट से काम लिया और उसे झाँसा दे दिया; वह माफ़ कर दिया गया; शाही सैन्य-शक्ति के वहाँ से वापिस लौटते ही उसने फिर **बीजापुर** पर हमला बोल दिया। बीजापुर का (सेनानायक) *अफ़ज़ल ख़ाँ शिवाजी के साथ अकेला* अलग मिलने के लिए तैयार हो गया, शिवाजी ने ख़ुद अपने हाथ से उसकी हत्या कर दी और फिर ख़ान की भयभीत सेना को परास्त कर दिया।

शिवाजी के अनुयायियों के अनेकों दल अब पैदा हो गये थे, उनके खिलाफ सेना भेजी गयी; इसके बाद **बीजापुर के नये सेनानायक** ने—

१६६०—मे, सैन्य-शक्ति लेकर **मराठों के देश पर चढ़ाई कर दी, शिवाजी को उसने हरा दिया,** और—

१६६२—मे, उसके साथ अच्छी शर्तों पर सन्धि कर ली, कोंकण की एक जागीर में उसने बागी को बन्द करके छोड़ दिया।

१६६२. **शिवाजी** ने फिर मुगल इलाकों की लूट-पाट शुरू कर दी। **औरंगजेब** ने उसे दबाने के लिए **शाइस्ता ख़ाँ** को भेजा, उसने **औरंगाबाद** से **पूना** पर चढ़ाई कर दी और उस पर अधिकार कर लिया; सारे जाड़े वह वहीं डेरा डाले रहा; एक रात उसकी हत्या करने के इरादे से शिवाजी चुपचाप उसके डेरे मे घुस गया; किन्तु ख़ान बच गया। वर्षा ऋतु के बाद **शाइस्ता ख़ाँ औरंगाबाद** गया, और **शिवाजी** ने फौरन **सूरत** को लूट डाला।

१६६४. शिवाजी के पिता, **शाहजी की मृत्यु हो** गयी, और शिवाजी अपने पिता के उत्तराधिकारी के रूप में (शाहजी की जागीर) तथा **मद्रास** (के पास के इलाके) और **कोंकण** का, जिसे उसने स्वयम् जीता था, स्वामी बन गया। अब उसने **मराठों के राजा** की पदवी धारण कर ली और दूर-दूर तक के इलाके को लूट डाला।

१६६५. **औरंगजेब** क्रोध से उबल उठा, उसने उसके ख़िलाफ़ सेना के दो

डिवीजन रवाना कर दिये। शिवाजी ने अधीनता स्वीकार कर ली; इसके बावजूद, सन्धि के अन्तर्गत, इस चालाक आदमी ने एक और जागीर प्राप्त कर ली; इस जागीर में उन बत्तीस क़िलों में से जिन पर उसने कब्जा कर लिया था १२ क़िले और उनके इलाक़े शामिल थे। इसके अलावा, उसने चौथ पाने का अधिकार भी हासिल कर लिया—यह एक प्रकार की घूस थी। दक्षिण में सारे मुग़ल इलाक़े पर चौथ लगा दी गयी, इससे बाद में मराठों [को] इर्द-गिर्द के तमाम राज्यों के साथ झगड़ा करने और उनके इलाकों में घुस-पैठ करने का एक बहाना [प्राप्त हो गया]।

१६६६. एक मेहमान के रूप में शिवाजी दिल्ली गये; उनके साथ इतनी रुखाई का व्यवहार किया गया कि क्रुद्ध होकर फौरन दक्षिण वापिस चले गये (अपनी "सारी चालाकी" के बावजूद, औरंगज़ेब ने उनकी हत्या नहीं की और, आमतौर से, शुरू से ही मराठों के साथ उसका व्यवहार एक "गधे" जैसा था)। इसी साल शाहजहाँ की बन्दी अवस्था में मृत्यु हो गयी।

१६६७. शिवाजी ने ऐसी चालाकी से अभिसन्धि रची कि सन्धि में उन्हें राजा मान लिया गया; इसके बाद उन्होंने बीजापुर और गोलकुण्डा को भय दिखाया और उनके ऊपर कर लगा दिया।

१६६८-१६६९. शिवाजी ने अपने राज्य को अच्छी तरह जमा लिया; राजपूतों तथा अन्य पड़ोसियों के साथ अच्छी शर्तों पर उन्होंने सन्धियाँ कर लीं।

१६६९. इस प्रकार मराठों का एक राष्ट्र बन गया जिसका शासक एक स्वतंत्र राजा था।

१६७०. औरंगज़ेब ने सन्धि का उल्लंघन किया, शिवाजी ने पूना पर अधिकार करके अपनी कार्रवाइयों का श्रीगणेश किया और सूरत तथा खानदेश को लूट-पाट कर मिस्मार कर दिया; औरंगज़ेब का बेटा मुअज्जम औरंगाबाद में निष्क्रिय पड़ा रहा। महाबत खाँ को भेजा गया, शिवाजी ने उसको बहुत बुरी तरह से पराजित कर दिया। औरंगज़ेब ने अपनी सेनाओं को वापिस बुला लिया और लड़ाई स्थगित कर दी। इसके बाद से औरंगज़ेब का प्रभाव घटने लगा। सभी लोग उससे नाराज थे, उसके निष्फल मराठा अभियानों की वजह से उसके मुग़ल सिपाही बहुत नाराज थे, और हिन्दू इसलिए नाराज थे कि उसने जज़िया फिर से लागू कर दिया था और हर तरह से उनका दमन किया था।

१६७८. अन्त में अपने महान् सरदार, राजा जसवन्तसिंह की विधवा पत्नी तथा बच्चों के साथ दुर्व्यवहार करके उसने अपनी सेना के

योद्धाओं, राजपूतों को भी अपना विरोधी बना लिया। राजा जसवन्तसिंह की मृत्यु १६७८ मे हो गयी थी। राजा के बेटे, दुर्गादास ने औरंगज़ेब के बेटे शाहज़ादा अकबर के साथ षड्यन्त्र किया और ७० हजार राजपूतों को लेकर दिल्ली पर चढाई कर दी। आन्तरिक षड्यन्त्रों तथा विद्रोहों के कारण यह गठबन्धन टूट गया और लडाई होने के पहले ही सेना छिन्न-भिन्न हो गयी, अकबर और दुर्गादास भाग कर मराठों के पास चले गये जिनके नेता प्रसिद्ध शिवाजी के पुत्र सम्भाजी थे।

१६८१. छिट-पुट ढग से दोनो दलों के बीच काफी दिन तक सघर्ष चलते रहने के बाद, मेवाड़ और मारवाड़ मे शान्ति हो गयी। इसी दर्म्यान—

१६७३—मे, शिवाजी ने कोकण पर अधिकार कर लिया था, १६७४ मे उन्होंने खानदेश तथा बरार के मुगल सूबो को लूट-खसोट कर तबाह कर दिया; इसी प्रकार शिवाजी—

१६७७—तक, एक के बाद एक, कुर्नूल, कुडप्पा (कनारा), जिंजी तथा वेल्लूर पर अधिकार करते गये (वह मद्रास के पास से गुज़रे थे, इसकी वजह से अंग्रेज़ों की फैक्टरियों के दफ्तरो मे काम करने वाले अंग्रेज़ बुरी तरह घबडा गये थे—**मद्रास की दस्तावेज़ें**, मई १६७७)।

१६७८. शिवाजी ने मैसूर और तंजोर पर अधिकार कर लिया, १६८० मे, मुगल सेना की रसद के रास्तो को काटकर, उन्होंने बीजापुर पर चढाई कर दी, और—

१६८०—मे, इसी अभियान के दौरान शिवाजी की मृत्यु हो गयी; उनके बेटे सम्भाजी मराठा सेनाओ के सेनापति बन गये। सम्भाजी एक निर्दयी *और व्यभिचारी राजा था। उसकी सत्ता का क्षय होने मे समय न लगा,* मुगलो के पास अगर कोई अच्छा सेनापति होता तो उन्होने मराठो की सत्ता का विध्वस कर दिया होता, किन्तु औरंगज़ेब एक "बैल" की ही तरह काम करता गया।

१६८३. सम्भाजी ने शाहज़ादा मुअज्ज़म को, जिसे कोंकण भेजा गया था, हरा दिया; मराठो ने मुगल सेना के पृष्ठ भाग के इलाके को लूट-पाट कर बराबर कर दिया, बुरहानपुर के शहर को उन्होंने आग लगा दी; इस पर मुअज्ज़म ने हैदराबाद को लूट डाला और गोलकुण्डा के राजा के साथ सन्धि कर ली; मराठे इसी बीच उत्तर की तरफ बढ़ते गये और उन्होंने भड़ौच को लूट लिया।

इसके बाद, एक दूसरी सेना लेकर, औरंगज़ेब ने बीजापुर के नगर और

राज्य का विध्वंस कर दिया, गोलकुण्डा के साथ अपनी सन्धि को ढिठाई से उसने तोड़ दिया और उस शहर पर कब्ज़ा कर लिया।

इसके बाद मे औरंगजेब स्वयं अपने पुत्रों से डरने लगा तथा हर एक पर सदेह करने लगा; उसके डर ने—

१६८७—तक आधे पागलपन का रूप ग्रहण कर लिया; बिना किसी कारण के अपने पुत्र मुअज्जम को उसने कैदखाने मे डाल दिया, सात वर्ष तक वह वहीं [बन्द रहा]।

मुग़ल साम्राज्य के पतन का श्रीगणेश इसी समय से हुआ था; दक्षिण मे चारो तरफ अव्यवस्था फैली हुई थी, देशी राज्य टूट-फूट कर बर्बाद हो गये थे; देश भर मे चोरों-बटमारों के गिरोह घूमते फिरते थे; मराठों की शक्ति बहुत बड़ी थी; उत्तर की राजपूत और सिक्ख जातियाँ स्थायी रूप से विरुद्ध हो गयी थीं।

१६८९. तक़र्रब खाँ नामक एक मुग़ल सरदार ने (जो घाटों के समीप, कोल्हापुर का सूबेदार था) यह सुनकर कि सम्भाजी वहीं पास मे शिकार कर रहा था, उसे पकड़ कर गिरफ्तार कर लिया, बन्दी के रूप मे उसे उसने औरंगजेब के पास भेज दिया जिसने उसे फौरन मरवा डाला।

सम्भाजी के बाद उसके नाबालिग पुत्र शाहूजी को गद्दी पर बैठा दिया गया, साहसी और समझदार राजाराम को उसका सरक्षक बना दिया गया।

१६९२. सरक्षक राजाराम ने मराठों के लूट-पाट करने वाले गिरोहों को फिर से सगठित किया, सन्ताजी और धनाजी नाम के सरदारों को उसने सेना-नायक बनाया और मुग़ल सेनाओं से लड़ने के लिए भेज दिया; उन्होंने कई छोटी-मोटी लड़ाइयाँ लड़ीं; यह लड़ाई लगभग पाँच वर्ष तक—१६९४ से १६९९ तक—चलती रही; इनमें से तीन लड़ाइयों का उद्देश्य जिजी को घेर लेना था, अन्त मे मराठों ने उस पर अधिकार कर लिया।

१६९४ औरंगजेब ने अपने सेनापति, जुल्फिकार खाँ को जिजी पर आक्रमण करने के लिए भेजा, खाँ ने औरंगजेब से और सैनिकों की माँग की, औरंगजेब ने देने से इनकार कर दिया; इसके बजाय उसने शाहजादा कामबख्श को बड़ा मुख्य सेनानायक बनाकर भेज दिया; इससे क्षुब्ध होकर, खाँ ने घेरे को ढीला कर दिया; मराठों के साथ वह बराबर बात-चीत करता रहा, इसके फलस्वरूप, तीन वर्ष तक प्रयत्न करने के बाद भी कामबख्श उस स्थान पर कब्ज़ा न कर सका।

१६९७. सन्ताजी ने घेरे को तोड़ दिया; अन्त मे—

१६९८—मे, यह समझ कर कि अगर वह कुछ नही करेगा तो औरंगजेब उसका अपमान करेगा, जुल्फिकार खां ने मराठा सरदार को वहाँ से भाग जाने दिया और फिर बिना किसी विशेष प्रयत्न के उसके दुर्ग पर क़ब्ज़ा कर लिया। इसके फलस्वरूप, स्वय मराठो के अन्दर झगड़े होने लगे; धनाजी ने स्वय अपने हाथो से सन्ताजी की हत्या कर दी। फिर लड़ाई शुरू हो गयी; राजाराम स्वय एक बडी सेना लेकर मैदान मे उतर आया, और दूसरी तरफ मुगलो की सेना का नेतृत्व स्वय औरंगजेब ने सभाला।

१७००. औरंगजेब ने सतारा पर कब्ज़ा कर लिया और—

१७०४—तक, उसने मराठो के अनेक और किलो को जीत लिया। राजाराम की उसी साल [१७००] मृत्यु हो गयी। औरंगजेब अब [१७०४] ८६ वर्ष का हो गया था। उसके जीवन के पिछले चार वर्षो मे उसका सारा शासन अस्त-व्यस्त हो गया था; मराठों ने अपने किलो पर फिर से क़ब्ज़ा करना शुरू कर दिया और उनकी शक्ति फिर बढने लगी; इसी समय एक भयकर अकाल पडा जिसने फौजो की रसद को समाप्त कर दिया और राजकोष को भी खाली कर दिया; वेतन न मिलने से सिपाहियो ने बगावतें करनी शुरू कर दी; मराठे अब औरंगजेब को बहुत तग कर रहे थे, बहुत ही अस्त-व्यस्त हालत मे वह अहमदनगर लौट गया; बीमार पड गया, और—

२१ फरवरी, १७०७—के दिन, ८९ वर्ष की अवस्था मे, औरंगजेब की मृत्यु हो गयी ("अपने किसी बेटे को उसने अपनी शैय्या के पास तक नही फटकने दिया")।

[भारत मे योरोपीय सौदागरों का प्रवेश]

१४९७ दिसम्बर मे वास्कोडिगामा नामक पुर्तगाली उत्तमाशा अन्तरीप की परिक्रमा करने मे सफल हुआ और—

मई १४९८—मे, कालीकट के तट पर पहुच गया। इसके बाद गोआ, बम्बई तथा लंका के प्वाइंट डिगाल मे पुर्तगाली सौदागरो की बस्तियां कायम हो गयी।

१५९५. (एक शताब्दी बाद) डचों ने वर्तमान कलकत्ता नगर के समीप अपनी एक बस्ती कायम की।

१६००. लन्दन की ईस्ट इण्डिया कम्पनी—लन्दन नगर के व्यापारियों की कम्पनी की [स्थापना हुई]।

३० दिसम्बर, १६००. पूर्व के साथ सिल्क, सूती कपड़ों तथा हीरे-जवाहरात का व्यापार करने की सनद एलिज़ाबेथ से मिल गयी। तै हुआ कि कम्पनी का प्रबन्ध "एक गवर्नर तथा २४ समितियाँ" करेंगी।

१६०१. उसके प्रथम जहाज [भारत] आये।—महान् मुग़ल, जहांगीर ने—

१६१३[1]—में, इन सौदागरों को अपने एक फ़र्मान द्वारा सूरत का व्यापारिक बन्दरगाह दे दिया, और—

१६१५—में, सर टामस रो को एक राजदूत के रूप में दिल्ली आने की अनुमति प्रदान कर दी।

१६२४. कम्पनी ने जेम्स प्रथम से निवेदन किया कि [भारत में नियुक्ति] अपने कर्मचारियों को सैनिक तथा नागरिक क़ानून के अनुसार सज़ा देने का अधिकार उसे दे दिया जाय और यह अधिकार उसे मिल गया; पार्लामेन्ट ने इसमें किसी प्रकार का हस्तक्षेप नहीं किया; इस भांति, वास्तव में, कम्पनी को "नागरिकों की ज़िन्दगी और क़िस्मत का फ़ैसला करने का असीमित अधिकार मिल गया" (जेम्स मिल[2])। यह पहला अदालती अधिकार था जो सम्राज्ञी ने कम्पनी को दिया था; यह अधिकार उसे केवल योरोपीय ब्रिटिश नागरिकों के ऊपर ही प्राप्त था।

१६३४. शाहजहां के फ़र्मान से बंगाल में प्रथम फ़ैक्टरी की स्थापना की गयी।

१६३९. अंग्रेज़ों को मद्रास में व्यापार करने की इजाज़त दे दी गयी।

१६५४. पचास वर्ष तक व्यापार करने के एकान्तिक अधिकार का उपभोग करने के बाद "दुस्साहसी सौदागरों" के नाम से एक नयी सोसाइटी की स्थापना की वजह से कम्पनी की इजारेदारी के लिए ख़तरा उत्पन्न हो गया।

१६६१. भारत के बाज़ार में उसे प्रतियोगिता का सामना न करना पड़े, इस ख़याल से, पुरानी कम्पनी ने "दुस्साहसियों" को अपनी कम्पनी में शामिल हो जाने दिया।

१६६२. चार्ल्स द्वितीय का पुर्तगाल के बादशाह की बेटी के साथ विवाह हुआ; दहेज़ के रूप में वह अपने साथ बम्बई के व्यापारिक बन्दरगाह को लायी; इस भांति वह ब्रिटिश सम्राट का बन गया, किन्तु—

१६६८—में, "ख़ुशमिज़ाज व्यक्ति" ने बम्बई के बन्दरगाह को ईस्ट इण्डिया

---

१ बर्नेस के अनुसार, १६१२ में।

२ मिल, 'ब्रिटिश भारत का इतिहास,' खण्ड १, लन्दन, १८२८।

कम्पनी को दे दिया। चाय के लिए पहला आर्डर (जिसे चाय उसके चीनी नाम के कारण कहा जाता था) इंगलैण्ड से मद्रास इसी साल भेजा गया था। साथ ही साथ, चार्ल्स द्वितीय ने ईस्ट इण्डिया कम्पनी को इस बात का भी पट्टा दे दिया कि उसमें सम्बन्धित व्यापारी किसी भी ऐसे बिना लाइसेन्स के व्यक्ति को, जो भारत में स्वयं अपने लिए, आदि रोज़गार करता पाया जाय, क़ैद करके वे इंगलैण्ड भेज दें। यह कम्पनी के एकाधिकारी अधिकारों की पराकाष्ठा थी।

१६८२. कम्पनी के इंगलैंड में रहने वाले डायरेक्टर-मंडल ने बंगाल को एक अलग प्रेसीडेन्सी बना दिया (प्रेसीडेन्सी का अर्थ उस समय किसी सूबे में फैली हुई चन्द फैक्ट्रियां तथा व्यापार-मंडियां होता था)। कलकत्ते में प्रेसीडेन्सी का एक गवर्नर तथा एक कौन्सिल नियुक्त कर दी गयी।

१६८८.[1] कलकत्ते के संस्थापक, चारनाक को मुगलों ने बंगाल से जलावतन कर दिया, डर कर, दूसरे निकाले गये व्यापारियों के साथ, नदी के रास्ते से अपनी जान बचा कर वह भाग गया।

१६९०. औरंगजेब की अनुमति से "कुत्ते" फिर वापिस आ गये; चारनाक ने कलकत्ते में अब स्थायी बस्ती कायम कर ली और किले बना कर वहाँ पर सैनिक टुकड़ियां तैनात कर लीं।

१६९८. औरंगजेब ने "कुत्तों" अर्थात्, "कम्पनी को कलकत्ता, सुतनती और गोविन्दपुर के तीन गावों को ख़रीदने की अनुमति दे दी, बाद में इन गांवों की किलाबन्दी कर दी गयी थी। नयी किलेबन्दियों को सर चार्ल्स आयर ने, "डच मुक्तिदाता" के सम्मान में फोर्ट विलियम का नाम दे दिया; अब भी सारी सार्वजनिक दस्तावेज़ों पर "फोर्ट विलियम, बंगाल" लिखा रहता है।

इसी वर्ष, इंगलैण्ड में, विलियम तथा मेरी के नवें और दसवें पट्टे के मातहत एक नयी कम्पनी की स्थापना हुई; इस कम्पनी ने कहा कि कितने ही व्यक्ति अगर वे ८ प्रतिशत सूद की दर पर २० लाख पौंड का ऋण देने को तैयार हों तो मिलकर पूर्वी भारत के साथ व्यापार शुरू कर सकते हैं। हिस्से ख़रीदने वालों को व्यापार करने की इजाजत दे दी गयी; किन्तु उन पर यह प्रतिबन्ध लगाया गया कि अलग-अलग उनके निर्यात की मात्रा ऋण के उनके अपने भाग से अधिक नहीं हो सकती। इस कम्पनी का नाम था : इंगलिश ईस्ट इण्डिया कम्पनी।

---

[1] बर्नेल के अनुसार, १६८६।

१७००. नयी कम्पनी ने सर विलियम नोरिस के नेतृत्व में (औरंगज़ेब के दरबार में) एक ख़र्चीला तथा सर्वथा निरर्थक राजदूतावास खोला जिसकी वजह से वह करीब-करीब स्वयं ख़त्म हो गयी ।

१७०२. "पुरानी लन्दन कम्पनी" "नयी कम्पनी" के साथ मिल गयी; इसके बाद से केवल एक ही कम्पनी अस्तित्व में रह गयी जिसका नाम था पूर्वी भारत के साथ व्यापार करने वाले सौदागरों की संयुक्त कम्पनी (The United Company of Merchants Trading to East India) ।

इसी वर्ष[1] औरंगज़ेब ने मीरजाफर नामक एक व्यक्ति को मुर्शिद कुली खाँ की पदवी देकर दीवान नियुक्त किया (सूबे का दीवान मुग़ल शासन का एक अफ़सर होता था, वह मालगुज़ारी की वसूली की देख-रेख करता था और उसके सूबे की सीमाओं के अन्दर दीवानी के जितने मुक़दमें होते थे उनके फ़ैसले करता था) [बाद में] जाफर ख़ाँ बंगाल, बिहार तथा उड़ीसा का सूबेदार बन गया (सूबेदार ज़िले का वाइसराय होता था; अकसर एक ही व्यक्ति दोनों काम करता था) ।

यह महाशय सुशील अंग्रेज़ों (less agreables Anglais) से घृणा करते थे, उनके व्यापार में दख़ल देते थे, और उनको बराबर तंग करते रहते थे (१७१५ में, अंग्रेज़ों ने उनके ख़िलाफ़ फ़र्रुख़सियर की सेवा में शिकायत की; फ़र्रुख़सियर ने अंग्रेज़ सौदागरों को ३८ नगर भेंट कर दिये ! और एक दस्तक, अथवा सरकारी अनुमति पत्र देकर उनके माल को कर से मुक्त कर दिया; इसके बाद उनके माल की गाँठें सरकारी अधिकारियों की जाँच-पड़ताल से मुक्त हो गयी) ।

मुर्शिद कुली खाँ मालगुज़ारी का प्रसिद्ध अफ़सर था; ज़बर्दस्ती वसूली करने तथा लोगों को सताने के तरह-तरह के निर्लज्ज तरीक़े ईजाद करके उसने बंगाल की मालगुज़ारी को बहुत बढ़ा दिया : इस मालगुज़ारी को नियत समय पर वह दिल्ली भेज देता था । सूबे को उसने चकलों में बाँट दिया, प्रत्येक चकले में एक मुख्य वसूली करने वाला अफ़सर होता था जिसकी नियुक्ति वह स्वयं करता था; यह अफ़सर ठेके पर मालगुज़ारी वसूल करने का काम करता था । बाद में इन अफ़सरों ने अपने पदों को पुश्तैनी बना लिया और "ज़मींदार राजाओं" की पदवी धारण कर ली"

१ [illegible] के अनुसार, १७०४-[illegible] कलकत्ता, [illegible] ।

औरंगजेब के बाद उसका प्रत्यक्ष उत्तराधिकारी, शाहजादा मुअज्जम राज सिंहासन पर बैठा।

(७) औरंगजेब के उत्तराधिकारी : पानीपत का महायुद्ध मुग़ल आधिपत्य का अन्त १७०७-१७६१

(१) १७०७-१७१२. बहादुरशाह (मुअज्जम ने यह पदवी धारण कर ली थी)। —[औरंगजेब के] द्वितीय जीवित पुत्र, शाहजादा आजम तथा तीसरे पुत्र, शाहजादा कामबख्श ने विद्रोह कर दिया; मुअज्जम के साथ लड़ाई में एक-एक कर वे दोनों पराजित हुए और मारे गये। बहादुर ने अपनी शक्तियों को बटोर कर मराठों के खिलाफ लगा दिया, उनके सरदारों के बीच फूट पैदा कर दी और, अन्त में, उनके लिए अहितकर शर्तों पर सन्धि करने के लिए उन्हें मजबूर कर दिया।

१७०९. उदयपुर मारवाड़ तथा जयपुर के राजपूत राज्यों के साथ उसने अपने लिए लाभदायक सन्धियां कर लीं।

१७११ उसने सिखों के ऊपर चढ़ाई कर दी, पंजाब से खदेड़ कर उन्हें पहाड़ों में जाने के लिए मजबूर कर दिया।—सिख ईश्वरवादी हिन्दुओं का एक धार्मिक समुदाय था, इस समुदाय का उदय अकबर के काल में हुआ था; उसके "संस्थापक" का नाम नानक था। उनका एक सम्प्रदाय बन गया। जिसका नेतृत्व उनके गुरु (आध्यात्मिक नेता) करते थे। जब तक मुसलमानों ने उनके ऊपर दमन करना शुरू नहीं किया तब तक वे शान्त थे। १६०६ में मुसलमानों ने उनके नेता को मार डाला। इसके बाद से वे हर मुस्लिम चीज़ के कट्टर दुश्मन बन गये, प्रसिद्ध गुरु गोविन्द के नेतृत्व में उन्होंने अपनी सैनिक शक्ति क़ायम की और पूरे पंजाब पर अधिकार कर लिया।

१७१२. ७१ वर्ष की अवस्था में बहादुरशाह की मृत्यु हो गयी, काफ़ी लड़ाई झगड़े तथा अनेक हत्याओं के बाद उसका निकम्मा लड़का—

(२) १७१२-१७१३. जहाँदार शाह उसकी गद्दी पर बैठा, उसने जुल्फ़िकार खाँ को अपना वजीर बनाया; जिन पदों पर पहले अमीर-उमरा काम करते थे उन पर उसने गुलामों की नियुक्ति की। उसके भतीजे फर्रुखसियर ने—

१७१३—में बंगाल में विद्रोह कर दिया, शाही फौज को आगरे के समीप पराजित कर दिया, और जहाँदार शाह तथा जुल्फ़िकार खाँ को मरवा दिया।

१७२३.[1] [आसफ़जाह]हटकर दक्षिण की ओर चला गया—सैयद हुसैन की एक कार्मुक ने (ऐसा लगता है कि, बादशाह के हुक्म से) हत्या कर दी; (सैयद) अब्दुल्ला ने एक नया बादशाह बनाने की कोशिश की, वह हार गया और कैद कर लिया गया।—इसी समय राजपूतों ने साम्राज्य से गुजरात को छीन लिया।

१७२५.[2] मुहम्मदशाह ने मुबारिज़, हैदराबाद के गवर्नर को भडकाया कि वह आसफजाह के विरुद्ध कार्रवाई करे, आसफजाह ने उसे हराकर मार डाला और उसका सिर काट कर दिल्ली भेज दिया।

१७२०. बालाजी विश्वनाथ की मृत्यु। राजा शाहू के मन्त्री की हैसियत से उसने उसके साम्राज्य को सुगठित किया था। वह "पहला पेशवा" था—यह एक पदवी थी जिसे मराठा राजा के मन्त्री ने धारण किया था। (बाद में, पेशवाओं ने सम्पूर्ण वास्तविक सत्ता पर अधिकार कर लिया और राजपरिवार चुपचाप सतारा में रहता रहा। कालान्तर में राजपरिवार का महत्व खत्म हो गया और उसके सदस्य केवल "सतारा के राजा" रह गये।) उसके बाद उसका तेजस्वी पुत्र बाजीराव गद्दी पर बैठा (यह सबसे बड़ा पेशवा तथा शिवाजी को छोड़कर सबसे योग्य मराठा था); शाहू को उसने सलाह दी कि वह स्वयं मुगल साम्राज्य पर हमला करे। शाहू ने सारी सत्ता उसी के हाथ में छोड दी। बाजीराव ने मालवा को लूट-पाट कर बर्बाद कर दिया।

१७२२. बाजीराव ने आसफजाह पर (जो उस समय मुगल बादशाह का गवर्नर था) हैदराबाद में हमला कर दिया और उसे बुरी तरह से हरा दिया—इसके अतिरिक्त, गुजरात को भी उसने लूट डाला।

मराठा सेनाओं के उस समय के जो सेनानायक थे वही दक्षिण के तीन महान् परिवारों के संस्थापक बने थे: ऊदाजी पंवार, मल्हार होल्कर तथा रानोजी सिंधिया।

१७३२.[3] बाजीराव और आसफ़जाह के बीच एक दूसरे का समर्थन करने के वादे के आधार पर गुप्त समझौता हो गया।

---

१ एलफिन्स्टन के अनुसार, १७२४।
२ एलफिन्स्टन के अनुसार, १७२३।
३ बर्गेस के अनुसार, १७३१।

१७३४. मराठों ने मालवे और बुन्देलखण्ड पर क़ब्ज़ा कर लिया। बादशाह ने उनके द्वारा जीते गये प्रदेशों को उनको दे दिया और इस बात का भी अधिकार दे दिया कि आसफजाह के राज्य में वे चौथ वसूल कर सकें, इसने [आसफजाह और बाजीराव के बीच हुए] समझौते को भग कर दिया और आसफ फिर बादशाह के प्रति वफादार बन गया।

१७३७. बाजीराव ने यमुना के उस पार तक के प्रदेश को उजाड डाला और अचानक दिल्ली के द्वार पर जा पहुचा, किन्तु उस पर हमला किये बिना ही वापिस लौट गया। आसफ़जाह ने उस पर चढ़ाई कर दी, भोपाल [के किले] के समीप वह हार गया और मजबूर होकर नर्वदा और चम्बल के बीच के पूरे प्रदेश को उसे मराठों को दे देना पडा। इस प्रकार उत्तर में भी मराठे आ पहुंचे।

१७३९-१७४०. भारत पर नादिरशाह ने आक्रमण किया (वह एक लुटेरा था; अपने कुछ अनुयायियों को लेकर वह फारस के जलावतन शाह, तहमास्प से मिल गया था। तहमास्प को ग़िलजियों ने जलावतन कर दिया था। नादिर ने तहमास्प की मदद करके उसे उसका राज सिंहासन फिर से दिलवा दिया, फिर उसे हटा दिया और खुद अपने को शाह बना लिया। उसने कंधार और काबुल को अधीन कर लिया और फिर हिन्दुस्तान पर आक्रमण कर दिया)।

१७३९. नादिरशाह ने लाहौर पर अधिकार कर लिया और करनाल में मुहम्मदशाह को पराजित कर दिया। बादशाह ने उसकी अधीनता स्वीकार कर ली [और नादिर के साथ दिल्ली चला गया। दिल्ली में हिन्दुओं ने अनेक फारसियों को मार डाला; इसके फलस्वरूप, हिन्दुओं का बड़े पैमाने पर क़त्लेआम किया गया; नादिर की लूट-खसोट तथा हिंसा की भयंकर कार्रवाइयां।

१७४०. सोने-चांदी और हीरे-जवाहरात से लदा नादिर घर [लौट गया], मुगल साम्राज्य को वह टूटता हुआ छोड़ गया। इसी वर्ष मराठों ने फिर हमला शुरू कर दिया; पेशवा बाजीराव की मृत्यु हो गयी और उसकी गद्दी पर उसका पुत्र बालाजी राव बैठा।

१७४१. बालाजी राव ने मालवे पर चढ़ाई कर दी और दिल्ली के दरबार में फिर मांग करने लगा; बादशाह ने उसे मालवा दे दिया; मालवा रघुजी गौं का था जिसने विद्रोह कर दिया था।

१७४४. बालाजी ने रघुजी को हरा दिया, उसे खदेड़ कर भगा दिया, और फिर सतारा वापिस लौट आया।

१७४४.[1] अहमद खां दुर्रानी का पहला आक्रमण। नादिरशाह की हत्या कर दी गयी; अब्दाली, अथवा (जैसा कि बाद में उसे कहा जाने लगा था) दुर्रानी के अफगानी कबीले ने अहमद खाँ के नेतृत्व में पंजाब पर कब्जा कर लिया; मुहम्मद के बेटे अहमदशाह ने उसे हरा दिया।

१७४८ आसफ़जाह की मृत्यु हो गयी, मुहम्मदशाह की भी मृत्यु हो गयी; उसकी जगह उसका पुत्र अहमदशाह गद्दी पर बैठा।

१७४९. राजा शाहू की मृत्यु हो गयी; बालाजी ने बड़े राजाराम और उनकी पत्नी ताराबाई के पोते राजाराम को गद्दी पर बैठा दिया।

(५) १७४८-१७५४ अहमदशाह। जल्दी ही रुहेलों के साथ, जो कि अवध [के आस-पास के इलाके के] अफगान थे, उसके झगड़े शुरू हो गये। (रुहेले) एक अफगानी कबीले के लोग थे जो काबुल से आये थे—लगता है कि पहले वे उत्तर-पश्चिमी हिमालय की तरफ गये थे, जिसका नाम रुहेलों का हिमालय पड़ गया था। फिर १७वीं शताब्दी के उत्तरार्ध में वे घाघरा और गंगा के बीच, दिल्ली के उत्तर-पूर्वी भाग में बस गये थे; इस भाग का नाम उन्होंने रुहेलखण्ड कर दिया था।) वह उनका सामना नहीं कर पाया, वे बढ़ते हुए इलाहाबाद पहुंच गये और उनके खिलाफ मदद के लिए वहाँ के वजीर, सफदरजंग ने मराठों को बुला लिया; मराठों ने [रुहेलों को] वहाँ से निकाल बाहर किया, और उनकी सहायता के एवज में मराठा नेताओं, सिंधिया और होल्कर को पुरस्कार-स्वरूप जागीरें दी गयीं।

१७५३.[2] अहमद खां दुर्रानी का पंजाब पर द्वितीय आक्रमण; वह चुपचाप उसको दे दिया गया। उसने शाह की पदवी धारण कर ली।

१७५४. गाजिउद्दीन ने—आसफजाह के सबसे बड़े बेटे [के बेटे] ने—जिसके साथ महान् मुगल सम्राट ने झगड़ा कर लिया था, उसे गिरफ्तार कर लिया, उसकी आँखें निकलवा लीं, उसे गद्दी से उतार दिया, और शाही खानदान के एक शाहजादे को—

(६) १७५४-१७५९.—में, आलमगीर द्वितीय के नाम से [शाहंशाह] घोषित कर दिया (औरंगजेब अपने को आलमगीर प्रथम कहता था), खुद अपने-

---

1 एल्फिन्स्टन के अनुसार, १७४८।
2 एल्फिन्स्टन के अनुसार, १७५१।

आप को ग़ाज़िउद्दीन ने उनका मंत्री बना लिया; ग़ाज़िउद्दीन बहुत ही घृणित ढंग से शासन करता था, लोगों ने कई बार उसकी हत्या करने की कोशिश की, इसी वज़ीर ने—

१७५६—में, धोखे से अहमदशाह दुर्रानी [द्वारा नियुक्त किये गये पंजाब के गवर्नर] के बेटे को गिरफ्तार कर लिया, अहमदशाह दुर्रानी दिल्ली आया, उसे उसने लूट डाला, और जब वह लाहौर वापिस लौट गया तो—

१७५७—में, ग़ाज़ी ने मराठों को बुला भेजा, और उनकी सहायता से दिल्ली पर फिर अधिकार कर लिया।

१७५८. मराठा नेता, राघोबा ने अहमदशाह दुर्रानी से पंजाब छीन लिया और ग़ाज़िउद्दीन के साथ मिलकर सम्पूर्ण हिन्दुस्तान को मराठों के शासन के अन्तर्गत लाने की साजिश रची।

१७५९. ग़ाज़िउद्दीन ने **आलमगीर द्वितीय की** हत्या कर दी—कुछ भी वास्तविक सत्ता रखने वाला यही अन्तिम मुगल सम्राट था।

१७६०. एक मराठा सरदार, **सदाशिव भाऊ** ने, जो उस समय पेशवा की सेनाओं का सेनानायक था (दिल्ली पर अधिकार करने के लिए व्यापक तैयारियाँ पूरी कर लेने के बाद उत्तर की तरफ कूच कर दिया) दिल्ली **पर क़ब्ज़ा कर लिया। अहमदशाह दुर्रानी** के नेतृत्व में **अफ़ग़ान** [रुहेले] नेता फौरन घोर वर्षा ऋतु में यमुना पार करके उधर पहुंच गये, दूसरी तरफ, **सदाशिव भाऊ** ने पानीपत में ज़बर्दस्त मोर्चा लगा दिया; आक्रमणकारियों की दोनों विशाल वाहिनियाँ एक दूसरे के सामने आ डटीं, उनमें से हर एक भारत की राजधानी को पनाह करने के लिए दृढ़-संकल्प थी।

६ जनवरी, १७६१. पानीपत **का** तीसरा **युद्ध**। मराठा नेताओं ने इस दिन सदाशिव भाऊ को सूचित किया कि या तो वह फौरन **युद्ध छेड़ दे** या फिर मराठे उसे छोड़ कर चले जायेंगे। (इस समय तक दोनों सेनाएँ क़िलाबन्दी करके आमने-सामने अपने-अपने शिविरों में पड़ी हुई थीं, वे लगातार एक-दूसरे को परेशान करती थीं और एक दूसरे की रसद सप्लाई काटने की कोशिश करती थीं; भूख और बीमारी की वजह से मराठों को भारी नुकसान उठाना पड़ रहा था।) सदाशिव ने स्पष्टीन के लिए कूच कर दिया; **भयंकर युद्ध** हुआ; मराठे क़रीब-क़रीब जीत ही गये थे, किन्तु तभी अहमदशाह दुर्रानी ने **खुद** अपने सैनिकों को हमला करने का आदेश दे दिया और साथ ही साथ थके शत्रु के अपने सिपाहियों से मराठों के

दाहिने बाजू को छोड़ कर निकल जाने और फिर उस पर आक्रमण करने के लिए कहा। यह चाल निर्णायक [सिद्ध हुई]। मराठे तितर-बितर होकर भाग खड़े हुए, उनकी सेना करीब-करीब काट डाली गयी; (लगता है कि) रणभूमि में उनके दो लाख सैनिक मारे गये थे, जो शेष बचे थे वे नर्वदा की तरफ लौट गये। अहमदशाह की सेना भी इस युद्ध में इतनी बुरी तरह से छिन्न-भिन्न हो गयी थी कि अपनी विजय का फल चखे बिना ही वह पंजाब वापिस चला गया।

दिल्ली खाली पड़ी थी; उस पर शासन करने वाला कोई नहीं था; आस-पास की तमाम सरकारें छिन्न-भिन्न हो गयी थीं, इस चोट के बाद मराठे फिर कभी न उठ सके।

पानीपत के युद्ध के बाद देश की अवस्था

मुगल साम्राज्य का अन्त हो गया, नाममात्र का शाहंशाह अली गौहर बिहार में इधर उधर भटक रहा था—मराठों का पेशवा, बालाजी राव दुःख से मर गया; उसकी सत्ता चार बड़े-बड़े सरदारों : गुजरात के गायकवाड़, नागपुर के राजा (भोंसले), होल्कर, और सिंधिया के बीच बँट गयी। हैदराबाद में निजाम स्वतन्त्र राजा बन गया, किन्तु उसकी शक्ति नुकसान होने की वजह से क्षीण होती गयी, उसको सरक्षण देने की जो फ्रान्सीसी नीति थी उसने भी उसकी शक्ति को कमजोर कर दिया।

१७६१ में, जिस साल पानीपत का युद्ध हुआ था, अंग्रेजों ने फ्रान्सीसियों को दक्षिणी भारत से निकाल बाहर किया था; १६ जनवरी, १७६१ को पांडिचेरी को, जिसे कूटे ने घेर लिया था, फ्रान्सीसियों ने छोड़ दिया, कूटे ने उसके किले को तोड़वा दिया; इस प्रकार, भारत में फ्रांसीसी सत्ता के प्रत्येक चिन्ह तक को नष्ट कर दिया गया।

कर्नाटक का नवाब पूरे तौर से मद्रास के अंग्रेज गवर्नर की कृपा पर निर्भर करता था; अवध का नवाब स्वतन्त्र हो गया था, उसके पास लम्बे चौड़े इलाके और एक अच्छी सेना थी; राजपूत बहुत अच्छे सैनिक थे, किन्तु वे इधर उधर बिखर गये थे; एक संयुक्त राजपूत राज्य की बात तो सुनी ही नहीं गयी थी; जाटों और रुहेलों की शक्ति काफी बढ़ गयी, बाद में भारतीय इतिहास में उन्होंने काफी बड़ी भूमिका अदा की—मैसूर में हैदर अली की बड़ी ताकत थी, अंग्रेजों ने उसके साथ जल्दी ही सम्पर्क

स्थापित कर लिया।—सम्भवतः अब तक अंग्रेजों की शक्ति भारत में सबसे बड़ी शक्ति बन गयी थी, दो बड़े-बड़े राज्यों के राजाओं की नियुक्ति वे इससे पहले ही कर चुके थे—बंगाल, बिहार और उड़ीसा की सूबेदारी के शासक की और कर्नाटक के नवाब की; इसके बाद ही, उनके सहयोगी, निजाम अली ने अपने भाई, दक्षिण के सूबेदार को कैद कर लिया और उसकी गद्दी छीन ली; इस प्रकार, सम्पूर्ण दक्षिणी भारत ब्रिटिश प्रभाव के अन्तर्गत आ गया। (देखिये, पृष्ठ ६४)[1] (आगे, पृष्ठ ८१ पर देखिये)[2]

. . . .

[भारत पर होने वाले विदेशी आक्रमणों का सर्वेक्षण]

३३१ ई० पूर्व दारियस कोडोमैनस को कुर्दिस्तान के पर्वतों के समीप, अर्बेला के युद्ध में, अलेक्जेण्डर मैगनस (सिकन्दर महान्) ने अन्त में हरा दिया।

३२७ ई० पूर्व सिकन्दर ने अफगानिस्तान को अधीन बना लिया, फिर सिन्धु नदी को पारकर तक्षशिला नाम के प्रदेश में वह घुस गया, उसके राजा ने, कन्नौज में सारे हिन्दुस्तान पर शासन करने वाले महान् राजा पोरस अथवा पुरु के विरुद्ध, सिकन्दर के साथ मेल कर लिया।

३२६ ई० पूर्व. पोरस ने झेलम अथवा वितस्ता के पूर्वी तट पर सिकन्दर का मुकाबला किया; उसी लड़ाई में हिन्दू हार गये; किन्तु सिकन्दर की सेना भारत में और आगे बढ़ने के लिये तैयार नहीं थी, इसलिए अपनी सम्पूर्ण सेना को नावों की एक विशाल संख्या पर बैठाकर सिन्धु नदी के पास पहुँचने के लिए सिकन्दर झेलम में उतर पड़ा; रास्ते में सख्त लड़ाइयां लड़ने के बाद वह सिन्धु नदी के मुहाने पर पहुँच गया और अपनी सेना को उसने दो

---

१ जिस उद्धरण का उल्लेख किया जा रहा है वह ११३-११७ पृष्ठों पर दिया गया है।

२ यहाँ पर, कालक्रम के अनुसार तैयार की गयी अपनी टिप्पणियों के बाद, मार्क्स ने कोवालेवस्की की रचना का सारांश दिया है; उनके अध्यायों को उन्होंने निम्न नाम दिये हैं: (१) मुसलमान शासन के अन्तर्गत भारत की भूमि व्यवस्था के सामन्तीकरण की क्रिया (पृष्ठ १२-१३), (२) ब्रिटिश आधिपत्य और भारत की सामुदायिक सम्पत्ति पर उसका प्रभाव (पृष्ठ १८-२६) इन दो अध्यायों के बाद कोवालेवस्की की रचना के अन्तर्गत में सर्वाधिक दो अन्तिम अध्याय आते हैं। कालक्रम के अनुसार तैयार की गयी टिप्पणियाँ मार्क्स की ओर बढ़ के पेज ८४ से फिर शुरू हो जाती है।

भागो मे विभक्त कर दिया । एक भाग को नियारकस के नेतृत्व मे सौंपकर उसने उसे आदेश दिया कि वह फ़ारस की खाड़ी से आगे बढ़े; दूसरे भाग को लेकर सिकन्दर स्वय स्थल मार्ग से लौट गया। मुसलमानों के आने से पहले यह भारत का अन्तिम आक्रमण था ।[1]

हिन्दुस्तान के पुराने राज्यो मे से बंगाल के राज्य को मुसलमानो (गोर-वंश, शहाबुद्दीन) ने सन् १२०३ मे, जब कि वह छठे, अथवा सेन वंश के शासन मे था, नष्ट कर दिया था ।

१२३१ मालवा राज्य को मुसलमानो ने (दिल्ली के एक गुलाम बादशाह, शमशुद्दीन इल्तुतमिश ने) नष्ट कर दिया ।

१२९७. गुजरात राज्य को मुसलमानो ने (अलाउद्दीन ख़िलजी ने) नष्ट कर दिया, उसके राजा राजपूत थे, किम्वदन्ती के अनुसार, इस राज्य की स्थापना कृष्ण ने की थी ।

११९३. कन्नौज राज्य को (जो १०१७ मे, जब महमूद गज़नवी ने उसकी राजधानी पर अधिकार किया था, अत्यन्त धन-धान्यपूर्ण था, ग़यासुद्दीन के भाई—गोर वश के—शहाव ने (नष्ट कर दिया और उसकी राजधानी को लूट डाला । वहा का राजा शिवाज भागकर मारवाड मे जोधपुर चला गया और वहाँ उसने एक राजपूत राज्य की, स्थापना की जो अब सबसे सम्पन्न राज्यो में से है ।

१०५०. दिल्ली राज्य को, जो उस समय अत्यन्त महत्वहीन था, अजमेर के, राजा, बीसल, ने फतह कर लिया ।

११९२. अजमेर राज्य को जो महत्वहीन था, और दिल्ली को, जो उसके ऊपर निर्भर करता था, मुसलमानो ने (गोरवश के ग़यासुद्दीन के मातहत) उलट दिया । मेवाड़, जैसलमेर तथा जयपुर के पुराने राज्य अब भी मौजूद थे; मेवाड़ का राजवंश हिन्दुस्तान का सबसे पुराना राजवश है ।

१२०५. सिन्ध मुसलमानों के हाथ मे आ गया, उसे शहाबुद्दीन ग़ोरी ने फतह कर लिया (३२५ [ई० पूर्व] मे, सिकन्दर महान् के जमाने मे, यह एक स्वतत्र राज्य था, बाद मे बँट गया और फिर मिलकर एक हो गया;

---

[1] यह कथन एलफिन्स्टन का है जिसे यो ही उद्धृत कर लिया गया है, स्पष्ट है कि ईसा पूर्व चौथी शताब्दी से ईसा के बाद की सातवी शताब्दी तक के बीच यूथियो, शको, हूणो तथा अन्य कबीलो द्वारा भारत पर किये जाने वाले आक्रमणो के विषय मे एलफिन्स्टन को कोई जानकारी नही थी ।

७११ में उस पर मुसलमानों ने आक्रमण कर दिया, वहाँ के राजपूत नेता ने सुमेर जाति का नेतृत्व करते हुए उनको मार भगाया) ।

१०१५. कश्मीर महमूद ग़ज़नवी के हाथों में चला गया (मगध के राज्य की कहानी अत्यन्त रोचक थी। उसके बौद्ध राजाओं की सत्ता दूर-दूर तक फैली हुई थी; अनेक वर्षों तक ये राजा क्षत्री वंश के थे, किन्तु फिर शूद्र जाति के। मनु की वर्ण-व्यवस्था के चतुर्थ तथा सबसे नीचे के वर्ण के—एक व्यक्ति ने—जिसका नाम चन्द्रगुप्त था—यूनानियों ने उसे सैन्ड्राकुट्टस (शशिगुप्त) कहा है—राजा की हत्या कर दी और स्वयं सम्राट बन बैठा; उसका समय सिकन्दर महान् का समय था। बाद मे, हमे तीन और शूद्र राजवंश देखने को मिलते है जिनकी सन् ४३६ मे संयुक्त आन्ध्र की स्थापना के साथ समाप्ति हो गयी। मालवा का एक राजा विक्रमादित्य था; उसके नाम पर अब भी हिन्दू सम्वत् चलता है, वह ईसा पूर्व ५८ मे राज्य करता था)।

... ...

दक्षिण के पुराने राज्य : दक्षिण मे पाँच भाषाएँ है (१) तमिल, यह द्रविड़ देश मे, अर्थात धुर दक्षिण मे, बंगलौर से लेकर कोयम्बटूर और कालीकट तक के नीचे के इलाके मे बोली जाती है; (२) कन्नड़, यह तेलगू की एक उप-भाषा है, उत्तर और दक्षिण कनारा मे बोली जाती है, (३) तेलगू, मैसूर तथा उत्तर के इलाकों मे बोली जाती है; (४) मराठी, यह देवनागरी लिपि मे लिखी जाती है और इसके क्षेत्र की निम्न सीमाएँ हैं: उत्तर में सतपुड़ा की पर्वतमाला; दक्षिण मे तेलंगाना कहलाने वाला तेलगू प्रदेश; पूर्व मे वर्धा नदी; पश्चिम मे पर्वतमाला; (५) उड़िया, एक अनगढ़ उप-भाषा है जो उड़ीसा मे बोली जाती है। उड़ीसा और मराठा प्रदेश के बीच के इलाके मे गोंड़ रहते है जो एक अनगढ़ स्थानीय भाषा बोलते है।

रामायण मे अवध के राजा, राम के पराक्रम की प्रशंसा की गई है; उनका समय ई० पूर्व १४०० माना जाता है, उस महाकाव्य के अनुसार, राम हिन्दुओं के विजयी नेता थे जिन्होंने दक्षिण और लंका को जीता था; उस पौराणिक आक्रमण के समय मे हिन्दुओं को दक्षिण मे अनेक सभ्य जातियाँ मिली थी, तमिल भाषा बोलने वाले तमिल मिले थे और तेलंगों के देश मे अन्य लोग मिले थे जिनकी मातृभाषा तेलगू थी। सबसे पुराने राज्य तमिल लोगों के थे।

ईसा पूर्व, पाँचवी शताब्दी के लगभग, पांड्य नाम के एक गड़रिया राजा ने पाड्य राज्य की स्थापना की थी, यह छोटा-सा राज्य था; इसकी राजधानी मदुरा का प्राचीन नगर थी और उसके प्रदेश मे कर्नाटक के धुर दक्षिण के मदुरा तथा तिन्नेवली के वर्तमान जिले आते थे; सन् १७३६ तक यह स्वतत्र बना रहा था, उस वर्ष अर्काट के नवाब ने उसे जीत लिया था।

चोल, जहाँ तमिल भाषा बोली जाती थी, राजधानी कन्जीवरम् थी। ईसा सन् १६७८ मे, एक मराठा सरदार वेन्कोजी ने राजा को हटा दिया था और तंजोर के वर्तमान राजाओं के वंश का पहला राजा बन गया था।

चेर, एक छोटा-सा राज्य था जिसमे त्रावन्कोर, कोयम्बटूर तथा मलबार का एक भाग शामिल था।

केरल, हिन्दुस्तान के ब्राह्मणों ने इसे उपनिवेश बना लिया था, उसी जाति का एक अभिजात वर्ग उसका शासन करता था, इसमे मलबार तथा कनारा शामिल थे, धीरे-धीरे यह गुटो मे बट गया और टुकड़े-टुकडे हो गया; मलबार पर जमोरिनों (कालीकट के राजाओ) का अधिकार हो गया, और कनारा पर विजयनगर के राजाओ ने कब्ज़ा कर लिया।

कर्नाट, प्राचीनतम् विवरणो मे उल्लेख मिलता है कि यह पांड्य तथा चेर राजाओ के बीच [बँटा हुआ था]। इसमें एक बडा और शक्तिशाली वश था, बलाला के राजाओ का, (अलाउद्दीन खिलजी के नेतृत्व मे मुसलमानो ने १३१० मे इस वंश का अन्त कर दिया था)।

यादव लोग, इनका उल्लेख मात्र है, इनके रहने का स्थान अज्ञात है, इनके विषय मे कुछ नही मालूम।

कर्नाट के चालुक्य, कल्याण मे, बीदर के पश्चिम की ओर, रहने वाला यह एक राजपूत वश था; इसी वश की एक अन्य शाखा मे आते थे--

कलिंग के चालुक्य; पूर्वी तेलंगाना के एक इलाके पर, जो समुद्र तट के किनारे-किनारे उड़ीसा के सीमान्तों तक फैला हुआ था, वे राज्य करते थे; उन्हे कटक के राजाओं ने गद्दी से हटाया था।

आन्ध्र, राजधानी वारंगल थी, ४०० से अधिक वर्षों तक कई राजवश (इनमे से एक वश के लोगो, गणपति राजाओं ने बहुत प्रसिद्धि प्राप्त की थी) राज्य करते रहे थे और १३३२ मे (मुहम्मद तुगलक के नेतृत्व मे) मुसलमानो ने उनके राज्य का अन्त कर दिया था।

उड़ीसा, *इस राज्य का प्रथम उल्लेख महाभारत मे मिलता है; सबसे पुरानी प्रामाणिक तिथि ईसवी सन् ४७३ है (यवन वश द्वारा आक्रमणकारी*

"यवनों"[१] को तभी बाहर निकाल बाहर किया गया था)। "पंतीस केसरी" राजा एक के बाद एक होते गये थे, फिर ११३१ में, गंगवंश ने इस वंश को सिंहासनाच्युत कर दिया; गंग वंश १५५० तक सिंहासनारूढ रहा, तब राज्य पर मुसलमानों ने (सलीमशाह सूर—जलाल खाँ के नेतृत्व में, देखिए पृष्ठ ३५-३६) कब्ज़ा कर लिया।

अन्त में, पेरिप्लस के यूनानी लेखक ने दो तटवर्ती महान् नगरों, तगाड़ा और प्लियाना का महत्वपूर्ण व्यापार-मंडियों के रूप में उल्लेख किया है; उनके बारे में कुछ ज्ञात नहीं है, वे गोदावरी नदी के समीप कहीं स्थित थे।

हिन्दुस्तान में "प्राचीन" की जानकारी के लिए हस्तिनापुरम् (वह छोटा-सा राज्य जिसको लेकर वह युद्ध लड़ा गया था जिसका भारतीय इलियड, महाभारत [में वर्णन किया गया है] का भी विवरण देखिए; प्राचीन धार्मिक नगर मथुरा तथा पांचाल (पृष्ठ ६)[२] थे।

[ब्रिटिश ईस्ट इंडिया कम्पनी द्वारा भारत की विजय]

(१) बंगाल में ईस्ट इंडिया कम्पनी, १७२५-१७५५

(महान् मुगल : मुहम्मदशाह, १७१९–१७४८;
अहमदशाह, १७४८–१७५४)

१७२५ बंगाल, बिहार और उड़ीसा के सूबेदार और बंगाल के दीवान (मालगुजारी वसूल करने वाले), मुर्शिद कुली खाँ की मृत्यु। बंगाल और उड़ीसा में उसका स्थान उसके बेटे शुजाउद्दीन ने लिया।

१७२६. हुगली में उस समय कलकत्ते में अंग्रेज, चन्द्रनगर में फ्रान्सीसी, चिनसुरा में डच व्यापार कर रहे थे और जर्मन सम्राट द्वारा कायम की गयी ओस्टेण्ड ईस्ट इण्डिया कम्पनी ने बाँकी बाजार के गांव में [एक फैक्टरी] स्थापित की थी। दूसरी कम्पनियों ने मिलकर हमला कर दिया और अनधिकृत व्यापारियों[1] को बंगाल से निकाल बाहर किया। उसी साल (जॉर्ज प्रथम के शासनकाल में) प्रत्येक प्रेसीडेन्सी शहर में मेयर की अदालतें कायम कर दी गयी थीं, भारत में अंग्रेजों के सामान्य तथा लिखित क़ानूनों के विस्तार के सम्बन्ध में—तथा अंग्रेजी भाषा के सम्बन्ध में—और अधिक जानकारी के लिए पृष्ठ ७९ देखिए।

१७३०. इंगलैंड में मुक्त व्यापार के सिद्धान्तों के आधार पर एक नयी सोसायटी बनी, ईस्ट इण्डिया में व्यापार करने के लिए पार्लामेन्ट से उसने पट्टे की प्रार्थना की, उसी समय पुरानी ईस्ट इन्डिया कम्पनी ने प्रार्थना की कि उसकी इजारेदारी की सनद की मियाद बढ़ा दी जाय, क्योंकि उसके संस्थापन का काल पूरा हो गया था; पार्लामेन्ट में जमकर बहसें हुईं,

---

[1] वे व्यापारी जो भारत के साथ अपने-आप व्यापार करते थे और इस तरह ईस्ट इण्डिया कम्पनी की इजारेदारी में दखल देते थे।

पुरानी इजारेदार कम्पनी जीत गयी; उसके अधिकार-पत्र की मियाद को १७६६ तक के लिए बढ़ा दिया गया।

१७४०.[1] सूबेदार सुजाउद्दीन की मृत्यु हो गयी, उसका स्थान बिहार के गवर्नर (शासक), अलीवर्दी खाँ ने लिया; इस तरह उसने बंगाल, बिहार और उड़ीसा के तीनों सूबों को फिर एक कर लिया; उस पर—

१७४१—में, मराठों ने हमला कर दिया, मुर्शिदाबाद में उन्होंने फैक्टरी लूट ली, इत्यादि (पृष्ठ ७९-८०)। इसके फलस्वरूप, अंग्रेजों ने—

१७४२—में, अलीवर्दी खाँ से प्रसिद्ध मराठा खाई बनाने की अनुमति प्राप्त कर ली।

१७५१ मराठों को अलीवर्दी खाँ ने ले-देकर मिला लिया, वे दक्षिण की ओर वापिस चले गये। इसके बाद में, १७५५ तक, हुगली के तट पर बनी अंग्रेजों की कोठियाँ शान्तिपूर्वक अपना काम करती रहीं। (मराठा काण्ड के सम्बन्ध में पृष्ठ ७९-८० देखिए)।

. . . .

(२) कर्नाटक में फ्रान्सीसियों के साथ युद्ध, १७४४-१७६०

१७४४ योरोप में इंगलैण्ड और फ्रान्स के बीच महायुद्ध की घोषणा हो गयी; मद्रास प्रेसीडेन्सी में अंग्रेज सैनिकों की संख्या केवल ६०० थी; पांडिचेरी तथा इले द' फ्रान्स[2] में लाबूर्दोने के मातहत फ्रान्सीसी सिपाहियों की अधिक बड़ी संख्या थी।

२० सितम्बर, १७४६. लाबूर्दोने ने मद्रास पर कब्ज़ा कर लिया; उसने न तो अंग्रेज व्यापारियों को बन्दी बनाया, न उनको व्यक्तिगत रूप में कोई चोट पहुंचायी; इसकी वजह से उसका प्रतिद्वन्द्वी डूप्ले, पांडिचेरी का गवर्नर, नाराज हो गया (यह आदमी फ्रान्सीसी ईस्ट इण्डिया कम्पनी के एक डायरेक्टर का लड़का था)। १७३० में वह हुगली के तट पर स्थित चन्द्रनगर की एक बड़ी फ्रान्सीसी फैक्टरी का शासक था; १७४२ में पांडिचेरी का गवर्नर बना दिया गया। लाबूर्दोने के साथ उसकी प्रतिद्वन्द्विता का अन्त भारत में फ्रान्सीसियों के अधःपतन के रूप में हुआ।

---

१ कॉल के अनुसार, १७३९।

२ मारीशस का पुराना नाम।

एक तूफ़ान की वजह से लाबूर्दोने की कमान का जहाजी बेड़ा नष्ट हो गया था; डूप्ले ने उसे कोई मदद नहीं भेजी। लाबूर्दोने को अंग्रेजों ने बन्दी बना लिया। फ्रान्स लौटने पर, बेस्तील के अन्दर १७४९ में उसकी मृत्यु हो गयी (१७३५ में, उसे इले द' फ्रान्स तथा बोर्बन[1] का गवर्नर बना कर भेजा गया था और १७४१ में, उसकी मियाद पूरी हो जाने पर, नौ जहाजों के एक बेड़े का कमान्डर बनाकर अंग्रेजों के व्यापार को नुकसान पहुंचाने के लिए उसे भारत भेज दिया गया था; १७४४ में युद्ध की घोषणा हो जाने के बाद, फ्रान्सीसी बेडे की कमान संभालने के लिए वह दक्षिण चला गया)।

१७४६. दक्षिण में विभिन्न दलों की स्थिति। महान मुगल मुहम्मदशाह (१७१९-१७४८) के मातहत आसफ़जाह, उर्फ निज़ामुल्मुल्क, दक्षिण का सूबेदार था। निज़ामों के राजवंश की स्थापना उसी ने की थी, वह हैदराबाद में रहता था। उसी की मेहरबानी से कर्नाटक के बालक पुश्तैनी नवाब की मृत्यु पर १७४० में अनवरुद्दीन कर्नाटक का नवाब बन गया। आसफ़जाह ने उसे इससे पहले कर्नाटक के नवाब का संरक्षक नियुक्त कर दिया था। कर्नाटक के भूतपूर्व नवाब, दोस्त अली की बेटी से शादी करके, चांदा साहेब त्रिचनापल्ली का गवर्नर बन गया था, १७४१ में मराठों ने उसे वहाँ से भगा दिया और तब वह भागकर फ्रान्सीसियों के पास मद्रास चला गया था।

१७४६. अनवरुद्दीन (कर्नाटक का नवाब) ने १० हजार सिपाहियों के साथ मद्रास पर हमला कर दिया, जहाँ डूप्ले फ्रान्सीसी सैनिकों का प्रधान था। डूप्ले के नेतृत्व में लगभग एक हज़ार फ्रान्सीसियों ने नवाब को खदेड़ दिया, फिर शहर को लूट डाला, कई [अंग्रेजों की] फैक्ट्रियों को जला दिया और अधिक प्रमुख अंग्रेज़ निवासियों को वहाँ से हटाकर उन्होंने पाण्डिचेरी भेज दिया।

१९ दिसम्बर। डूप्ले ने मद्रास के दक्षिण में १२ मील के फासले पर स्थित सेण्ट डेविड के किले पर १७०० सिपाहियों के साथ लड़ाई कर दी (वहाँ पर अंग्रेजों के गैरीसन में २०० दुर्ग-रक्षक थे); किन्तु अनवरुद्दीन ने घेरा डाले हुए फ्रान्सीसी सैनिकों पर हमला कर दिया और उन्हें पाण्डिचेरी वापिस जाने के लिए मजबूर कर दिया।

---

[1] रीयूनियन का पुराना नाम।

१७४७. डूप्ले ने अनवरुद्दीन को अपनी तरफ मिला लिया; मार्च में उसने सेण्ट डेविड के किले पर फिर हमला कर दिया, [किन्तु] कैप्टन पेटन के नेतृत्व में अंग्रेजों के जहाजी बेड़े को आता देखकर वह वहाँ से हट गया; कैप्टन पेटन ने गैरीसन की मदद के लिए किले में और सैनिक छोड़ दिये।

जून, १७४७. इगलैण्ड से जहाजी बेड़े को लेकर एडमिरल बोसकेविन तथा एडमिरल ग्रिफिन मद्रास पहुँच गये, इससे दक्षिण में ब्रिटिश सेना की शक्ति बढ़कर ४,००० हो गयी। अंग्रेजों ने पांडिचेरी को घेर लिया, [किन्तु] वहाँ से उन्हें खाली हाथ लौटना पड़ा।

४ अक्तूबर, १७४८. आसॅन की सन्धि की खबर आयी; डूप्ले ने मद्रास अंग्रेजों को वापिस दे दिया। तंजोर के मराठा राजा शाहूजी ने, जो शाहजी (शिवाजी के पिता) के वंश में पाँचवाँ था तथा जिसकी जागीर [तंजोर में] थी, अपने छोटे भाई प्रताप सिंह के विरुद्ध अंग्रेजों से सहायता की प्रार्थना की। प्रताप सिंह ने उससे सत्ता छीन ली थी। उसके विद्रोह का [केन्द्र] कोलेरून के मुहाने पर स्थित देवीकोटा का मजबूत अड्डा था।

१७४७.[1] शाहू जी ने अंग्रेजों से वादा कर दिया कि अगर वे उस मजबूत अड्डे को फतह कर लेंगे तो उसे वह उन्हीं को दे देगा। मेजर लारेन्स ने, जिसके नीचे एक नौजवान अफसर के रूप में क्लाइव भी काम करता था, उस पर कब्जा कर लिया; इस तरह देवीकोटा अंग्रेजों का हो गया। किन्तु प्रताप सिंह ने अन्त में शाहू जी को राजगद्दी छोड़ने के लिए मजबूर कर दिया; उसने उसे ५० हजार रुपया सालाना देने का वादा किया।

१७४८. दक्षिण के सूबेदार, निजामुल्मुल्क की मृत्यु हो गयी; उसके स्थान पर उसका बेटा नासिरजंग गद्दी पर बैठा; उसके एक निष्क्रिय बड़े भाई, मुजफ्फरजंग के बेटे ने कहा कि गद्दी का हकदार वह है। दोनों के बीच लड़ाई छिड़ गयी।

१७४९. अंग्रेजों और फ्रान्सीसियों के बीच नया युद्ध। मुजफ्फरजंग ने फ्रान्सीसियों से मदद मांगी और वह उसे प्राप्त हो गयी। उसने चांदा साहब से भी सहायता करने के लिए कहा और उससे वादा किया कि फ्रांसीसियों की जीत में अगर वह उसकी मदद करेगा तो वह उसे कर्नाटक का नवाब बना देगा।—दूसरी तरफ नासिरजंग (निजाम) के साथ अंग्रेज और अनवरुद्दीन (कर्नाटक का नवाब) थे।—अनवरुद्दीन पहली ही टक्कर में मारा गया, और उसके सिपाही त्रिचनापल्ली की तरफ भाग गये; किन्तु

१ बर्गेस के कथनानुसार, १७४९।

वेतन के प्रश्न पर फ्रान्सीसी सेना में बगावत हो गयी, इसकी वजह से डूप्ले मुसीबत में पड़ गया; नासिरजंग आगे बढ़ा, मुजफ्फरजंग हार गया और बन्दी बना लिया गया, किन्तु चाँदा साहेब अपनी जान पर खेलकर लड़ता हुआ पाडिचेरी की तरफ निकल गया। विजय के बाद नासिरजंग ने अर्काट में खूब खुशियाँ मनायी। अंग्रेज मद्रास वापिस चले गये।

१७५०. अनवरुद्दीन का बेटा, मुहम्मद अली उसकी जगह पर कर्नाटक का नवाब बना, इस आदमी को यह पद अंग्रेजो ने दिलाया था, इसलिए खुशी-खुशी वह उनका गुलाम बना रहा। इसी वजह से उसे लोग तिरस्कारपूर्वक *"कम्पनी का नवाब"* कहते थे।—*डूप्ले ने उसी साल विजयी* चढ़ाई करके जिंजी, मछलीपट्टम् और त्रिवाड़ी के दुर्गों पर कब्जा कर लिया; मुहम्मद अली को उसने हरा दिया। उसके उकसावे पर, कुछ गद्दारों, पठान नवाबों ने, जो निजाम (नासिरजंग) के साथ थे, उसे [निज़ाम को] मार दिया, उसकी जगह उसका भतीजा मुज़फ्फरजंग (फ्रान्सीसियों का मित्र) सूबेदार बना। उसने डूप्ले को कर्नाटक का नवाब और चाँदा साहेब को अर्काट का नवाब बना दिया; किन्तु—

४ जनवरी, १७५१—के दिन, जिस समय वह नौकरों-चाकरों की एक बड़ी *सेना लेकर हैदराबाद राज्य में यात्रा कर रहा था, उन्हीं पठान नवाबों ने* जिन्होंने नासिरजंग को मार डाला था, मुज़फ्फरजंग की भी हत्या कर दी। मुज़फ्फरजंग के अपनी कोई सन्तान नहीं थी, इसलिए नासिरजंग के बेटे ही असली वारिस हो सकते थे; बुसी ने जो फ्रान्सीसी सैनिक टुकड़ी का कमाण्डर था, [सूबेदार की] खाली जगह नासिरजंग के सबसे छोटे बेटे सलाबतजंग को दे दी। मुज़फ्फरजंग की हत्या के समय इसे छावनी में बन्दी बना कर डाल दिया गया था।

इसी बीच, चाँदा साहेब ने, अर्काट से चढ़ाई करके, अपनी पुरानी राजधानी त्रिचनापल्ली पर हमला कर दिया; किन्तु कैप्टन क्लाइव ने अर्काट पर चढ़ाई करके उस पर जवाबी हमला कर दिया। क्लाइव ने अर्काट पर कब्जा कर लिया और उसे वहाँ से पकड़ कर पीछे हटने के लिए मजबूर कर दिया। ७ हफ्ते तक अर्काट को बेकार घेरे रहने के बाद चाँदा साहेब त्रिचनापल्ली लौट गया, वहाँ भी—

१७५२—में, क्लाइव ने उसका पीछा किया; वहाँ वह मुहम्मद अली और मेजर लारेन्स के साथ रहा; भगोड़े चाँदा साहेब को वहाँ पर अंग्रेजों के एक आश्रित व्यक्ति, तंजोर के राजा ने धोखे से मार डाला।

१७५३. अंग्रेजों के साथी मुहम्मद अली ने मैसूर के राजा से वादा किया था कि त्रिचनापल्ली वह उसको देगा, किन्तु अब वह अपना वादा पूरा करने में असमर्थ था, क्योंकि उस स्थान पर अंग्रेजों ने क़ब्ज़ा कर रखा था। डूप्ले ने इस स्थिति का फ़ायदा उठा कर मैसूर के राजा से और उसके ज़रिए, मुरारीराव के अधीन मराठों के साथ, दोस्ती [कर] ली।

मई, १७५३–अक्तूबर, १७५४. डूप्ले ने अपने दोस्तों के साथ त्रिचनापल्ली पर चढ़ाई कर दी; लारेंस और क्लाइव ने सफलता के साथ उसकी रक्षा की।

उसी साल (जॉर्ज द्वितीय के शासनकाल में), मेयर की अदालतें, जो १७४६ में लाबूर्दोने द्वारा मद्रास पर अधिकार कर लिये जाने के बाद से इस्तेमाल न होने की वजह से बेकार हो गयी थी, मद्रास में फिर से कायम कर दी गयी। योरोपियनों के तमाम मामलों के सम्बन्ध में तथा हिन्दुओं के तमाम मामलों के सम्बन्ध में भी फ़ैसला करने का अधिकार उन्हें मिल गया; किन्तु हिन्दुओं के सम्बन्ध में केवल उनकी रज़ामन्दी के आधार पर ही वे फ़ैसला कर सकती थी। उन लोगों को जो इस अदालत को मानने से इन्कार करते थे, स्पष्ट रूप से उसके शासन-क्षेत्र से अलग कर दिया गया था। "यह अधिकार-पत्र इस बात की पहली मिसाल है जो हमें मिली है जिसमें अपने क़ानूनों को हिन्दुस्तान की जनता पर लागू करने के सम्बन्ध में उन्होंने (अंग्रेजों ने—सं०) रोक लगा दी थी।" (फ्रेंड्री द्वारा रचित, उत्तराधिकार सम्बन्धी, हिन्दू क़ानून, प्रस्तावना, पृष्ठ ४४)।

१७५४. शान्ति; डूप्ले को वापिस बुला लिया गया (भारत में फ़्रान्सीसियों के पतन का यहीं से श्रीगणेश हुआ था)। इसकी वजह यह थी कि इस बात को लेकर १७५१ से ही योरप में झगड़ा चल रहा था कि कर्नाटक का नवाब किसको माना जाय : "कम्पनी के नवाब" मुहम्मद अली को, या पुश्तैनी सूबेदार द्वारा अधिकृत रूप से नियुक्त किये गये, डूप्ले को। अंग्रेज सरकार का कहना था कि कर्नाटक का नवाब मुहम्मद अली को बनाया जाना चाहिए क्योंकि वही पुराने नवाब का वारिस है, और क्योंकि साम्राज्य का महान् मुग़ल अहमद शाह (मृत्यु १७५४; उसके बाद आलमगीर द्वितीय, १७५४-१७५९ गद्दी पर बैठा था) ही एक खास फ़र्मान जारी करके उस पद को पुश्तैनी वारिसों से लेकर दूसरे किसी को दे सकता था। फ़्रान्स में डूप्ले के शत्रुओं ने उसके खिलाफ़ षड्यन्त्र रचा और यह अभियोग लगाया कि उसने "बहुत ज़्यादा खर्च" किया था। डूप्ले की

हटा कर गाडह्यू (१७५४) को नियुक्त किया गया। (कुछ वर्ष बाद अत्यधिक गरीबी की हालत में डूप्ले की फ्रांस में मृत्यु हो गयी; उन फ्रांसीसी पिल्लों की ईर्ष्या किन्हीं भी योग्य आदमियों को टिकने नहीं देती थी)।

२६ दिसम्बर, १७५४ गाडह्यू और सैन्डर्स (मद्रास के गवर्नर) के बीच सन्धि हो गयी; इसके द्वारा मुहम्मद अली को कर्नाटक का नवाब मान लिया गया।—इसी बीच बुसी, जो भारत में स्थित सारे फ्रान्सीसी नेताओं में सबसे चतुर था, दक्षिण में निज़ाम सलावतजंग के साथ औरंगाबाद पहुंच गया [था]; सूबेदारी के काम-काज को चलाने में वह वहाँ उसे सहायता दे रहा था। —उसी वर्ष—१७५४[1] में—सलावतजंग के ऊपर गाज़िउद्दीन खाँ (भूतपूर्व सूबेदार नासिरजंग के बड़े भाई) ने एक विशाल सेना के साथ, जिसमें मराठे भी थे, हमला कर दिया। बुसी ने उसे हरा दिया और गाज़िउद्दीन को ज़हर खिलवा दिया; फ्रान्सीसियों को उत्तरी सरकार[2] के इलाके देकर निज़ाम ने उसका शुक्रिया अदा किया।

१७५५. बुसी की सलाह के खिलाफ, सलावतजंग ने मैसूर के राजा पर हमला कर दिया। मैसूर के राजा ने चौथ देने से इन्कार कर दिया था (मैसूर का राजा, जो अभी तक फ्रान्सीसियों का मित्र था, अब अंग्रेज़ों के साथ मित्रता करने के लिए मजबूर हो गया था); सलावतजंग का हमला सफल हुआ; बहुत-सा रुपया और भेंटें देकर मैसूर के राजा सलावतजंग से सुलह कर ली। इसके बाद निज़ाम पेशवा, बालाजी राव के मातहत मराठों के साथ मिल गया और विद्रोही मराठा सरदार, मुरारीराव को उसने पराजित कर दिया।

१७४९-१७५६. मराठों का हाल। १७४९ में, राजा शाहू की पूना में मृत्यु हो गयी; उसके कोई सन्तान नहीं थी। पेशवा, बालाजी राव वास्तविक शासक बन गया; रक्त सम्बन्ध से जुड़े एकमात्र राजकुमार, राजाराम को [उसने] पदवी के अलावा और कुछ नहीं दिया। उसे एक तरह से वह एक कैदी की तरह रखता था। साथ ही साथ, अपने बहादुर और बागी बेटे—राघोबा को—गुजरात के गायकवाड़ से राज्य को लूटने के बहाने उसने पूना से बाहर भेज दिया।

१७५६. निज़ाम सलावतजंग ने बुसी को अपने दरबार से हटा दिया था, तो वह मछलीपट्टम चला गया था। उसने सुना कि फ्रांसीसियों को सूबेदारी

---

1 एल्फिन्स्टन के कथनानुसार, १७५२ में।

2 कारोमण्डल तट के उत्तर में स्थित प्रान्त, वह निज़ाम हैदराबाद का था

से निकाल कर बाहर करने के लिए निज़ाम अंग्रेज़ों के साथ मेल-जोल करने की योजना बना रहा है। उसने फौरन आक्रमण कर दिया और हैदराबाद के समीप, चारमाल में अपने को मज़बूती से जमा लिया। सला-बत ने समझौता कर लिया और अंग्रेज़ों के दोस्ती के प्रस्ताव को अस्वीकार कर दिया।

१७५७. निज़ाम ने बुसी को फिर उत्तरी सरकार की तरफ़ भेज दिया। किन्तु जल्दी ही उसे उसको वापिस बुलाना पड़ा; लौटने पर—

१७५७—में, बुसी ने देखा कि हैदराबाद के इर्द-गिर्द, निज़ाम के दो बड़े भाइयों, अर्थात्, बसालतजंग और निज़ाम अली के नेतृत्व में चार विरोधी सेनाएं जमा हो गयी हैं। इसके अलावा, निज़ाम अली के साथ सलाबतजंग का वज़ीर भी मिल गया था। बुसी ने उसे इस तरह मरवा डाला कि लगा कि वह किसी आकस्मिक लड़ाई में मारा गया है। इस पर निज़ाम अली रणक्षेत्र छोड़ कर भाग गया और बसालतजंग को दौलताबाद का किला देकर मिला लिया गया।

१७५८. बुसी अब पूरे दक्षिण का तानाशाह बन गया, ठीक उसी समय सुई १५वें के ईर्षालु कुढ़-कुढ़न वाले साथी-संगियों ने उसे हटा दिया, और उसके स्थान पर दुस्साहसी आयरलैण्डवासी लैली को नियुक्त कर दिया जो सिपाही तो अच्छा था, किन्तु जनरल किसी काम का न था।

१ मई, १७५८. लैली सेन्ट डेविड के क़िले के समीप जहाज़ से उतरा। बुसी को उसने फौरन ही आर्डर दिया कि अपने मातहत तमाम फ़ान्सीसी सैनिकों को लेकर वह दक्षिण की ओर कूच कर दे। बुसी ने आज्ञा पालन की। लैली ने सेन्ट डेविड के क़िले पर अधिकार कर लिया, और मद्रास पर चढ़ाई करने ही वाला था कि पाण्डिचेरी के फ़ान्सीसी व्यापारियों ने उसे ज़रा-सी भी आर्थिक सहायता देने से इन्कार कर दिया। इसलिए उसने तंजोर को "लूटने" का फ़ैसला किया। तंजोर के बारे में मशहूर था कि वह बहुत सम्पन्न है। लैली ने उसे अच्छी तरह से घेर लिया। तंजोर के राजा ने अंग्रेज़ों से अपील की। उन्होंने मद्रास से अपने बेड़े को कारीकल भेज दिया, फ़ान्सीसी रसद के रास्ते को काट दिया और एक सेना तैयार की जिसने लैली से हमले की समानान्तर दिशाओं से चारों तरफ़ से उसे घेरना शुरू कर दिया। फ़ान्सीसी घेरा टूट गया और, आज्ञा के बिल्कुल खिलाफ़, फ़ान्सीसी एडमिरल बेड़े को लेकर और लैली को उसकी किस्मत के आसरे छोड़कर मारीशस के लिए रवाना हो गया।—लैली ने अर्काट

को फतह कर लिया, वहाँ बुसी आकर उससे मिल गया। बुसी ने उसे सलाह दी कि फ्रान्सीसी शक्ति को संगठित करने के लिए तथा अंग्रेजों की मदर छावनी पर अन्तिम धावा करने के लिए आवश्यक धन जमा करने के लिए वह वहीं अर्काट में टिका रहे; लेकिन "सिड़ी" लैली ने अपनी ही योजना पर जोर दिया और—

१२ दिसम्बर, १७५८—को, मद्रास के ऊपर चढ़ाई कर दी। वहाँ के गेरीसन (रक्षक सैन्यदल) ने लारेंस के नेतृत्व में दो महीने तक उसका सामना किया। १४ दिसम्बर को फ्रान्सीसियों ने "काले नगर" पर कब्जा कर लिया और किले के इर्द-गिर्द समानान्तर रेखाओं में जम गये।

१६ फरवरी, १७५९. मडकों पर एक ब्रिटिश बेड़ा आ पहुचा, उसने घेरे को तोड दिया। लैली भाग खडा हुआ, अपने पीछे वह ५० तोपें छोड़ता गया। कर्नल कूट, जो सेना को लेकर आया था, बिना किसी रोक-टोक के मद्रास पहुच गया, गेरीसन को लेकर वहा से निकल पडा, वांडवाश पर उसने कब्जा कर लिया और लैली की सेना के उसने टुकडे-टुकडे कर दिये। उसे उसने खदेड कर पांडिचेरी भगा दिया।

१७६०. पांडिचेरी में लैली पडा हुआ फ्रास से मदद पाने की व्यर्थ प्रतीक्षा कर रहा था, तनख्वा के लिए उसके सिपाही विद्रोह कर रहे थे; १७६० के अन्त मे, कूट ने पांडिचेरी को घेर लिया।

१४ जनवरी, १७६१. गेरीसन ने पांडिचेरी को खाली कर दिया; कूट ने किले को एकदम ध्वस्त कर दिया और, इस तरह, भारत में फ्रान्सीसी सत्ता के अन्तिम चिन्ह को भी पूर्णतया मिटा दिया। लैली के साथ पेरिस में बहुत बुरा व्यवहार किया गया और अन्त में उसे फांसी दे दी गयी। लाबूर्दोने जेल मे मर गया। डूप्ले नितान्त गरीबी मे पडा रहा और बुसी भारत में तब तक बना रहा जब तक कि उसे लोगों ने बिलकुल भुला नहीं दिया।

(३) बंगाल की घटनाएँ, १७५५-१७७३

१७४०. सूबेदार सुजाउद्दीन की मृत्यु के बाद, अलीवर्दी खां ने अपने नीचे बंगाल, बिहार और उड़ीसा के तीनों प्रान्तों को मिला कर एक कर लिया (पृष्ठ ८५[1])। मराठा पेशवा, बाजीराव की उसने मृत्यु होते देखी।

[1] इस संस्करण का पृष्ठ ६९

बाजीराव की सेनाओं का संचालन पँवार, होल्कर, सिन्धिया और एक शक्तिशाली जाबाज़, रघुजी भोंसले ने किया था।) बाजीराव पेशवा की मृत्यु के बाद रघुजी भोंसले की ताकत इतनी बढ़ गयी कि उसको कुचलने के लिये दूसरे नेताओं ने आपस में एक गुप-चुप समझौता कर लिया; [उन्होंने] उसको एक अभियान पर कर्नाटक भिजवा दिया। पेशवा (बाजीराव) तीन बेटे छोड़ कर मरा था . बालाजी राव, जो उसका उत्तराधिकारी बना था, रघुनाथ राव (जो बाद में राघोबा के नाम से मशहूर हुआ था), तथा शमशेर बहादुर, जो बुन्देलखण्ड में राज्य कर रहा था। नये पेशवा, बालाजी राव को जो ज़मीनें मिली थीं उनकी वजह से उसकी भोंसले से सीधी-सीधी टक्कर हो गयी थी। भोंसले ने बंगाल पर चढ़ाई कर दी, लेकिन वहां शाही सेनाओं ने उसे हरा दिया। स्वयं उसके प्रदेश में होने वाली इन कार्रवाइयों से अलीवर्दी खाँ दोनों दलों के मराठों से अपनी रक्षा करने के लिए मजबूर हो गया, शाही सेनाओं ने उसकी मदद की; बालाजी राव के एक अफसर, भास्कर ने सफलता के साथ उसका मुकाबला किया, उससे लड़ता हुआ वह कोठा तक चला गया, हुगली तक बढ़ गया, और मुर्शिदाबाद में स्थित एक फैक्टरी को उसने लूट लिया।

१७४४ में, अलीवर्दी खाँ ने भास्कर की हत्या कर दी, फिर १७५१ में उसने ले-देकर मराठों को अपनी तरफ मिला लिया।

१७५५. यह देख कर कि बालाजी राव, पेशवा की ताकत बढ़ती जा रही थी और महान् मुग़ल कमज़ोर हो रहा था, अंग्रेज़ों ने बालाजी राव के साथ मित्रता कर ली।

८ अप्रैल, १७५६. अलीवर्दी खाँ की मृत्यु हो गयी, सूबेदार की हैसियत से उसका वारिस उसका पोता सिराजुद्दौला बना, [उसने] कलकत्ता के गवर्नर, मिस्टर ड्रेक को फ़ौरन पैग़ाम भेजा कि तमाम ब्रिटिश क़िलेबन्दियों को तोड़ कर गिरा दे। ड्रेक के इनकार कर देने पर सेना लेकर वह खुद कलकत्ते आ पहुंचा। क़िले के गैरिसन (रक्षक सैन्यदल) में कुल केवल १७० ही अंग्रेज़ तोपें चलाने वाले, आदि थे और रसद सामग्री का अभाव था, इसलिए वहां के निवासियों को ड्रेक ने आदेश दिया—"Sauve qui peut"[१]।

१ जो अपने को बचा सके बचा ले।

२१ जून, १७५६ की शाम—मुन्शी-मुहर्रिर अपना माल-मता लेकर भाग गये; रात मे हौलवेल ने "जलती हुई फैक्ट्रियो की रोशनी की मदद से" किले की रक्षा की, किले मे सेना घुस आयी, गेरीसन को कैद कर लिया गया, सिराज ने आदेश दिया कि सुबह तक तमाम बन्दियों को अच्छी तरह रखा जाय, लेकिन (ऐसा लगता है कि दुर्घटनावश) १४६ आदमी २० वर्ग फुट के एक कमरे मे, जिसमे केवल एक छोटी खिड़की थी, भर दिये गये थे, अगले दिन सुबह (जैसा कि हौलवेल ने स्वयम् बताया है), केवल २३ लोग जिन्दा बचे; उन्हे नाव से हुगली के रास्ते चले जाने की इजाजत दे दी गयी। यही वह "कलकत्ते की काल-कोठरी" का काण्ड था जिसे लेकर पाखण्डी अंग्रेज आज तक इतनी झूठी-मूठी बदनामी कर रहे है। सिराजुद्दौला मुरादाबाद लौट गया; बंगाल मे अंग्रेज हस्तक्षेपकारियो को पूर्णतया और अच्छी तरह से निकाल बाहर कर दिया गया।

२ जनवरी, १७५७. क्लाइव ने, जिसे एडमिरल वाटसन की कमान में एक जहाजी बेड़े के साथ मद्रास से ऊपर भेजा गया था, फ़ोर्ट विलियम पर पुनः अधिकार कर लिया। सूबेदार ने कलकत्ते पर चढ़ाई कर दी, क्लाइव ने हमला किया। कई घन्टे तक अनिर्णीत घमासान लड़ाई होती रही। ३ जनवरी को सिराजुद्दौला ने कम्पनी को उसके पुराने विशेषाधिकार फिर दे दिये और [उसे] मुआवजा भी [दिया]—क्लाइव ने चन्द्रनगर की फ्रान्सीसी बस्ती को नष्ट कर दिया। सूबेदार ने प्लासी मे, कलकत्ते के समीप, हुगली के किनारे अपना पड़ाव डाल दिया। मुगल सेना के कमान्डर-इन-चीफ़ (प्रधान सेनापति), मीर जाफर ने क्लाइव को चिट्ठी लिखकर उससे यह कहा कि अगर सिराजुद्दौला के स्थान पर बंगाल, बिहार और उड़ीसा का सूबेदार उसे बना दिया जाय तो लड़ाई के किसी भी दिन गद्दारी करके वह अंग्रेजो की तरफ आ जायगा। क्लाइव ने उसके प्रस्ताव को स्वीकार कर लिया।

२३ जून, १७५७. प्लासी का युद्ध। सम्पूर्ण मुगल सेना पराजित हुई, सूबेदार भाग खड़ा हुआ, मीर जाफ़र ने लड़ाई लड़ना बन्द कर दिया, [गद्दारी करके] वह क्लाइव की तरफ चला गया।

२९ जून, १७५७ [अंग्रेज] सेना मुर्शिदाबाद वापिस लौट आयी, यहां पर क्लाइव ने गद्दार को बंगाल, बिहार, और उड़ीसा का इस शर्त पर पूर्ण रूप से नाम सूबेदार बना दिया कि वह युद्ध का खर्चा भरेगा और हुगली

२० फरवरी, १७६०—तक, उस समय तक जमा रहा जिस समय तक कि ब्रिटिश सैन्य शक्ति को लेकर कर्नल कैलाड वहाँ नही आ गया; कर्नल कैलाड ने नये शाहंशाह (अली गौहर) को पराजित कर दिया; मुगल ने बंगाल मे घूमकर मुर्शिदाबाद पर चढाई करने की कोशिश की, उसने देखा कि अंग्रेज वहाँ भी तैयार खड़े थे, तब वह पटना वापिस चला गया। कैलाड ने उस नगर की मदद करने के लिए कैप्टन नौक्स को भेजा; २०० योरोपियन सिपाहियो की एक बटेलियन तथा घुड़सवारो के एक छोटे स्क्वैडरन को लेकर नौक्स वहाँ पहुँच गया। नौक्स ने मुगल सेनाओ को हरा दिया और पटना मे अपना पड़ाव डाल दिया, किन्तु तभी गंगा के दूसरे तट पर ३० हजार सैनिको और १०० से अधिक तोपो को लेकर पूर्णिया का नवाब आ पहुँचा।

२० मई, १७६०. नौक्स की विजय हुई, अपने मित्र, राजपूत राजा सिताबराय के साथ उसने हमला करने के लिए नदी पार की; मुगल सेना को खदेड भगाया, नौक्स और राजपूत ने अपने केवल ३०० बचे सैनिको को लेकर पटना मे प्रवेश किया।

६ जनवरी, १७६१. पानीपत की लड़ाई (देखिए, पृष्ठ ५८[1])—युद्ध मे एक तरफ सदाशिव भाऊ के नेतृत्व मे मराठे थे और दूसरी तरफ अहमद खाँ अब्दाली के नेतृत्व मे दुर्रानी, अथवा अब्दाली (अफगान कबीला)। भारत मे मुगल साम्राज्य एकदम परास्त हो गया; मराठो की शक्ति छिन्न-भिन्न हो गयी, और अहमद खाँ की ताकत इतनी कमजोर हो गयी कि उसे अफगानिस्तान लौट जाना पड़ा।

१७५७. राघोबा (जिसे आलमगीर द्वितीय के वजीर गाजिउद्दीन ने बुला भेजा था) ने दिल्ली को अहमद खाँ से छीन लिया। पंजाब मे अहमद खाँ के बेटे, शाहजादा तैमूर को हरा कर, मराठे दक्षिण लौट गये। पूना लौटने के बाद, राघोबा ने पेशवा के चचेरे भाई सदाशिव (अथवा सदाशिव भाऊ) के साथ झगड़ा कर लिया और सेना की कमान से हटा दिया गया, उसके स्थान पर सदाशिव की नियुक्ति कर दी गयी।

१७५९. अहमद खाँ ने चौथी बार भारत पर आक्रमण कर दिया और ठीक उसी समय जिस समय कि गाजिउद्दीन ने आलमगीर द्वितीय की हत्या कर दी थी और जिस समय एक अफगान सेनानायक नजीबुद्दौला ने मराठा

[1] इस संस्करण का पृष्ठ ६१-६२।

नेताओं, मल्हार राव होल्कर तथा दत्ता जी सिंधिया को खदेड़ कर गंगा के पार भगा दिया था, उसने लाहौर पर अधिकार कर लिया। इसे देखकर—

१७६०—के आरम्भ में, अहमद खाँ एक सेना लेकर दिल्ली के सामने [आ पहुँचा]। विशाल सेना लेकर भाऊ (सदाशिव) ने उसके ऊपर चढ़ाई कर दी, और पानीपत में अन्तिम निर्णय हो गया।

१७६०. क्लाइव के स्थान पर वान्सिटार्ट को बंगाल का गवर्नर बना दिया गया; मद्रास के एक शहरी अधिकारी के रूप में बंगाल के अफसर उसे "नापसन्द करते" थे। वान्सिटार्ट ने मीरजाफर को हटा दिया और उसके दामाद मीरक़ासिम को सूबेदार बना दिया; यह आदमी कलकत्ते में रहता था, अंग्रेजों को २ लाख पौंड की आर्थिक सहायता वह सावधानी से चुकाता जाता था, उसने अपने इलाके के एक-तिहाई भाग को, अर्थात्, मिदनापुर, बर्दवान तथा चटगाँव के ज़िलों को कम्पनी को हमेशा के लिए दे दिया। लेकिन बाद में, वान्सिटार्ट की दख़लन्दाज़ियों से नाराज़ होकर, उसने अपनी सेना बढ़ाना और उसे अनुशासित करना शुरू कर दिया।— इसी दर्म्यान, अलीगौहर ने शाहंशाह शाहआलम के नाम से, दिल्ली पर फिर से क़ब्ज़ा करने में असमर्थ होकर बिहार को लूट-पाट डाला; अन्त में, उसने अंग्रेज़ों के साथ समझौता कर लिया; उन्होंने उसे पटना में मान्यता प्रदान कर दी; और उसने उन तमाम नियुक्तियों की पुष्टि कर दी जो अंग्रेज़ों ने की थीं।

१७६२. मीरक़ासिम ने रामनारायण को क़ैद करवा लिया, मालगुज़ारी वसूल करने वाले अपने आदमियों से रैयत को उसने तकलीफ़ें दिलानी शुरू कर दी, किन्तु कम्पनी ने उसकी जिस चीज़ को अपराध माना वह यह थी. (१) गधे जैसे महान् मुगल, फर्रुखसियर (देखिए, पृष्ठ ५६[1]) ने १७१५ में एक सामूहिक संस्था के रूप में कम्पनी को दस्तक (यानी बाहर से लाये जाने वाले माल पर टैक्सों की छूट) प्रदान कर दी थी, किन्तु इस अधिकार को तमाम (अंग्रेज़) निजी व्यापारियों ने अपना हक़ मान लिया था। 'नवाबों' (धनकुबेरों) की इस ज़बरदस्ती से मीरक़ासिम बिगड़ा था, उसके टैक्स वसूल करने वाले आदमियों ने उनकी आज्ञाओं का पालन करने की कोशिश की। उन्होंने इन मालों को रोक......

१ इस संस्करण का पृष्ठ ५६

कर नहीं चुकाया गया था, इस पर कम्पनी के नौकरों ने उनका अपमान किया। वान्सिटार्ट ने प्राइवेट तौर से वादा किया कि [कम्पनी के नौकर] मीरकासिम को ९ प्रतिशत कर दिया करेंगे; किन्तु कम्पनी की कौंसिल ने इस वादे को नामंजूर कर दिया और बाक़ायदा आर्डर दे दिया कि मीरकासिम के अफसर अगर कर वसूल करने की कोशिश करें तो उन्हें पकड़ लिया जाय और जेल में डाल दिया जाय। इसके जवाब में, मीरकासिम ने बन्दरगाह के तमाम मुग़ल व्यापारियों को एक फ़र्मान के द्वारा यह छूट प्रदान कर दी कि अपने माल को बिना कोई शुल्क दिये वे ले आयें; इस फर्मान के द्वारा उसने उन्हें "अंग्रेज क्लर्कों" (कलमनवीसों) की बराबरी के स्तर पर रख दिया। —एलिस ने, जो पटना में अंग्रेजों की फैक्टरी का प्रधान था, खुलेआम लड़ाई की तैयारियाँ शुरू कर दी। कम्पनी के अधिकारों पर जोर देने के लिए कलकत्ते से जो दो आदमी, हे और एमियट मुंगेर भेजे गये थे उन्हें मीरक़ासिम के हुक्म से पकड़ लिया गया; हे को इस बात की जमानत के रूप में रोक लिया गया कि एलिस उचित व्यवहार करे, एमियट को मीरकासिम के एक लिखित विरोध के साथ कलकत्ता वापिस भेज दिया गया। एलिस ने फौरन ही पटना के शहर और क़िले पर अधिकार कर लिया। मीरकासिम ने अपने अफसरों को हुक्म दिया कि रास्ते में जो भी अंग्रेज मिले उसे वे पकड़ लें; कलकत्ते के रास्ते में एमियट मुग़ल पुलिस को अपनी तलवार सौंपने के लिए तैयार नहीं था, इसलिए उसने उन पर गोली चला दी। लड़ाई में वह खुद मारा गया।

१७६३. मीरकासिम ने अपनी सेना बढ़ा ली और मदद के लिए महान् मुग़ल (अलीगोहर) तथा अवध के सूबेदार से अपील की; अंग्रेजों ने घोषित कर दिया कि उसे गद्दी से हटा दिया गया है, उन्होंने उसकी जगह पर फिर मीरजाफर को नियुक्त कर दिया।

१९ जुलाई, १७६३ अंग्रेज विजयी हुए (यह लड़ाई की शुरुआत ही थी), २४ जुलाई को भी ऐसा ही हुआ; २ अगस्त को मुर्शिदाबाद पर कब्जा करने के बाद घेरिया में अंग्रेज विजयी हुए। मीरक़ासिम ने तमाम अंग्रेज़ बन्दियों को मरवा डाला; उसने सेठों, मुर्शिदाबाद के धनाढ्य बैंकरों, तथा रामनारायण को भी मरवा डाला।

नवम्बर, १७६३. अंग्रेजों ने उदयनाला में मीरकासिम के सैन्य शिविर पर कब्जा कर लिया, मुगल [मीरकासिम] भागकर पटना चला गया, वहाँ महान् मुग़ल, शाहआलम और अवध का सूबेदार बड़ी सैन्य शक्ति लेकर

उसके साथ आ मिले; किन्तु अंग्रेजों ने पटने पर हमला करके उस पर अधिकार कर लिया।

१७६४. पटना में, *तनख़ाहों के न मिलने की वजह से, सिपाहियों ने अंग्रेजों* के खिलाफ बगावत कर दी; दुश्मन से मिलने के लिए सिपाही मार्च करके शहर से चले गये; मेजर मुनरो ने उन पर आक्रमण करके उन्हें हरा दिया और उन्हें मार्च कराकर पटना वापिस ले आया। पटना में उनके नेताओं को तोपों के मुंह पर रखकर उड़ा दिया गया (इस प्रकार इस परोपकारी तरीके का इस्तेमाल उस प्रथम सिपाही-विद्रोह के जमाने से ही किया जाने लगा था!)

२३ अक्टूबर, १७६४. मीरकासिम पर बक्सर के उसके किलेबन्द सैन्य-शिविर में मुनरो ने हमला कर दिया; वह हार गया और जान बचाने के लिए अवध भाग गया।

१७६४. बक्सर (पटना के उत्तर-पश्चिम में) की इस विजय से, गंगा का पूरा *तट अंग्रेजों के हाथों में [पहुंच गया]; अंग्रेज हिन्दुस्तान के वास्तविक* मालिक बन गये। वान्सिटार्ट ने फौरन शुजाउद्दौला को अवध का नवाब मान लिया, मीरजाफर को उसने बंगाल, बिहार और उड़ीसा का नवाब मान लिया। मीरजाफर को ५३ लाख का हर्जाना देना पड़ा था); और शाह आलम को उसने महान् मुगल मान लिया, उसके रहने का स्थान इलाहाबाद तै हुआ।

१७६५. मीरजाफर की मृत्यु हो गयी; उसके बेटे नजमुद्दौला को उसका वारिस मान लिया गया।—वान्सिटार्ट का कार्यकाल भी इसी वर्ष समाप्त हो गया; क्लाइव, जो लार्ड बना दिया गया था, उसका उत्तराधिकारी नियुक्त हुआ, अन्तरिम काल के लिए, स्पेन्सर को [कम्पनी की कलकत्ता कौंसिल का] प्रेसीडेन्ट नियुक्त कर दिया गया।

१७६५-१७६७. क्लाइव का द्वितीय प्रशासन-काल (क्लाइव ने लन्दन में ईस्ट इण्डिया कम्पनी के डायरेक्टरों से लड़ाई कर ली; फलस्वरूप, उन्होंने कलकत्ता फौरन यह आर्डर भेज दिया कि उसकी जागीर पर उसे लगान के रूप में जो रुपया दिया जाता था वह बन्द कर दिया जाय।)

३ मई, १७६५. बंगाल के गवर्नर, कौंसिल के प्रेसीडेन्ट और कमाण्डर-इन-चीफ़ की संयुक्त सत्ताओं से लैस होकर लार्ड क्लाइव कलकत्ता पहुंचा।

[illegible], आदि में क्लाइव ने भ्रष्टाचार देखा (पृष्ठ १०३)। क्ला-इव की महानता के लिए [illegible] की जो एक कमेटी बनायी गयी

कर नहीं चुकाया गया था, इस पर कम्पनी के नौकरो ने उनका अपमान किया। वान्सिटार्ट ने प्राइवेट तौर से वादा किया कि [कम्पनी के नौकर] मीरकासिम को ९ प्रतिशत कर दिया करेंगे; किन्तु कम्पनी की कौंसिल ने इस वादे को नामजूर कर दिया और बाक़ायदा आर्डर दे दिया कि मीरक़ासिम के अफसर अगर कर वसूल करने की कोशिश करें तो उन्हें पकड़ लिया जाय और जेल में डाल दिया जाय। इसके जवाब मे, मीरक़ासिम ने बन्दरगाह के तमाम मुग़ल व्यापारियों को एक फ़र्मान के द्वारा यह छूट प्रदान कर दी कि अपने माल को बिना कोई शुल्क दिये वे ले आयें; इस फर्मान के द्वारा उसने उन्हे "अंग्रेज क्लर्कों" (कलमनवीसो) की बराबरी के स्तर पर रख दिया। —एलिस ने, जो पटना में अंग्रेजों को फैक्टरी का प्रधान था, खुलेआम लड़ाई की तैयारियाँ शुरू कर दी। कम्पनी के अधिकारो पर ज़ोर देने के लिए कलकत्ते से जो दो आदमी, हे और एमियट मुंगेर भेजे गये थे उन्हे मीरक़ासिम के हुक्म से पकड़ लिया गया; हे को इस बात की जमानत के रूप मे रोक लिया गया कि एलिस उचित व्यवहार करे, एमियट को मीरकासिम के एक लिखित विरोध के साथ कलकत्ता वापिस भेज दिया गया। एलिस ने फ़ौरन ही पटना के शहर और किले पर अधिकार कर लिया। मीरकासिम ने अपने अफसरो को हुक्म दिया कि रास्ते मे जो भी अंग्रेज मिले उसे वे पकड़ लें; कलकत्ते के रास्ते मे एमियट मुग़ल पुलिस को अपनी तलवार सौंपने के लिए तैयार नही था, इसलिए उसने उन पर गोली चला दी। लडाई मे वह खुद मारा गया।

१७६३. मीरकासिम ने अपनी सेना बढा ली और मदद के लिए महान् मुगल (अलीगौहर) तथा अवध के सूबेदार से अपील की; अंग्रेजो ने घोषित कर दिया कि उसे गद्दी से हटा दिया गया है, उन्होंने उसकी जगह पर फिर मीरजाफर को नियुक्त कर दिया।

१९ जूलाई, १७६३. अंग्रेज विजयी हुए (यह लड़ाई की शुरूआत ही थी), २४ जूलाई को भी ऐसा ही हुआ; २ अगस्त को मुर्शिदाबाद पर कब्जा करने के बाद घेरिया मे अंग्रेज विजयी हुए। मीरक़ासिम ने तमाम अंग्रेज बन्दियो को मरवा डाला; उसने सेठो, मुर्शिदाबाद के धन्नासेठ बैंकरों, तथा रामनारायण को भी मरवा डाला।

नवम्बर, १७६३. अंग्रेजो ने उदयनाला मे मीरकासिम के सैन्य शिविर पर कब्ज़ा कर लिया, मुगल [मीरकासिम] भागकर पटना चला गया, वहाँ महान् मुगल, शाहआलम और अवध का सूबेदार बडी सैन्य शक्ति लेकर

उसके साथ आ मिले; किन्तु अंग्रेजों ने पटने पर हमला करके उस पर अधिकार कर लिया।

१७६४. पटना में, तनख़ाहों के न मिलने की वजह से, सिपाहियों ने अंग्रेजों के ख़िलाफ़ बग़ावत कर दी; दुश्मन से मिलने के लिए सिपाही मार्च करके शहर से चले गये; मेजर मुनरो ने उन पर आक्रमण करके उन्हें हरा दिया और उन्हें मार्च कराकर पटना वापिस ले आया। पटना में उनके नेताओं को तोपों के मुंह पर रखकर उड़ा दिया गया (इस प्रकार इस परोपकारी तरीक़े का इस्तेमाल उस प्रथम सिपाही-विद्रोह के ज़माने से ही किया जाने लगा था!)

२२ अक्तूबर, १७६४. मीरक़ासिम पर बक्सर के उसके किलेबन्द सैन्य-शिविर में मुनरो ने हमला कर दिया; वह हार गया और जान बचाने के लिए अवध भाग गया।

१७६४. बक्सर (पटना के उत्तर-पश्चिम में) की इस विजय से, गंगा का पूरा तट अंग्रेजों के हाथों में [पहुंच गया]; अंग्रेज़ हिन्दुस्तान के वास्तविक मालिक बन गये। वान्सिटार्ट ने फ़ौरन शुजाउद्दौला को अवध का नवाब मान लिया; मीरजाफ़र को उसने बंगाल, बिहार और उड़ीसा का नवाब मान लिया। मीरजाफ़र को ५३ लाख का हर्जाना देना पड़ा था); और शाह आलम को उसने महान् मुग़ल मान लिया, उसके रहने का स्थान इलाहाबाद तै हुआ।

१७६५. मीरजाफ़र की मृत्यु हो गयी; उसके बेटे नजमुद्दौला को उसका वारिस मान लिया गया।—वान्सिटार्ट का कार्यकाल भी इसी वर्ष समाप्त हो गया; क्लाइव, जो लार्ड बना दिया गया था, उसका उत्तराधिकारी नियुक्त हुआ; अन्तरिम काल के लिए, स्पेन्सर को [कम्पनी की कलकत्ता कौन्सिल का] प्रेसीडेन्ट नियुक्त कर दिया गया।

१७६५-१७६७. क्लाइव का द्वितीय प्रशासन-काल (क्लाइव ने लन्दन में ईस्ट इण्डिया कम्पनी के डायरेक्टरों से लड़ाई कर ली; फलस्वरूप, उन्होंने कलकत्ता फ़ौरन यह आर्डर भेज दिया कि उसकी जागीर पर उसे लगान के रूप में जो रुपया दिया जाता था वह बन्द कर दिया जाय।)

३ मई, १७६५. बंगाल के गवर्नर, कौंसिल के प्रेसीडेन्ट और कमान्डर-इन-चीफ़ की संयुक्त सत्ताओं से लैस होकर लार्ड क्लाइव कलकत्ता पहुंचा।

कलकत्ते, आदि में क्लाइव ने भ्रष्टाचार देखा (पृष्ठ १०३)। क्लाइव की सहायता के लिए चार व्यक्तियों की जो एक कमेटी बनायी गयी

थी उसमे जनरल कार्नक,मिस्टर वर्लस्ट,मिस्टर सुमनर और मिस्टर साइक्स थे।—क्लाइव ने बंगाल, उड़ीसा और बिहार के नवाब, व्यभिचारी नजमुद्दौला को ५३ लाख रुपया सालाना देने का वादा करके गद्दी छोडने के लिए राज़ी कर लिया। उसने अपनी सारी सत्ता ईस्ट इण्डिया कम्पनी को सौंप दी। उन तीन जिलों में अपने तमाम क्षेत्रीय अधिकारों को अपनी मर्ज़ी से छोड़ देने के एवज मे क्लाइव ने महान् मुग़ल को २६ लाख रुपये सालाना की एक और रकम दे दी और कड़ा तथा इलाहाबाद की आमदनी को कम्पनी के लिए हासिल कर लिया। इसके अलावा, महान् मुगल ने ईस्ट इण्डिया कम्पनी द्वारा प्राप्त किये गये तमाम इलाके के हुकूमत सम्बन्धी तमाम अधिकार भी कम्पनी को सौंप दिये। इस प्रकार, अंग्रेज सरकार को दीवानी[1] और निज़ामत[2] दोनों प्राप्त हो गये। इसी साल क्लाइव ने अदालत की व्यवस्था[3] को वैधानिक करार दे दिया (देखिए, पृष्ठ १०४, १०५)। इस तरह ईस्ट इण्डिया कम्पनी को ढाई करोड़ आदमियों के ऊपर हुकूमत करने का पूर्ण अधिकार प्राप्त हो गया और उसे चार करोड़ रुपये सालाना की आमदनी होने लगी। (पूरे प्रशासन को अंग्रेज़ अफसरों के हाथ में दे देने का अधिकार वारेन हेस्टिंग्ज़ को १७७२ से पहले नही मिला था)।

१ जनवरी, १७६६. क्लाइव ने आदेश जारी किया कि उस दिन से दुगुना भत्ता बन्द कर दिया जाय ("भत्ता" वह अतिरिक्त वेतन होता था जो अंग्रेज अफसरो को उस वक्त मिलता था जिस वक्त वे मोर्चे पर होते थे; हाल के युद्ध के समय इसे दुगना कर दिया गया था)। इस आदेश की वजह से बंगाल के अफ़सरों ने बगावत कर दी; उन्होंने एक साथ अपने इस्तीफे भेज दिये। यह चीज इसलिए और भी अधिक दुर्भाग्यपूर्ण लगी कि ठीक उसी समय यह खबर आई थी कि ५० हजार मराठों ने बिहार पर चढाई कर दी है। क्लाइव ने सारे इस्तीफे मजूर कर लिए, मुजरिमों को कोर्ट-मार्शल के लिए भेज दिया, और उनकी जगह लेने के लिए मद्रास से तमाम कैडेटों और अफ़सरो को बुलवा लिया। अंग्रेज सिपाही भी अपने अफसरों के उदाहरण का अनुकरण करना चाहते थे, किन्तु उन्हे वफादार सिपाहियों ने ऐसा करने से रोक दिया! कलकत्ते के कमान्डर-इन-चीफ, सर रॉबर्ट

---

१ वित्त विभाग।
२ युद्ध विभाग।
३ देशी प्रशासन के माध्यम से सरकारी हुकूमत करने की व्यवस्था।

फ्लेचर को फौरन डिसमिस कर दिया गया; सही या गलत, उसके खिलाफ यह अभियोग लगाया गया कि षड्यंत्र के साथ उसकी भी सहानुभूति थी।

देश के अन्दर के व्यापार के सम्बन्ध में झगडे। ईस्ट इण्डिया कम्पनी के डायरेक्टरों ने [क्लाइव की अनुपस्थिति मे] **अपने नौकरों को देश के अन्दर के नमक और सुपारी के व्यापार पर अपनी इजारेदारी क़ायम करने की** अनुमति दे दी थी। फलस्वरूप, कम्पनी के सारे नौकर सट्टेबाजी मे लग गये थे; रैयत को वे बुरी तरह लूट रहे थे। *देशी लोगों में असन्तोष था।* क्लाइव ने **देश के अन्दर के व्यापार को बढ़ाने के लिए एक सोसायटी** कायम करके नौकरो के व्यापार को खत्म (!?) कर दिया। इसकी वजह से कम्पनी को तो बराबर मुनाफा होने लगा, किन्तु देशी लोगो को लूट कर अलग-अलग जो लोग रुपया कमाते थे वह रुक गया। दो साल बाद, इगलैण्ड मे स्थित बोर्ड के आदेश से इस सोसायटी को ख़त्म कर दिया गया और उसकी जगह **एक बाक़ायदा कमीशन** कायम कर दिया गया।

१७६७. बीमारी की वजह मे **लार्ड क्लाइव का इस्तीफ़ा। इंगलैण्ड लौटकर जाने** के बाद, कम्पनी के डायरेक्टरो ने उसके ऊपर बहुत जुर्म किया।

नवम्बर, १७७४, क्लाइव की आत्म-हत्या !

१७६७-६९. **वर्लस्ट,** कलकत्ते मे [कौन्सिल का] प्रेसीडेन्ट, बंगाल का गवर्नर था; १७७२-१७८५, **वारेन हेस्टिंग्ज।** वह **बंगाल का एक सिविलियन अफ़सर था,** उसका जन्म १७३२ मे हुआ था, १७५० मे **एक क्लर्क के रूप में** उसे कलकत्ते भेजा गया था, १७६० में कलकत्ता कौंसिल का वह मेम्बर हो गया।

१७६९. पानीपत की हार का बदला लेने के लिए **पेशवा माधोराव** ने ३,००,००० **मराठों** को उत्तर की तरफ रवाना कर दिया। [उन्होने] राजपूताना को लूट-पाट कर तबाह कर दिया, जाटो को कर देने के लिए मजबूर कर दिया, और **दिल्ली** की ओर बढ गये। दिल्ली मे **रुहेले नजीबुद्दौला** के बेटे, **जाबिता खाँ** का अच्छा शासन था; उसे वहाँ अहमद खाँ ने १७५६ मे तैनात किया था। उन्होने [मराठो ने] **शाहआलम** के सामने प्रस्ताव रखा कि अगर वह अपने को पूरे तौर से मराठो के सरक्षण मे छोडने को तैयार हो तो वे उसे फिर **दिल्ली** की गद्दी पर विजयी रूप मे बैठा देंगे। शाह आलम ने इसे स्वीकार कर लिया।

२५ दिसम्बर, १७७१. उस आदमी को [शाहआलम को] पेशवा ने **मुग़ल शाहंशाह** के रूप मे **दिल्ली** की गद्दी पर बैठा दिया।

१७७२. मराठों ने पूरे रुहेलखण्ड पर कब्ज़ा कर लिया, दोआब को अपने अधीन कर लिया, पूरे सूबे को तबाह कर दिया; ज़ाबिता खां को उन्होंने क़ैद कर लिया, और उसकी सम्पत्ति को जब्त कर लिया।

१७७२. की शरद ऋतु। [मराठों ने] रुहेलों और अवध के नवाब वज़ीर शुजा-उद्दौला के साथ सन्धि कर ली; उसके यह वादा करने पर कि वह ४० लाख रुपये देगा वे वहाँ से **वापिस लौट गये**; इस वादे को उसने पूरा नहीं किया।

१७७३. मराठे अवध को लूटने पर तुले हुए थे; हाफ़िज़ रहमत के नेतृत्व में रुहेले उनके खिलाफ अवध के नवाब के साथ मिल गये। वेअक्ल शाहआलम ने *मराठों पर हमला कर दिया, वह बुरी तरह हार गया; विजेताओं* ने **कड़ा और इलाहाबाद के ज़िलों** को देने के लिए उसे मजबूर कर दिया, किन्तु इन ज़िलों में **बंगाल के ब्रिटिश इलाके** का एक भाग भी शामिल था। अंग्रेज "जांगलू लोगों" की किस्मत अच्छी थी, क्योंकि तमाम मराठों को **पूना से पेशवा** ने दक्षिण पर चढ़ाई करने के लिए वापिस दक्खिन बुला लिया।

इंगलैण्ड की परिस्थिति। वहाँ पर कम्पनी के नौकरों ने जो विशाल सम्पदा बटोर ली थी उससे लोगों में बड़ी ईर्षा थी; इसके अलावा, उन लोगों का ऐयाशी से भरा जीवन था। **इस धन-सम्पदा को देशी राजाओं को सब तरफ गद्दी से उतार कर, उत्पीड़न और लूट-खसोट की शर्मनाक व्यवस्था क़ायम करके, बटोरा गया था**—कम्पनी की पूरी व्यवस्था की ही तरह, इस सबकी भी पार्लमिन्ट के अन्दर तीव्र भर्त्सना की गयी। इस नियमावली के अन्तर्गत कि **जिसके पास पांच सौ पौंड का** स्टाक होना **था मालिकों के मण्डल** की बैठकों में उसे एक वोट प्राप्त होना था—*नये डायरेक्टरों के वार्षिक चुनाव में ज़बर्दस्त रिश्वतखोरी और भ्रष्टाचार* चलता था। एक बार, मिस्टर सुलीवन को केवल डायरेक्टर मण्डल में चुनवाने के लिए लार्ड शैलबोर्न ने १ लाख पौंड खर्च किये थे। **इंडिया हाउस** अभिसंधियों और घूसखोरी का बराबर अड्डा बना रहता था।

१७७१. पार्लमिट ने हस्तक्षेप किया, कलकत्ता जाकर कम्पनी के काम-काज के तमाम तरीकों की जांच करने और उनमें सुधार करने के लिए उसने **तीन व्यक्तियों की एक कमेटी** नियुक्त कर दी। ये तीनों—ईश्वर की ऐसी **कृपा थी!—यानी वान्सिटार्ट, स्क्रैफ्टन और कर्नल फ़ोर्ड उत्तमाशा अन्तरीप के समीप जहाज के डूब जाने से मर गये!**

इसके बाद ही, भारत में अंग्रेजों की अमलदारियों के वास्तविक स्वामित्व के प्रश्न को लेकर ईस्ट इंडिया कम्पनी और ब्रिटिश सरकार के बीच लड़ाई छिड़ गयी।

इन झगड़ों के बीच पता चला कि : कम्पनी अस्थायी तौर से दीवालिया हो गयी है; भारत में उसे १० लाख पौंड देने थे और इंगलैण्ड में १५ लाख पौंड। डायरेक्टरों ने पार्लामेन्ट से प्रार्थना की कि उन्हे सार्वजनिक ऋण उठाने की अनुमति दे दी जाय; भारत की धन सम्पदा अक्षय है—इसके सम्बन्ध में जो भ्रम थे उन पर घातक प्रहार हुआ !

१७७२. प्रवर समिति नियुक्त की गयी, धोखा-धड़ी, हिंसा, जोर-जबर्दस्ती की उस पूरी व्यवस्था को, जिसके द्वारा कुछ व्यक्तियों ने अपनी तिजोरियां भर ली थीं, खोलकर सामने रख दिया गया। पार्लामेन्ट मे बहुत गरमागरम बहस हुई; भारतीय मामलो के सम्बन्ध से लार्ड क्लाइव की प्रसिद्ध स्पीच हुई।

१७७३. [ईस्ट इंडिया कम्पनी के सम्बन्ध मे] दोनों सदनो से पुनर्निर्माण क़ानून पास हो गया; एक वोट के लिए स्टाक (शेयर पूंजी) की जितनी मात्रा आवश्यक थी उसे ५०० पौंड से बढ़ाकर १,००० पौड कर दिया गया। यह भी तै कर दिया गया कि मालिकों के मंडल में कोई भी मालिक चार से अधिक वोट नही रख सकता। कलकत्ते के गवर्नर का पुनर्नामकरण करके उसे "गवर्नर जनरल" बना दिया गया, तमाम प्रेसीडेन्सियो पर उसकी सर्वोच्च सत्ता स्थापित कर दी गयी; उसकी नामजदगी हर पांचवे साल पार्लामेन्ट खुद करेगी—यह तै हुआ। अदालतों का नया विधान बना (पृष्ठ १०९–११०)।—वारेन हेस्टिंग्ज की आंशिक रूप से स्वीकार कर ली गयी योजना के अन्तर्गत, देशी लोगो के लिए स्वयम् उनके क़ानूनों के अनुसार शासन करने की उनकी व्यवस्था कायम कर दी गयी (१७८०में, गवर्नर जनरल की कौन्सिल को पार्लामेन्ट से नये-नये हासिल हुए देशो के लिए कायदे और कानून बनाने का अधिकार प्राप्त हो गया था। उस समय वारेन हेस्टिंग्ज के तेईसवे नियम को निर्विरोध कानून बना दिया गया। २७वें खण्ड में कहा गया कि मुसलमानो के लिए कुरान को कानून का आधार माना जाना चाहिए; और हिन्दुओ के लिए वेदों अथवा धर्मशास्त्रो को); वारेन हेस्टिंग्ज के तेइसवें नियम के अनुसार हर अदालत में मौलवियों (मुसलमानों के कानून के व्याख्याकारों)

पडितों (हिन्दू कानून के टीकाकारों) को नियुक्त किया गया और उनसे कहा गया कि वे नियमित रूप से वहां उपस्थित रहा करे।

. . . .

(४) मद्रास और वम्बई की हालत
१७६१-१७७०

१७६१. दक्षिण के सूबेदार, **सलाबतजंग** को उसके भाई **निज़ाम अली** ने पकड कर कैद कर दिया और अपने आपको निज़ाम घोषित कर दिया। मद्रास के प्रेसीडेन्ट ने **मुहम्मद अली**, (कर्नाटक के) "कम्पनी के नवाव" से, "अंग्रेज फ़ौजों" को रखने के लिए ५० लाख रुपये की माग की। इस रुपये की उसे गारटी दी गयी थी। मुहम्मद ने उनसे[अंग्रेज़ों से] कहा कि इस रकम को वे **तंजोर** को लूट कर वसूल कर लें। मद्राम के प्रेसीडेन्ट ने तंजोर के राजा को धमकी दी कि अगर वह रुपया न देगा तो उसकी अमलदारी को "जब्त" कर लिया जायगा। वह राज़ी हो गया। **कर्नाटक की फौज के खर्चे को इसी तरह से पूरा किया गया था !**

१७६३. **"पेरिस की शान्ति-संधि"** ने **मुहम्मद अली** को **कर्नाटक का नवाब** और **सलाबतजंग** को **दक्षिण का सूबेदार** मान लिया। इस पर उसके भाई **निज़ाम अली** ने उसका काम तमाम कर दिया। अब **सूबेदार** वन जाने पर, उमने अंग्रेजो के खिलाफ युद्ध की घोषणा कर दी और मुहम्मद अली को कर्नाटक का नवाव मानने से इन्कार कर दिया। कुछ अंग्रेज़ी रेजीमेन्टो को देखकर वह खामोश हो गया। इसी समय दिल्ली के **कठपुतले शाहंशाह** के पास से एक **फ़र्मान** आया जिसमे कम्पनी के मित्र, **कर्नाटक के नवाब को दक्षिण के वर्तमान अथवा किसी भविष्य के सूबेदार की अधीनता से मुक्त कर दिया गया।** इस प्रकार, **कर्नाटक** एक **पूर्णरूप से स्वतंत्र राज्य** वन गया।

१२ अगस्त, १७६५. **क्लाइव** ने कठपुतली बादशाह को इस वात के लिए राज़ी कर लिया कि **उत्तरी सरकार के इलाक़ों** को वह **अंग्रेज़ों को दे दे**; **निज़ाम** ने इस [समझौते] को मानने ने इन्कार कर दिया और **मद्रास के प्रेसीडेन्ट** के नाम यह कहते हुए धमकी-भरा सन्देश भेजा कि ये इलाके **फ्रान्सीसियो को दे दिये गये थे** (जो सच था); मद्रास के प्रेसीडेन्ट ने **कर्नल कैलाड** को हैदराबाद भेजा। वहा—

१२ नवम्बर, १७६६—को निज़ाम के साथ पहली सन्धि [की गयी]; इसकी शर्तों के अनुसार, **उत्तरी सरकार के इलाके निज़ाम के हाथ से निकल कर अंग्रेजों के पास चले गये;** तै हुआ कि कम्पनी उसे ८ लाख रुपये साल की **वार्षिक सहायता** देगी और ज़िले की रक्षा के लिए पैदल सेना की दो बटालियनें और ६ तोपें वहाँ तैनात करेगी।

१७६१. हैदर अली मैसूर का राजा बन गया; १७६३ में उसने बेदनूर पर, और १७६४ में दक्षिण कनारा पर, कब्ज़ा कर लिया।

हैदर अली का जन्म १७०२ मे हुआ था; व फतह मुहम्मद नाम के एक **मुग़ल अफ़सर** का बेटा था; यह अफसर एक छोटी-सी सैनिक टुकडी की कमान करता हुआ पंजाब मे मर गया था। मरते वक्त अपने बेटे को वह अपने २०० सैनिकों का **नायक** बना गया था (मुगल सेना का नायक = फ्रान्सीसी सेना का कैप्टन; अब देशी सेना मे कारपोरल—जमादार—को नायक कहा जाता है)। हैदर अली अपने दो सौ आदमियो को लेकर १७५० में **मैसूर की सेना** मे शामिल हो गया। उस समय **मैसूर के राजा** ने अपना सारा काम-काज अपने वज़ीर **नन्दराज** पर छोड रखा था। १७५५ में, हैदर अली को **डिंडीगुल के क़िले** का कमांडर बना दिया गया; उसे यह हुक्म दिया गया था कि वह एक सेना तैयार करे और उसको रखने का खर्चा उठाये। यह काम उसने लूट मार करके और पास-पडोस के **तमाम अपराधियों और** डाकुओं-लुटेरो को अपने किले के अन्दर बुला कर किया। वे भारी संख्या में उसके पास पहुंच गये। इसलिए, १७५७ मे, जब **पेशवा ने मैसूर पर हमला किया तब हैदर** के पास १० हजार सैनिक, अनेक तोपें और काफी गोला-बारूद था। **इनाम के रूप में** उसे एक **भारी जागीर मिल गयी।** मराठों को मिलाने के लिए जो रकमें दी गयी थी उनकी वजह से मैसूर का खजाना खाली हो गया था, इसलिए तनखा न पाने वाले सिपाही बगावत कर रहे थे। इन बगावतों को दबाने मे **हैदर** ने बहुत मदद दी थी। १७५९ मे, हैदर को **मैसूर का कमान्डर-इन-चीफ** (प्रधान सेनापति) बना दिया गया। उसे भेंट के रूप मे **और जमीन** मिली। इस प्रकार, उसके **अधिकार में आधा राज्य** आ गया। डर कर **नन्दराज** ने इस्तीफा दे दिया **और हैदर** राजा का **जिम्मेदार मन्त्री** बन गया। **खांडेराव** ने उस पर हमला किया, नन्दराज को कुछ समय के लिए फिर वज़ीर बन जाने के लिए उसने राजी कर लिया, सेना के पास गया, **खांडेराव** को हरा कर उसने बन्दी बना लिया। फिर उसे उसने—दूसरे **लुई**

ग्यारहवें की तरह—एक तोते की भाँति लोहे के एक पिंजड़े में बन्द कर दिया और आज्ञा दी कि उसका मजाक बनाने के लिए उसे **बचे-खुचे चावलों और बीजों** का भोजन दिया जाय। फलस्वरूप, चिड़िया की जल्दी ही मृत्यु हो गयी, और फिर, १७६१ मे, **हैदर** ने **नन्दराज और राजा को** इस बात के लिए मजबूर कर दिया **कि सत्ता उसको सौंप कर वे हट जायें।**

१७६५. पेशवा **माधोराव** ने हैदर अली के खिलाफ **रघुजी भोंसले** (जो उस समय **बरार का राजा** था) और पेशवा के भाई **राघोबा** के मातहत एक सेना भेज दी। दो बार हार जाने के बाद, **हैदर** ने ३२ लाख रुपया और **उन तमाम इलाकों को** उन्हें देकर जो उसने मैसूर की सीमाओं के बाहर जीते थे मराठों को खरीद लिया।

१७६६. *हैदर अली ने फिर हमला शुरू कर दिया, और* **कालीकट** *तथा* **मलबार** पर कब्जा कर लिया। **पेशवा** ने हैदर के विरुद्ध **निजाम** तथा **अंग्रेजों** के साथ एक ज़ोरदार समझौता कर लिया।

१७६७. प्रथम मैसूर युद्ध। जनवरी १७६७ में, पेशवा ने कृष्णा नदी को पार कर लिया, और उसके मराठों ने उत्तरी मैसूर को लूट लिया। भारी रकम देकर हैदर ने उसे इस बात के लिए राज़ी कर लिया कि अपनी फौजों को वह **पूना** बुला ले।—निज़ाम हैदर से मिल गया। (नन्दराज के विरुद्ध **निज़ाम का विश्वासघात,** देखिये पृष्ठ ११४)। इस प्रकार, **कर्नल स्मिथ** के अधीन अंग्रेजों को वहां से हटना पडा। **सितम्बर,** १७६७ में, **चंगामा** में **(मद्रास प्रेसीडेन्सी के दक्षिण अर्काट में)** मैसूर और हैदराबाद की फौजों ने मिलकर **स्मिथ** पर हमला कर दिया; उसने उन्हें हरा दिया और अच्छी *हालत मे वापिस मद्रास लौट गया।*

१७६८. हैदराबाद के नज़दीक एक जगह **अंग्रेजों ने प्रदर्शन किया;** भयभीत होकर निजाम ने समझौता कर लिया।

निज़ाम के साथ दूसरी (अंग्रेजों की) शान्ति-सन्धि (यह बहुत ही कलुषपूर्ण थी और **ईस्ट इंडिया कम्पनी के कारनामों की प्रतिनिधि थी !**)। इसकी शर्तों के अनुसार यह फैसला हुआ कि **उत्तरी सरकार** के इलाकों के **लिए निज़ाम** को अंग्रेज **"भेंट देंगे"**। **"गुन्टूर सरकार"** के ऊपर उस समय निज़ाम के भाई **बसालतजंग** का अधिकार था; तै हुआ कि बसालतजंग की मृत्यु से पहले उस पर कम्पनी का कोई अधिकार नहीं होगा। यह भी तै हुआ कि अंग्रेज **मराठों को चौथ** (ज़बरदस्ती ली जाने वाली रकम) देंगे। (यह

आस-पास के केवल छोटे राज्य इसलिए उनको देते थे जिससे कि ये लुटेरे उनकी रियासतों में घुसने की कोशिश न करें। ये लुटेरे उसी तरह लूट-पाट के काम करते थे जिस तरह स्काटलैण्ड के उच्च भूमि के क़बीले पुराने जमाने मे किया करते थे !) इस चौथ को देने के लिए—voila le couronnement de l'oeuvre[1]—अंग्रेजों ने वादा किया कि वे कर्नाटक के बालाघाट को हैदरअली से लडकर छीन लेंगे और उसको अपने इलाके में मिलाने से उन्हें जो आमदनी होगी उससे चौथ अदा करेंगे !

१७६८. की शरद ऋतु। बम्बई से किये गये हमले के फलस्वरूप मंगलोर और वोनूर को जीत लिया गया; एक-दो महीने के वाद हैदर ने उन्हें फिर अंग्रेजों से छीन लिया। किन्तु जिस समय इस प्रकार वह पश्चिमी तट पर फँसा हुआ था, उसी समय कर्नल स्मिथ ने पूर्व की ओर से मैसूर पर चढ़ाई कर दी। उसके लगभग आधे भाग पर उसने कब्ज़ा कर लिया और बंगलौर के चारों तरफ़ घेरा डाल दिया। मैसूरवासियों ने उसे वहाँ से भगाते-भगाते कोलार तक खदेड दिया।

१७६९. कोलार मे कई महीने तक अंग्रेजों ने कुछ नही किया। इसी बीच हैदर ने कर्नाटक, त्रिचनापल्ली, मदुरा तथा तिन्नेवली को लूटकर तबाह कर दिया; १७६९ के अन्त तक हैदर ने अपने तमाम इलाकों को फिर से प्राप्त कर लिया और अपनी सेना को और बढा लिया। कर्नल स्मिथ ने उसके खिलाफ़ मैसूर पर हमला कर दिया, किन्तु बाजू से मार्च करके हैदर उससे बचकर निकल गया और अचानक मद्रास के सामने जाकर प्रकट हो गया। "दफ्तरी छोकरों" के अन्दर घबराहट फैल गयी।

१७६९. उन्होंने हैदर के साथ आक्रामक और सुरक्षात्मक सन्धि कर ली, और उनकी आज्ञा पर, कर्नल स्मिथ इस बात के लिए मजबूर हो गया कि विना किसी प्रकार की छेडछाड़ किये हुए हैदर को वह अपने पडाव के पास से मैसूर लौट जाने दे।

१७७०. अब हैदर अली ने अपना रुख मराठों के खिलाफ किया, पश्चिम मे माधोराव ने उसको परास्त कर दिया। मुआवज़े के तौर पर उसने हैदर से एक करोड रुपये की माँग की; हैदर ने देने से इनकार कर दिया; मराठे फिर आगे बढने लगे। हैदर ने रात शराब पीते हुए बितायी, पश्चिमी घाट में वह फँस गया और उसकी सेना के पूरे तौर से पैर उखड़ गये

---

[1] यह उनका सबसे बडा काम था।

(देखिये, पृष्ठ ११६) । हैदर भाग कर श्रीरंगपट्टम् पहुचा, वहाँ (१९६९ की) सन्धि के अन्तर्गत उसने अंग्रेजों से सहायता मागी; किन्तु सर जौन लिडसे ने, जिन्हे पार्लमिन्ट ने मद्रास के हालचाल को ठीक करने के लिए भेजा था, इस बात पर ज़ोर दिया कि मराठों के साथ संधि कर ली जाय और हैदर अली को अपनी मौत मरने के लिए छोड़ दिया जाय। "इस जानबूझ कर किये गये विश्वासघात" से क्रुद्ध होकर हैदरअली और उसके बेटे टीपू साहेब ने कुरान उठाकर क़सम खायी कि अंग्रेजों से वे हमेशा नफरत करेंगे और उन्हे कुचल देंगे। मराठो को ३६ लाख रुपये तुरन्त देकर और एक ऐसे इलाके को देकर जिसमे १४ लाख रुपया सालाना की आमदनी होती थी, हैदर ने मराठो के साथ सन्धि कर ली।

. . . .

[५] वारेन हेस्टिग्ज का प्रशासन, १७७२-१७८५

१३ अप्रैल, १७७२. बगाल के नियुक्त किये गये गवर्नर की हैसियत से वारेन हेस्टिग्ज ने कार्य करना शुरू कर दिया; [पार्लमिन्ट ने] कौसिल के निम्न सदस्य नियुक्त किये · जनरल क्लेवरिंग, कर्नल मौन्सन, मिस्टर बारवेल, मिस्टर फ्रान्सिस; [हेस्टिग्ज ने] राजस्व विभाग के केन्द्रीय दफ्तर को मुर्शिदाबाद से कलकत्ता मँगवा लिया; क्लाइव (१७६५) द्वारा स्थापित की गयी अदालतों मे उसने कुछ परिवर्तन कर दिये, किन्तु आमदनी को बांटने की उस व्यवस्था का अन्त उसने नही किया जो रैयतो के लिए विनाशकारी थी।

१७७३. पुनर्निर्माण क़ानून पास हो गया; इससे हेस्टिग्ज पहला गवर्नर-जनरल बन गया। साथ ही साथ, तेरहवें जौर्ज तृतीय द्वारा कलकत्ते के सर्वोच्च न्यायालय की स्थापना कर दी गयी। १७७३ के अन्तिम भाग में जज आ गये—ये लोग हिन्दू रीति-रिवाजो के सम्बन्ध मे कुछ नहीं जानते थे और अपने को [भारत मे] पूरी सरकार के प्रधान समझते थे। इसी साल वह कुप्रसिद्ध रुहेला युद्ध हुआ था। अवध के नवाब, शुजाउद्दौला ने वारेन हेस्टिंग्ज को इत्तला दी कि रुहेले उसे ४० लाख की वह भेंट नही दे रहे थे जिसे देने का मराठो के दक्षिण की ओर

लौटते समय (१७७३) उन्होने वादा किया था, [उसने कहा] अगर अंग्रेज रुहेलो को हराने मे उसकी मदद करेगे तो यह रकम वह उन्ही को दे देगा। [कलकत्ते की] कौसिल की सलाह पर हेस्टिंग्स ने इस प्रस्ताव को स्वीकार कर लिया और **नवाब के साथ सन्धि कर ली कि** युद्ध अगर सफल होगा तो **कड़ा और इलाहाबाद के जिलों को**—जो कम्पनी को बहुत महगे पड़ रहे थे और जिनसे उसे कोई मुनाफा नही होता था—**५० लाख रुपये में उसे खरीद लेने दिया जायगा।** रुहेलों के बहादुर सरदार **हाफ़िज रहमत** ने अवध के नवाब से कहा कि मराठा युद्ध मे उसने जितना खर्च किया था वह सब वह भर देगा, किन्तु अवध के नवाब ने उससे **२०० लाख की विशाल धनराशि** की माग की। इतनी वडी रकम देने से रुहेलो ने साफ इन्कार कर दिया।

२३ अप्रैल, १७७४. अवध के नवाब और अग्रेजो की सयुक्त सेनाओ ने रुहेलखण्ड मे प्रवेश किया, लडाई हुई, इसमे बहादुर रुहेले लगभग नष्ट हो गये और हाफिज रहमत मारा गया। लुटेरो ने रुहेलखण्ड को बिल्कुल वीरान करके छोड दिया।

१७७४-१७७५ कलकत्ते में उपद्रव; हेस्टिंग्स के विरुद्ध **कौसिल के अधिकांश सदस्यों की** (जिनमे फ्रांसिस सबसे आगे था) और **जजों तथा लन्दन-स्थित** [कम्पनी के] डायरेक्टर मडल की दुरभिसधियाँ।

१७७५. अवध के नवाब के साथ हेस्टिंग्स ने जो एक रेज़ीडेन्ट (आवासी प्रतिनिधि) रखा था उसकी जगह **मिस्टर ब्रिस्टोव** (डायरेक्टरो द्वारा नियुक्त किये गये व्यक्ति) को भेज दिया गया। इस व्यक्ति ने मॉग की—यही उसका पहला काम था—कि **नवाब के ऊपर कम्पनी का जो बकाया था उस सबको वह १४ दिन के अन्दर चुका दे।** इस दुर्नीतिपूर्ण कदम की हेस्टिंग्स ने भर्त्सना की। उसी **ब्रिस्टोव** ने **अंग्रेज सैनिकों** को हुक्म दे दिया कि रुहेलखण्ड को छोड कर वे फौरन चले जाय; हेस्टिंग्स ने विरोध किया; ब्रिस्टोव ने उसे वे गुप्त आदेश दिखाये जो लन्दन के डायरेक्टरो मे उसे मिले थे। ऐसे आदेश केवल **गवर्नर जनरल** के ज़रिए ही दिये जा सकते थे; हेस्टिंग्स ने लिखकर इस काम का सख्त विरोध किया।

उसी साल, अवध के नवाब **शुजाउद्दौला** की मृत्यु हो गयी। उसके बेटे **आसफ़ुद्दौला** ने कलकत्ता लिखकर कम्पनी की सहायता की [प्रार्थना की।] [कौसिल मे फ्रान्सिस का बहुमत था, इस बहुमत के ज़रिये उसने

हेस्टिंग्ज को मजबूर कर दिया था कि आसफुद्दौला को वह यह लिखकर भेज दे कि अवध के साथ तमाम सम्बन्ध ख़त्म हो गये और अब आसफ के उत्तराधिकारी की हैसियत से गद्दी पर बैठने की बात **कम्पनी के साथ एक नयी सन्धि** के आधार पर ही तै हो सकती है; इस सन्धि के अन्तर्गत भारत के सबसे पवित्र नगर **बनारस** को पूर्णतया [कम्पनी को] दे दिया जाना चाहिए (देखिये, **टिप्पणी**, पृष्ठ १२०)। विरोध करते हुए भी नवाब को इस शर्त को स्वीकार करना पड़ा।

अवध की बेगमें। उसके अन्त्येष्टि संस्कार के बाद नवाब के **जनाने (हरम)** की तलाशी ली गयी, वहाँ २० लाख पौंड की कीमत के रुपये निकले; नये नवाब ने यह कह कर उन्हें ले लिया कि वे सार्वजनिक सम्पत्ति हैं, किन्तु **ब्रिस्टोव** ने तै किया कि वह **बेगमों** को दे दी जाय जो उसे अपनी निजी विरासत कहती थीं। इसकी वजह से नवाब अपने सैनिकों की बाकी तनख़ाहें न चुका सका। भयंकर बगावत हुई, कहा जाता है कि इसमें २० हज़ार सैनिकों की जानें गयीं!

कलकत्ते की कौंसिल के अन्दर (क्लेवरिंग और मौन्सन के साथ मिलकर) फ्रान्सिस ने हेस्टिंग्ज का मज़ाक बनाने और उसे खिझाने की पूरी *कोशिश की, यहाँ तक कि इस काम में मदद देने के लिए उसने* **देशी लोगों से भी अपील की।** इंगलैंड से डायरेक्टर-गण उसे इस काम के लिये उत्साहित कर रहे थे, उन्होंने हेस्टिंग्ज के विरुद्ध तमाम छिछोरे अभियोगों की एक सूची तैयार कर रखी थी। एक बड़ा अभियोग उसके ख़िलाफ यह था—**जिसके बारे में भारत में किसी को ज़रा भी ख़बर नहीं थी—कि उसने ननकुमार (नन्दकुमार–अनु०) ब्राह्मण को जालसाज़ी के जुर्म में फांसी पर चढ़वा दिया था।** (किन्तु यह कारगुज़ारी तो **सर्वोच्च न्यायालय** की थी, अपनी मूर्खता की रौ में उसने अंग्रेज़ी कानून का इस्तेमाल किया था जिसकी वजह से एक जुर्म जो हिन्दू कानून में मामूली गलती माना जाता था, मृत्यु-दण्ड के योग्य अपराध बन गया था)। *फ्रांसिस ने हेस्टिंग्ज पर यह कह कर आरोप लगाया कि वह* नन्दकुमार को अपने रास्ते से हटा देना चाहता था। क्योंकि उसने **उसके (हेस्टिंग्ज के) ख़िलाफ़ गबन करने का अभियोग लगाया था।** बाद में पता चला कि नन्दकुमार का अभियोग झूठ-मूठ गढ़ लिया गया था, जिस पत्र के आधार पर उसे प्रमाणित किया गया था वह ख़ुद जालसाज़ी से तैयार किया गया था।

१७७६. लन्दन में अपने एजेन्ट (प्रतिनिधि) के नाम भेजे गये अपने एक निजी पत्र में, हेस्टिंग्ज ने इस्तीफा देने के अपने इरादे का ज़िक्र किया; एजेन्ट ने इस बात को जाहिर कर दिया; किन्तु **कर्नल मौन्सन की मृत्यु हो गयी** जिसकी वजह से **कौंसिल में** हेस्टिंग्ज को **निर्णायक मत** प्राप्त हो गया; इसलिए लन्दन के अपने एजेन्ट को उसने लिखा कि वह नौकरी नहीं छोड़ेगा; किन्तु **डायरेक्टरों** ने एलान कर दिया कि वह तो इस्तीफ़ा दे चुका है।

१७७७. डायरेक्टरों के इस मनमाने कार्य से उत्साहित होकर कौंसिल के वरिष्ठ सदस्य की हैसियत से **जनरल क्लेवरिंग** ने सत्ता के अधिकार-चिन्ह पर अधिकार कर लेने की कोशिश की। हेस्टिंग्ज ने उसके साथ अनुचित अधिकार-हरण करने वाले की तरह व्यवहार किया, फ़ोर्ट विलियम के फाटकों को उसने बन्द करवा दिया, **सर्वोच्च न्यायालय** ने हेस्टिंग्ज के पक्ष में फ़ैसला दिया, क्लेवरिंग क्रोध से **जल गया। बारवेल** प्रस्तावित त्यागपत्र के मार्ग में बाधा न पड़े, इसलिए फ़्रान्सिस ने हेस्टिंग्ज से वादा किया कि उसके त्यागपत्र की वजह से **कौन्सिल में** उसका जो **बहुमत** हो जायगा उसका वह बेजा इस्तेमाल नहीं करेगा; ज्यों ही बारवेल हट गया त्योंही फ़्रान्सिस ने अपने वादे के बिल्कुल खिलाफ काम किया। हेस्टिंग्ज ने उसके ऊपर धोखेबाजी का आरोप लगाया; दोनों के बीच **डुएल (द्वन्द्व-युद्ध)** हुआ जिससे फ्रांसिस घायल हो गया। इसके बाद ही वह इंग्लैंड वापिस चला गया और हेस्टिंग्ज को थोड़े समय के लिए शान्ति मिली, **किन्तु इससे पहले—**

१७७२-१७७५—के मराठों के हाल-चाल। १७७२, माधोराव पेशवा की मृत्यु हो गयी। उसका भाई नारायण राव उत्तराधिकारी बना, राघोबा ने तुरन्त उसकी हत्या कर दी।

१७७३. राघोबा ने गद्दी पर कब्जा कर लिया; निज़ाम के खिलाफ़ उसने युद्ध छेड़ दिया। निज़ाम ने २० लाख रुपये देकर शान्ति ख़रीदी। दो राजनीतिज्ञों, नाना फड़नवीस तथा सखाराम बापू ने जनाने से लेकर एक बालक को **माधोराव द्वितीय** के नाम से गद्दी पर बैठा दिया, यह बालक माधोराव की मृत्यु के बाद पैदा हुआ उसका बच्चा समझा जाता था। रीजेन्टों (प्रति संरक्षकों) के रूप में राज्य की सत्ता पर इन दोनों आदमियों ने अधिकार कर लिया।

१७७४ राघोबा ने रीजेन्टों को बुरी तरह हरा दिया; किन्तु पूना पर

करने के बजाय वह **बुरहानपुर** की तरफ और फिर वहां से **गुजरात** की तरफ अपने देशवासी, **गायकवाड़** से मदद मांगने के लिए चला गया।

गुजरात के गायकवाड़ का राजवंश . **पूर्व-पुरुष पिलाजी गायकवाड़** था (जो पेशवा के प्रति वफादार था)—**१७३२ में उसकी मृत्यु हो गयी थी।** उसकी जगह उसका वेटा **दमाजी गायकवाड़** गद्दी पर बैठा; उसने अपनी अमलदारी का विस्तार किया, अपने को पेशवा से उसने स्वतन्त्र कर लिया; **१७६८ में उसकी मृत्यु हो गयी।** मृत्यु के बाद उसके तीन वेटे थे : **गोविन्दराव, सायाजी** और **फतेसिंह। गोविन्दराव और फतेसिंह** में गद्दी के लिए झगडा हुआ, **राघोबा** ने **फतेसिंह** का साथ दिया, इसमे बड़े मराठा सरदारो, **होल्कर और सिन्धिया** ने भी उसका समर्थन किया।

१७७५. साजिशें करके **नाना फड़नवीस** ने होल्कर और सिन्धिया को इस गुट से तोड लिया, वे लोग उससे अलग हो गये। अब **राघोबा** ने **बम्बई** मे स्थिति अंग्रेजो के पास समझौते के लिए सन्देश भेजे; **बम्बई की सरकार** ने स्वयम् उसे फसाने की नियत से राघोवा के साथ—

६ मार्च १७७५—के दिन **सूरत की संधि** कर ली। इसमे तै हुआ कि : (१) पेशवा की गद्दी फिर हासिल करने मे अंग्रेज राघोवा की सहायता करेंगे; (२) राघोवा व्यापारिक कामों के लिए अंग्रेजों को **सालसेट** (का द्वीप)और **बेसिन** (वम्बई के समीप का अत्युत्तम वन्दरगाह) दे देगा, और **बम्बई सरकार** को सालाना ३७ लाख रुपया देगा।—यह सन्धि **अवैधानिक** थी : **१७७३ के नियामक क़ानून** मे कहा गया था कि "**संधियाँ करने** और **कर लगाने, फौजों की भर्ती करने और उन्हे नौकर रखने** के कामो के सम्बन्ध मे खासतौर से, और नागरिक तथा सैनिक प्रशासन से सम्बन्धित तमाम मामलो के विषय मे, आमतौर से" "**अधीन प्रेसीडेन्सियाँ**" (**बम्बई** तथा **फोर्ट सेंट जौर्ज** की, अर्थात् मद्रास की प्रेसीडेन्सियाँ) "**बंगाल के गवर्नर जनरल** के मातहत रहेगी।" इस भाँति, हेस्टिंग्ज तथा कलकत्ते की कौसिल [से अधिकार प्राप्त किये] बिना वम्बई की सरकार यह सन्धि नही कर सकती थी; जो आर्थिक सहायता राघोवा देने वाला था वह भी **बम्बई सरकार** को नही, जैसा कि तै हुआ था, वल्कि पूरी कम्पनी को ही दी जा सकती थी। इन कारणो के आधार पर फ्रान्सिस ने हेस्टिंग्ज को उक्त सन्धियो को रद्द करने के लिए मजबूर कर दिया और इस तरह अंग्रेजों को जबर्दस्त मुसीबतो के गढे मे ढकेल दिया।

१७७५. प्रथम मराठा युद्ध। कर्नल **कीटिंग** को आर्डर दिया गया कि वम्बई

की अंग्रेज सेना को लेकर राघोवा के साथ वह सम्बन्ध स्थापित करे, रीजेन्ट
की सेना ने उनके ऊपर माही नदी के किनारे हमला कर दिया। बडोदा के
पाम-अर्रास में उसकी पूर्ण विजय हुई; मराठा फौजें नर्बदा नदी की तरफ
भाग गयीं; गुजरात से कूच करके फतेसिंह ने कीटिंग के साथ सम्बन्ध
स्थापित कर लिया। सफलतापूर्ण हो गयी।—किन्तु हेस्टिंग्ज को नीचा
दिखाने के लिए, सूरत की सन्धि को कौन्सिल के बहुमत ने अवैध घोषित
कर दिया और बम्बई सरकार के विरुद्ध देशी रजवाड़ों के नाम (!) एक
गश्ती-पत्र जारी कर दिया गया। तब पूना की गद्दी के संरक्षकों (रीजेन्टों)
ने माँग की कि सालसेट और बेसिन को उन्हें वापिस दे दिया जाय।
कम्पनी की तरफ से, कर्नल अप्टन ने ऐसा करने से [यह कहकर] इन्कार
कर दिया कि कानून की दृष्टि में पेशवा राघोवा है। बम्बई सरकार की तरफ
से, अप्टन ने मराठों के खिलाफ युद्ध की घोषणा कर दी। इस पर रीजेन्टों ने
सन्धि का प्रस्ताव रखा; तब उसी अप्टन ने, जिसने अभी-अभी राघोवा
को वैधानिक पेशवा घोषित किया था, मराठा राज्य के प्रतिनिधियों की
हैसियत से नाना फड़नवीस तथा सखाराम बापू के साथ सन्धि कर ली।

१ मार्च, १७७६—पुरन्दर (पूना के समीप) की सन्धि हुई : इस शर्त पर कि
सालसेट उनके पास रहेगा और अन्य उन तमाम इलाकों को जो पहले
मराठों के थे वे छोड़ देंगे; ब्रिटिश फ़ौजें मोर्चे से हट जायेंगी; यह भी
तै हुआ कि अंग्रेजों को, जब तक वे माधोरव द्वितीय को पेशवा मानते
रहेंगे, १२ लाख रुपया सालाना तथा भड़ौच [ज़िले की] आमदनी मिलती
रहेगी। राघोबा को धता बता दी गयी, उससे कहा गया कि अगर वह
गोदावरी के उस पार बना रहेगा तो उसे मराठों से ३ लाख रुपया साल
मिलता रहेगा। किन्तु बम्बई सरकार ने सूरत सन्धि पर ज़ोर दिया, पुरन्दर
की सन्धि को उसने तोड़ दिया; राघोबा को सूरत में उसने पनाह दे दी और
भड़ौच पर चढ़ाई कर दी। गद्दी के प्रतिसरक्षकों ने युद्ध का एलान कर
दिया; अंग्रेज़ों ने बम्बई में राघोवा का प्रदर्शन किया। इसके थोड़े ही समय
बाद बम्बई सरकार को देश से (इंगलैण्ड से-अनु०) डायरेक्टर मण्डल का
सन्देश मिला जिसमें पुरन्दर की सन्धि को नामन्ज़ूर कर दिया गया था और
सूरत की सन्धि को स्वीकृति दे दी गयी थी।

१७७८. माड़ोबा फड़नवीस ने—रीजेन्ट नाना फड़नवीस के चचेरे भाई ने—
सखाराम बापू (जो गुप-चुप ढग से राघोवा के पक्ष में षड्यन्त्र कर ...
था) के साथ समझौता करके, होल्कर के साथ मिलकर, राज ...

अपना एक दल बना लिया। इस दल ने **बम्बई सरकार** से अपील की; उसने उसकी प्रार्थना को स्वीकार कर लिया और कलकत्ते चिट्ठी लिखी। हेस्टिंग्ज ने मजूरी दे दी क्योकि **नाना फड़नवीस** फ्रासीसियों के पक्ष मे था और क्योकि **सूरत की संधि** के अन्तर्गत कम्पनी राघोबा के अधिकार को स्वीकार करती थी।—**नाना फड़नवीस** लौटकर पुरन्दर चला गया, उसने होल्कर को घूस देकर उक्त गुट से अलग करा दिया, **माधोराव** की ओर से उसने एक सेना इकट्ठा की, माडोबा और सखाराम को हरा दिया। माडोबा को उसने मार दिया और सखाराम को **पूना** मे, जहाँ विजय के बाद वह स्वयम् चला गया था, उसने कैद कर लिया। **बम्बई सरकार** ने उसके विरुद्ध युद्ध [*की घोषणा*] कर दी। इसका आधार राघोबा के साथ उसकी सन्धि थी।

१७७९. *द्वितीय मराठा अभियान।* *कर्नल एगरटन को पूना पर हमला करने* के लिए भेजा गया, किन्तु **असैनिक विभाग के कर्मचारियो (सिविलियनों)** ने (जिनका प्रधान **जनरल कार्नक** था) इस काम मे बाधा डाली। पूना के सामने पहुचने पर, **सिविल कमिश्नर** डर गये और राघोबा तथा कर्नल एगरटन की आज्ञा के विरुद्ध, उन्होने **फ़ौज को वापिस लौटने का हुक्म दे दिया।** रीजेन्ट की घुडसवार सेना ने तुरन्त उन पर हमला कर दिया; बहादुर कैप्टन हार्टले ने लडकर उसे रोकने की कोशिश की, किन्तु आगे के सिविलयन अधिकारी "सिर पर पैर रख कर भाग खड़े हुए।" रात में उनकी सेना ने **बड़गांव** मे पडाव डाला, उनके पड़ाव पर बम्बारी हुई, भयभीत कमिश्नरो ने **सिन्धिया** से, जो दुश्मन फौजो का नेतृत्व कर रहा था, हाथ जोड़कर प्रार्थना की कि वह उनकी जिन्दगियाँ बख्श दे, और उन्हे छोड़ दे, यानी उन्हे पीछे भाग जाने दे।

जनवरी १७७९. *बड़गॉव का ठहराव; बम्बई सेना को वापिस चला जाने* दिया गया, **राघोबा को** उस सेना ने मराठो के हवाले कर दिया (इस बात को समझ कर कि कमिश्नर लोग इसी तरह की कायरता दिखाएँगे राघोबा ने अपने आप सिन्धिया के सामने आत्म-समर्पण कर दिया था), और **पिछले ५ वर्षों में जितने इलाक़े पर उसने क़ब्ज़ा किया था उसको छोड़ दिया।** इस समाचार से **सर्वोच्च सरकार** आग-बबूला हो उठी; उसने नयी सन्धि का प्रस्ताव रखा। इसी दरम्यान, **राघोबा सूरत** भाग गया जहा कि **कर्नल गौडर्ड** सेना का प्रधान था। **नाना फड़नवीस** ने माग की कि राघोबा को उसके हवाले कर दिया जाय, गौडर्ड ने इन्कार कर दिया, नया युद्ध।

१७७९. तीसरा अभियान । **गौडर्ड गुजरात** [गया], वहाँ फतेसिंह और राघोवा आकर उससे मिल गये, [उन्होने] अहमदाबाद पर अधिकार कर लिया; वहाँ होल्कर और सिंधिया के नेतृत्व मे मराठों ने उनका विरोध किया, वे पराजित हुए और वर्षा के दिनो मे उन्होने नर्वदा के किनारे पड़ाव डाल दिये ।

१७८०. हेस्टिंग्ज़ ने आर्डर दिया कि **आगरा के समीप सिंधिया की अमलदारियो** के ऊपर हमला करने के लिए **मेजर पौफम** के नेतृत्व में एक छोटी-सी **सेना तैयार की जाय । पौफम ने ग्वालियर पर**, उसके क़िले पर—जो कि लगभग एक सीधी खडी चट्टान के ऊपर अत्यन्त ऊँचाई पर स्थित था—अधिकार कर लिया । फिर पौफम की छोटी-सी सैन्य शक्ति को और वड़ा वनाया गया और फिर जनरल **कार्नक** की कमान मे उसने मराठो की छावनी पर रात मे सफलतापूर्वक **हमला किया** । अपने तमाम भडारो को छोडकर, सिन्धिया भाग गया ।

१७८०. का उत्तरार्ध । भारत से अंग्रेज़ों को निकाल भगाने के लिए मराठों और मैसूर वालों का महासंघ । तै हुआ कि होल्कर, सिंधिया तथा पेशवा (अर्थात्, वास्तव मे, नाना फड़नवीस) **बम्बई** पर हमला करेंगे, **हैदर अली मद्रास पर चढ़ाई करेगा** और **नागपुर** (वरार) **का राजा मुधोजो भोंसले** कलकत्ते पर आक्रमण करेगा । इसका नतीजा (देखिए, पृष्ठ १२८-१२९)–

१७ मई, १७८२—सालबाई (ग्वालियर मे) की सन्धि के रूप में सामने आया · इसमे तै हुआ कि अंग्रेज़ उस तमाम इलाके को जिस पर उन्होने पुरन्दर की सन्धि (१७७६) के वाद से क़ब्ज़ा किया था वापिस दे देंगे, **राघोवा** लड़ाई की तमाम कार्रवाइयो को वन्द कर देगा, उसे सालाना तीन लाख रुपया दिया जायगा और अपने रहने के लिए वह स्वयम् कोई स्थान चुन लेगा; **हैदरअली ६ महीने के अन्दर तमाम अंग्रेज बन्दियों को रिहा कर देगा और जिन अमलदारियों को** उसने **जीता था** उन्हें **मुक्त कर देगा**; अगर वह ऐसा नही करेगा तो **मराठे उस पर आक्रमण करेंगे ।**

हैदरअली । १७७० मे, उसने घूस देकर मराठो को मिला लिया था; उसके वाद वह शान्ति-पूर्वक रहता रहा था । १७७२ मे, **राघोबा** द्वारा **नारायण राव** की हत्या कर देने तथा उसके वाद होने वाले उपद्रवों के वाद, उसने **कुर्ग** को अनावश्यक निर्दयता के साथ अपने अधीन कर लिया; १७७४ तक उसने उन तमाम ज़िलो को फिर से जीत लिया जिन्हे मराठों ने उससे ज़बर्दस्ती छीन लिया था । १७७५ मे, **बसालतजंग** (निज़ाम के

भाई) से उसने बिलारी को छीन लिया और १७७६ मे उसने (धारवार के समीप, वम्बई प्रेसीडेंसी मे) मराठा सरदार, **मुरारी राव** के राज्य **सवानूर** को तहस-नहस कर दिया। **पूना के रीजेन्टों** ने (बालक राजा के प्रतिमरक्षको ने) उसे कुचलने की व्यर्थ चेष्टा की।

१७७८. मैसूर राज्य का कृष्णा नदी तक विस्तार कर लिया गया।

१७७९. इंगलैण्ड और फ्रान्स के बीच युद्ध छिड़ गया; हैदर ने घोषित किया कि वह फ्रास की तरफ है। **अंग्रेजों ने लड़कर फ्रान्सीसियों से पाँडिचेरी तथा माही को जीत लिया।**

१७८०. हैदरअली महासंघ मे शामिल हो गया, उसने **मद्रास पर हमला** करने की तैयारी शुरू कर दी।

१७८०. द्वितीय मैसूर युद्ध। २० जूलाई को, **हैदर** ने चगामा के दर्रे से **कर्नाटक** पर चढाई कर दी, उसे उसने नष्ट-भ्रष्ट कर दिया। भयकर अत्याचार किये, जलते हुए **गाँवों** का धुआ मद्रास तक से दिखलाई देता था।—**अंग्रेज सेना** मे केवल आठ हजार सैनिक थे, तीन डिवीजनो मे बँटे हुए ये एक दूसरे से काफी दूर-दूर के फासले पर थे। **कर्नल बेली** ने जब कमाण्डर-इन-चीफ **सर हेक्टर मुनरो** के साथ गुन्टूर मे मिलने की कोशिश की तो *उस पर मराठो की एक बडी घुडसवार सेना लेकर टीपू साहेब ने* रास्ते मे ही हमला कर दिया; **बेली** ने बडी मुश्किल से उसे पीछे भगाया और आगे बढता गया, किन्तु तभी उसके और मुनरो के बीच **हैदर** घुस आया—

६ सितम्बर, १७८०—के दिन उसने बेली की फौज को घेर लिया और पोलीलोर के छोटे-से गाँव के समीप उसके **करीब-क़रीब एक-एक सैनिक को** उसने **मौत के घाट उतार दिया।**—१७८० के आखिरी भाग में, हैदर ने अर्काट पर कब्ज़ा कर लिया।

जनवरी, १७८१. सहायक कुमुक लेकर समुद्र के रास्ते कलकत्ते से **सर आयर कूट** वहाँ आ गया, **कुड्डलूर** के नजदीक **पोर्टोनोवो** पर उसने हैदर पर हमला किया, उसे जबर्दस्त जीत हासिल हुई।

जूलाई, १७८१. कर्नल पोयर्स के नेतृत्व में बंगाल का सैन्य दल नागपुर के **राजा** की मदद मे, उड़ीसा के अन्दर से कूच करता हुआ, **पुलीकट** पहुँच गया, वहाँ वह कूट के साथ मिल गया, और **उन्होंने मिलकर पोलोलोर के छोटे-से गाँव के समीप (पुलीकट के पास) हैदर के साथ युद्ध** किया जो **अनिर्णायक रहा।**

२७ सितम्बर । शालिगढ़ के पास (मद्रास प्रेसीडेन्सी के अंदर, उत्तरी अर्काट में) कूट की निर्णायक विजय हुई, बाद मे वर्षा ऋतु मे वह मद्रास की छावनी मे चला गया ।

१७८१ का आख़िरी भाग । (सर टॉमस रमबोल्ड के स्थान पर) लार्ड मेकार्टने मद्रास का प्रेसीडेन्ट बना । उसका पहला काम था नेगापट्टम के डच क़िले पर चढ़ाई करके उसे ज़मींदोज़ करना और वहाँ पर स्थित डच फैक्टरियों को नष्ट करना; यह काम उसने डायरेक्टरों के, जो दक्षिण में डचों के बढ़ते हुए व्यापार से जलते थे, गुप्त आदेशो पर किया था । तेलीचेरी मे भी अंग्रेजों को थोड़ी-सी सफलता मिली । मलबार तट पर आक्रमण करने की गरज़ से हैदरअली ने कर्नाटक पर चढ़ाई करने की कोशिशें बन्द कर दी ।

१७८२. फ्रान्सीसी बेड़े की मुलाकात एक स्थान पर, जो पोर्टोनोवो से अधिक दूर नही था, अंग्रेजों के एक बेडे से हो गयी । अंग्रेजो का यह बेडा लंका में त्रिन्कोमालीके डच बन्दरगाह को जीत कर लौट रहा था । सामुद्रिक लडाई मे कोई फैसला न हो सका । एक छोटी-सी सैन्य-शक्ति लेकर फ्रान्सीसी पांडिचेरी पहुंच गये और हैदरअली के साथ मिल गये ।

जूलाई, १७८२. दो नौसैनिक लड़ाइयां हुई । जिस स्थान पर ये लडाइयां हुईं वह नेगापट्टम से बहुत दूर नहीं था । दोनो मे ही कोई फैसला न हो सका ।— एक फ्रान्सीसी सैन्यदल प्वाइंट दगाल (लंका) मे उतरा; वहाँ से मार्च करके वह त्रिन्कोमाली गया, नगर पर फिर उसने कब्ज़ा कर लिया, और वहाँ के (अंग्रेज) गेरीसन को नष्ट कर दिया । लका के पास एडमिरल ह्यूग्स ने फ्रास के जहाज़ी बेडे को हराने की कोशिश की जो बेकार हुई, ह्यूग्स (बेडे को लेकर) बम्बई चला गया । फ्रान्सीसी समुद्र के मालिक हो गये ।

१७८२ के आख़िरी दिनों में, टीपू साहेब ने पालघाट (कोयम्बटूर के समीप) स्थित अंग्रेजो की पक्की छावनी पर हमला कर दिया; उस पर कब्ज़ा करने की पहली कोशिश मे वह फेल हो गया तो उसने छावनी के रास्ते काट दिये और ७ दिसम्बर तक वहीं पड़ा रहा, तभी उसे हैदरअली की अचानक मृत्यु की ख़बर मिली और वह अपनी तमाम सेनाओ को लेकर मैसूर लौट गया ।

दिसम्बर, १७८२. हैदरअली की मृत्यु, वह तब ८० वर्ष का था । उसके

मंत्री, प्रसिद्ध राजस्वविद् पूर्णिया ने टीपू के आ जाने तक उसकी मृत्यु के समाचार को छिपाये रखा।

... ...

दिसम्बर, १७८२. टीपू साहेब का राज्याभिषेक; [उसको] एक लाख आदमियो की एक बढिया फौज और रुपये-पैसे तथा हीरे-जवाहरत की विशाल सम्पदा मिली।

१ मार्च, १७८३. टीपू, जिसने पहले अपनी ताकत को चुपचाप सुदृढ बना लिया था, मगलौर के खिलाफ कार्रवाई करने के लिए पश्चिमी तट की तरफ गया।

१७८३ जून के आरम्भ मे। बुसी, जो उत्तमाशा अन्तरीप के पूर्व स्थित तमाम फ्रान्सीसी सेनाओ का सेनाध्यक्ष था, एक फ्रान्सीसी सैन्यदल लेकर कुड्डलूर पहुच गया, वहाँ उसने देखा कि टीपू पश्चिमी तट की तरफ गया हुआ था और हैदरअली मर चुका था; उस पर फौरन (सर आयरकूट के उत्तर प्राधिकारी) जनरल स्टूआर्ट ने हमला कर दिया।

७ जून, १७८३. अंग्रेजो ने कुड्डलूर की एक चौकी पर अधिकार कर लिया, इसमे उन्हे भारी नुकसान उठाना पडा।—उसी दिन एक स्थान पर जो कुड्डलूर से दूर नही था, नौसैनिक टक्कर हो गई जिसमे एडमिरल ह्यूग्स हार गया और अपनी शक्ति को फिर से सगठित करने के लिए मद्रास वापिस चला गया; फ्रासीसी विजेता सूफ्रॉं ने २४०० नाविको और मल्लाहो को तट पर उतार दिया, इनका एक ब्रिगेड बन गया जो बुसी की सेना के साथ जोड दिया गया।

१८ जून, फ्रान्सीसियो ने तेजी से हमला किया (सार्जेन्ट बर्नाडोट, जो बाद मे स्वीडन का बादशाह बना था, मौजूद था); हमले को असफल कर दिया गया; तभी इंगलैण्ड और फ्रांस के बीच शान्ति हो जाने की खबर आयी, जनरल स्टुआर्ट उसे सुनकर मद्रास लौट गया; बुसी ने अपनी स्थिति और मजबूत कर ली। इसी दर्म्यान बम्बई सरकार ने एक सैन्यदल भेजा था जिसने बेदनूर तथा मलबार तट के अनेक अन्य स्थानो पर कब्ज़ा कर लिया था। टीपू फिर उनकी तरफ बढा, बेदनूर पर उसने पुनः अधिकार कर लिया, गेरीसन को (रक्षक सैन्यदल को) उसने बन्दी बना लिया, और फिर १ लाख सैनिको तथा सौ तोपो को लेकर उसने मंगलौर (१८०० सैनिक) पर घेरा डाल दिया; नौ महीने तक

डटे रहने के बाद उसे आत्म-समर्पण करना पड़ा।—इसी समय **कर्नल फुलर्टन** ने **मद्रास से मैसूर** पर चढ़ाई कर दी, **कोयम्बटूर** पर कब्ज़ा कर लिया, और जब वह **श्रीरंगपट्टम** की ओर जा रहा था तभी लार्ड **मेकार्टने** ने उसे वापिस बुला लिया। लार्ड मेकार्टने मूर्खतावश (देखिए, पृष्ठ १३३) **शान्ति की बातचीत** शुरू कर दी।—पहले प्रस्तावो मे यह कहा गया था कि एक दूसरे के विरुद्ध लडाई की कार्रवाइयाँ बंद कर दी जायें। मेकार्टने ने **अंग्रेज़ी फ़ौजों को वापिस बुला लिया; टीपू** ने आस-पास के प्रदेश की लूट-पाट को **जारी रखा;** कमिश्नरो के साथ [उसने] बदसलूकी की और उनसे कहा कि जब तक उसके आदेशानुसार **मंगलौर की सन्धि** पर वे दस्तख़त न कर दे तब तक वहाँ से न जायें। मंगलौर की सन्धि का आधार यह था कि उन इलाकों को वापिस कर दिया जाय जो उन्होंने एक दूसरे से जीते थे।

१७७०-१७७५. मद्रास के प्रेसीडेन्ट मिस्टर विन्च बने। तंजोर का घृणित काण्ड[1] (पृष्ठ-१३४)।

१७७५-१७७७. लार्ड पिगोट मद्रास के प्रेसीडेन्ट थे। इस "बूढे" आदमी ने (डाइरेक्टरों के आर्डर से) न सिर्फ **तंजोर** के **राजा** को उसका वह राज्य फिर दे दिया जिसे (कर्नाटक के) **"कम्पनी के नवाब", मुहम्मद अली** ने १७७६ मे उससे छीन लिया था, बल्कि उसने सार्वजनिक सेवा की विभिन्न शाखाओ में चलने वाले **भ्रष्टाचार तथा धनापहरण** को भी रोकने की जुर्रत की; फिर, खास तौर से, उसने एक **किसी पालबेनफ़ील्ड** के खिलाफ़ **जाँच करने** की गल्ती की, क्योंकि उस "कुत्ते" ने **तंजोर की आमदनी के एक भाग को पाने का** अधिकारी होने का **झूठा दावा** किया था। **कौन्सिल** ने, जो प्रेसीडेन्ट के हमेशा खिलाफ़ रहती थी, उसकी बुरी तरह बेइज्ज़ती कर दी; उसने उस **संस्था** के दो **सदस्यों को पदच्युत कर दिया,** बहुमत **खामोश हो गया। पिगोट** को जेल में डाल दिया गया, वहाँ तब तक **सख्ती से बन्द करके उसको**

---

[1] विन्च के प्रशासन काल मे तंजोर पर अधिकार कर लिया गया था और उसे बुरी तरह से लूटा गया था।—नाम के लिए यह काण्ड कम्पनी के सैनिको की मदद से कर्नाटक के नवाब ने किया था, लेकिन वास्तव मे उसे कम्पनी और अंग्रेज सूदखोरों ने ही किया था। लूट के माल का सबसे बड़ा हिस्सा नवाब के निजी "लेनदारो" के हाथो में गया। इस चीज पर कम्पनी के लन्दन-स्थित डायरेक्टर-मण्डल ने बहुत आपत्ति की थी।

रखा गया जब तक कि उसकी मृत्यु नहीं हो गई ! इसके लिए—प्रेसीडेन्ट की हत्या करने के लिए—किसी को सजा नहीं दी गयी !

१७७७-१७८० सर टौमस रमबोल्ड मद्रास के प्रेसीडेन्ट बने। उनके खिलाफ़ षड्यंत्र रचे गये (पृष्ठ १३५-१३८), उनकी जगह पर **लार्ड मेकार्टने** की नियुक्ति हुई, वे १७८१ के आखिरी दिनों में आये।

१७८३-१७८५. वारेन हेस्टिंग्ज के प्रशासन का अन्त। चारों तरफ से उत्पीडित होकर, हेस्टिंग्ज ने **जबर्दस्त क्रोध का प्रदर्शन** किया। **सर्वोच्च** न्यायालय का रुख बहुत खराब था; वह अपने को प्रशासन के तमाम विभागों का सर्वेसर्वा समझता था, उसने यह दिखाने की कोशिश की कि उसका काम **सरकार के कृत्यों के "दोषों को देखना"** था। सरकार ने कानून बनाकर यह तै कर दिया था कि **जमींदारों** के साथ केवल **मालगुजारी वसूल करने वालों** जैसा व्यवहार किया जाय, **अगर वे रुपया न चुकायें तो उन्हें गिरफ्तार किया जा सकता था और सजा दी जा सकती थी;** *अंग्रेज जज इस कानून पर अत्यन्त उग्रता से अमल करते थे,* **शक्तिशाली,** *तथाकथित* **जमीदार राजाओं** को *अक्सर वे गिरफ्तार* करवाकर जेलों में डलवा देते थे और थोडे-से भी गबन के लिए उनके साथ **साधारण अपराधियों जैसा व्यवहार** करते थे। इस तरह जमींदारों *की प्रतिष्ठा मिट्टी में मिला दी गयी थी, रैयत अक्सर उन्हें लगान देने से* इन्कार कर देती थी; फलस्वरूप, **जमींदार लोग** रैयत के ऊपर और भी अधिक **मनमाने ढंग से दमन करते थे और उससे जबर्दस्ती रुपया वसूलते थे !**

जौर्ज प्रथम (१७२६) तथा **जौर्ज तृतीय** (१७७३) की उस **सनद के अनुसार,** जिसमें **सर्वोच्च न्यायालय** की नियुक्ति की गयी थी, अब **भारत में इंगलैण्ड का सम्पूर्ण सामान्य कानून लागू कर दिया गया था;** कुन्द खोपडी वाले अंग्रेज उस पर सख्ती से अमल करते थ, और इसका नतीजा यह था कि **देशी लोगों** को (देखिए, पृष्ठ १३९) ऐसे जुर्मों के लिए—जो उनके अपने कानून के अन्तर्गत कुछ भी महत्व नहीं रखते थे—**फांसी पर लटका** दिया जाता था !

कोसीजुरा कांड इसलिए हुआ था कि अंग्रेजों की न्याय-प्रणाली के अनुसार **अभियुक्तों से उनके मुकदमें के लिये जमानत मांगी गयी थी;** इस केस में कोसीजुरा के राजा (अर्थात् जमींदार) के **खिलाफ़ मालगुजारी का एक मुकदमा सर्वोच्च न्यायालय** में (पृष्ठ १३९-१४०) लाया गया था (इस

केस में कुर्क अमीन राजा के जनाने के भीतरी कक्ष मे घुस गये थे और, अदालत में उनकी हाजिरी की जमानत के रूप में, उनके गृह देवता को उठा ले गये थे)। हेस्टिंग्ज ने चूंकि कोसीजुरा को बचाने की कोशिश की और यह आदेश जारी कर दिया कि देशी लोगों को दीवानी के मामलों में—अगर वे खुद उसके न्याय को अपनी मर्जी से न चाहें—सर्वोच्च न्यायालय के मातहत नहीं मानना चाहिए, इसलिए सर्वोच्च न्यायालय ने कौंसिल और गवर्नर जनरल को "अदालत का अपमान करने के जुर्म" मे अपने सामने तलब कर लिया। हेस्टिंग्ज ने उसकी जरा भर भी परवाह न की।

मालगुजारी के प्रशासन को नए ढंग से संगठित किया गया और "वारेन हेस्टिंग्ज की संहिता" का निर्माण हुआ (पृष्ठ १४०)। (अन्य चीजों को करने के साथ-साथ, हेस्टिंग्ज ने मालगुजारी के काम को नागरिक प्रशासन के काम से अलग कर दिया, पहले काम को "अस्थायी" की संज्ञा उसने दी और दूसरे को "जिला" अदालतों की। इन दोनों के ऊपर, अपील की अदालत के रूप मे, "सदर दीवानी अदालत"[1] की स्थापना उसने कर दी। इस अदालत के लिए उसने सर एलीजा इम्पी को चीफ जस्टिस (प्रधान न्यायाधीश) नियुक्त किया।

१७८४. चेतसिंह का मुकदमा, हेस्टिंग्ज ने उसे बनारस का राजा बना दिया था (१४०–१४१)।

फ़ैजुल्ला खां का मुकदमा। अवध के नवाब आसफुद्दौला के साथ एक सन्धि की गयी थी जिसके अन्तर्गत अवध में स्थित अंग्रेज फ़ौज का खर्च वह भरता था; [इस फौज की] संख्या कम कर दी गयी और आपस में तै कर लिया गया कि किसके क्या अधिकार होंगे; सन्धि की तीसरी धारा में हाफ़िज रहमत (रुहेले) के भतीजे फ़ैजुल्ला खां का उल्लेख था, यह तै हुआ था कि जब वह रुहेलों का सरदार बन जायगा तब कम्पनी की सेना की संख्या मे वृद्धि करने के लिए वह तीन हजार आदमी जमा करेगा; पिछले कुछ दिनों मे हेस्टिंग्ज उससे मांग कर रहा था कि वह पांच हजार आदमी दे, फ़ैजुल्ला खां ने साफ़-साफ़ कह दिया कि इतने आदमी वह नही दे सकता। अवध के साथ अपनी सन्धि की धारा तीन मे हेस्टिंग्ज ने कहा कि चूंकि रुहेलखण्ड फ़ैजुल्ला के "सामन्ती स्वामी," अवध के नवाब की केवल जागीर थी, इस लिये उसे [अवध के नवाब को] ले लेना चाहिए; बाद मे १५ लाख रुपये

---

[1] दीवानी के मुकदमों की अपील का सर्वोच्च न्यायालय।

देकर उसने [फैजुल्ला खाँ ने] उसे वापिस प्राप्त कर लिया; इसके बाद हेस्टिंग्ज़ कलकत्ता लौट गया।

१७८५. कलकत्ते के अपने पद से त्याग-पत्र देकर [हेस्टिंग्ज] इंगलैण्ड [वापिस लौट गया]। इंगलैण्ड में उसकी मुसीबतें; **पिट उसका दुश्मन;** इसलिए **बर्क** (पिट के आदमी) ने उसके खिलाफ ज़ोरदार भाषण दिये (देखिए, पृष्ठ १४२-१४३)। **१८१८ में (८६ वर्ष की अवस्था में) हेस्टिंग्ज़ की मृत्यु हो गयी। (दूसरे राज्यों को हड़पने की** नीति के अलावा, हेस्टिंग्ज का एक और बड़ा अपराध, जिसे पिट नापसन्द करता था, यह था कि **भारत में स्थित कम्पनी के नौकरों की तनख़ाहों** को उसने इस लिए **बढ़ा दिया था** जिससे कि उन "नीच लोगों" की लूट-खसोट को बन्द कर दिया जाय, जो अपनी तनखा के ज़रिए नहीं, बल्कि **हिन्दुओं से जबर्दस्ती वसूल** किये गए **रुपयों** के द्वारा अपनी तिजोरियाँ भर लेना चाहते थे।)

.. . .

[ब्रिटेन में ईस्ट इंडिया कम्पनी के हाल-चाल]

मार्च, १७८०. ईस्ट इंडिया कम्पनी के एकान्तिक विशेषाधिकार, जिनकी मियाद को हर तीन वर्ष बाद बढ़ाया जाता था, समाप्त हो गये; पार्लामेन्ट ने कानून बनाकर उनकी अवधि को १७८३ तक बढ़ा दिया, सरकार द्वारा दिये गये कर्ज़ों के एवज में—बकाये को आंशिक रूप से चुकता करने के लिए—**कम्पनी** को ४ **लाख** पौंड सार्वजनिक कोष में देने थे। हैदर अली के साथ किये गये युद्ध की पूरी जाँच करने के लिए **एक गुप्त** (पार्लामेन्टरी) कमेटी नियुक्त कर दी गयी; एक **दूसरी कमेटी** इस बात के लिए बना दी गयी कि **कलकत्ते की सर्वोच्च** कौंसिल के हिंसापूर्ण कार्यों के विरुद्ध देशी बंगालियों ने **जो अर्जियाँ** दी थी उनकी वह जाच-पड़ताल करे।

९ अप्रैल, १७८२. ईस्ट इण्डिया डायरेक्टर मंडल के सदस्य, मिस्टर हेनरी डुंडास ने भारत में जिस तरह काम हो रहा था उसकी अत्यन्त उग्रता से भर्त्सना की (इस गंदे आदमी पर, जो बाद में, १८०६ में, **मेलविल का अर्ल** हो गया था, भ्रष्टाचार के आरोप पर पार्लामेन्ट में मुकदमा चलाया गया था; पहले वह नोर्थ और फौक्स का आदमी था, बाद में

वह पिट का आदमी हो गया था); मई १७८२ में उसने प्रस्ताव रखा कि वारेन हेस्टिंग्ज को वापिस बुला लिया जाय। पार्लामेन्ट ने इस प्रस्ताव को पास कर दिया, किन्तु मालिकों के मण्डल ने अपनी एक आम सभा करके डायरेक्टरों को वापिस बुलाने के लिए आर्डर भेजने की अनुमति देने से इन्कार कर दिया।

१७८२. लार्ड नौर्थ का मन्त्रिमंडल गिर गया था; उसके बाद सेलबोर्न का मन्त्रिमण्डल कायम हुआ था; अप्रैल, १७८३ में फौक्स और नौर्थ के संयुक्त मन्त्रिमंडल ने इसे भी गिरा दिया।

१७८३ (नौर्थ और फ़ौक्स का संयुक्त मन्त्रिमण्डल।) फौक्स का "इण्डिया बिल" पेश हुआ। कम्पनी ने एक और कर्ज के लिए अर्जी दी (पहला ऋण पार्लामेंट ने १७७२ में उसे दिया था); दरिद्रता के इस दूसरे एलान को लेकर देश मे भारी शोर उठ खडा हुआ। अपने बिल में, फ़ौक्स ने निम्न प्रस्ताव रखा था; कम्पनी के पट्टे को ४ साल के लिए निलम्बित कर दिया जाय; इस बीच भारत की सरकार का काम पार्लामेंट द्वारा नामजद किये गये सात कमिश्नर चलायें; व्यापार सम्बन्धी तमाम कामों की देख-भाल मालिक मंडल द्वारा नामजद किए गए ९ सहायक कमिश्नर करें; ज़मीदारों को पुश्तैनी भूस्वामी मान लिया जाय; युद्ध और सन्धियों से सम्बंध रखने वाले तमाम प्रश्नों के विषय में भारत सरकार इंगलैण्ड में स्थित एक नियंत्रण मंडल के अधीन रहे। (यह आखिरी [व्यवस्था] बाद मे पिट के बिल में शामिल कर ली गयी थी। जब तक भारत में लार्ड वैलेज़ली का प्रशासन था, उसने इस धारा की रत्ती भर भी परवाह नही की थी।) फ़ौक्स का बिल नीचे के सदन मे पास हो गया, जौर्ज तृतीय ने लार्ड लोगों को आर्डर दिया कि वे इस बिल को रद्द कर दें, इसके बाद—

जनवरी, १७८४—जौर्ज तृतीय ने फौक्स और उनके सहयोगियों को डिसमिस कर दिया; नये मन्त्रिमडल का प्रधान पिट बन गया; कम्पनी के प्रति उसका रुख मित्रतापूर्ण था और उसके व्यापार में उसने तरह-तरह से मदद दी।

१३ अगस्त, १७८४—पिट का "इण्डिया बिल"; राजस्व सम्बंधी मामलों का नियंत्रण करने के लिए प्रिवी कौन्सिल के छै सदस्यों की एक कमेटी कमिश्नर मंडल के रूप मे काम करने के लिए नियुक्त कर दी गयी और इस मंडल के आदेशों को प्राप्त करके उन्हें कार्यान्वित करने के लिए तीन डायरेक्टरों की गुप्त कार्यों की एक समिति बना दी गयी। मालिकों के

मंडल के हाथ में सरकार सम्बन्धी कोई अधिकार नहीं रह गये। तै हो गया कि युद्ध सम्बन्धी तमाम काम-काज तथा सन्धियाँ कमिश्नर मण्डल के आदेशों के अनुसार और उसी की आज्ञा से की जायेंगी। राज्यों को हड़प लेने की नीति खत्म कर दी जायगी। भारत सरकार के मातहत काम करने वाले प्रत्येक अफसर को इंगलैंड लौटने पर अपनी सम्पत्ति की पूरी सूचना देनी पड़ेगी और उसमें उसे यह भी बताना पडेगा कि उस सम्पत्ति को उसने किस प्रकार प्राप्त किया था। विशाल बहुमत से १७८४ मे यह बिल पास हो गया; इसके बाद से कमिश्नर मंडल का अध्यक्ष ही भारत का निरंकुश गवर्नर बन गया। इस पद पर सबसे पहले धूर्त डुन्डाज़ (मेलविल) की नियुक्ति हुई थी।

इस धूर्त डुन्डाज के सामने जो पहला मामला पेश हुआ वह अर्काट के नवाब (उर्फ कर्नाटक के मुहम्मद अली) के क़र्ज़ का था। यह मुहम्मद अली एक जबर्दस्त ऐयाश, गुलछर्रे उडाने वाला व्यभिचारी था, उसने लोगो से व्यक्तिगत तौर पर बड़ी-बड़ी रकमें उधार ले ली थीं। इन्हे वापिस करने के लिये वह उन्हे ज़मीन के काफ़ी बड़े-बड़े इलाक़ों की आमदनी वसूल करने का अधिकार सौंप देता था। कर्ज़दार (अर्थात् धोखेबाज़ अंग्रेज़ सूदखोर) इस चीज को "बहुत लाभदायक" पाते थे। इस स्थिति ने "नीच लोगों" को आनन-फानन बड़े-बड़े भूस्वामियों में बदल दिया और रैयत के उत्पीड़न से भारी सम्पदा बटोरने का मौका दे दिया; इसलिए नये-नये योरोपीय (अर्थात् अंग्रेज) जमींदार देशी किसानो के प्रति जुर्म—वह भी सबसे घृणित किस्म के—करते थे। उन्होंने और नवाब ने पूरे कर्नाटक को तबाह कर दिया।

१७८५. लुटेरे डुन्डाज़ तथा कमिश्नर मडल ने (जिसका वह अध्यक्ष था) इस सवाल को अपने हाथ मे लिया और खून चूसनेवाले बदज़ात अंग्रेजों के अधिकतम हित मे उसे तै कर दिया। देश (कर्नाटक) को महाजनो के शिकन्जे से मुक्त कराने के बहाने, उन्होंने यह प्रस्ताव रखा कि नवाब के कर्ज़ों को चुकाने के लिए ४ लाख ८० हज़ार पौंड हस्तगत कर लिये जायें, जिससे कि ईस्ट इन्डिया कम्पनी से—जिसने उसकी बहुत मदद की थी—पहले उन व्यक्तिगत सूदखोरों का कर्ज़ा चुकवा दिया जाय जिन्होंने नवाब को बर्बाद कर दिया था। कामन्स सभा मे दुष्ट डुन्डाज़ को बताया गया कि उस योजना से बेनफ़ील्डों तथा उन अन्य लोगों को विशाल धनराशियाँ प्राप्त हो जायेंगी जिन्होने बेईमानों का एक पूरा गुट बना

लिया था और कर्नाटक की वैध आमदनी को छल-कपट के द्वारा खूब लूटा था। पिट के घृणित मंत्रिमंडल ने—इसके बावजूद !–इस बिल को सदन में पास कर दिया। इसकी वजह से केवल पौलबेनफील्ड को कर्नाटक की आमदनी में से ६ लाख पौंड मिल गये ! (यह उसी डुन्डाज़ मेलविल की कारगुज़ारी थी जो बाद मे, १८०६[1] के उस गन्दे काण्ड मे जाकर मरा था)। भ्रष्टाचार के पुतले, डुन्डाज़ ने क़र्ज़ों को तीन वर्गों में बाँट दिया। इसमे सबसे बड़ा भाग १७७७ का संघनित ऋण था। वारेन हेस्टिंग्ज़ ने जो योजना रखी थी उसमे इस कर्ज़ को १५ लाख देकर चुका दिया जाता, किन्तु डुन्डाज़ की योजना की वजह से उसे चुकाने के लिए ५० लाख देने पड़े ! और २० वर्ष बाद (१८०५ मे) जब कि पुराने कर्ज़ों के आखिरी हिस्सो को भी चुका दिया गया था, जैसी कि उम्मीद की जा सकती थी, पता चला कि इस बीच मुहम्मद अली ने ३ करोड़ के नये क़र्ज़ ले डाले थे। उसके बाद एक नयी जाँच बैठायी गयी। यह जाँच ५० वर्ष तक चलती रही, उस पर १० लाख पौंड खर्च हुआ। इसके बाद ही नवाब के मामले अन्तिम रूप से तै किये जा सके। गरीब भारतीय जनता के साथ ब्रिटिश सरकार—क्योंकि पिट के बिल के पास हो जाने के बाद से [भारत मे] कम्पनी का नही, बल्कि उसी का दौर-दौरा था–इसी तरह व्यवहार करती थी !

. . . . . . , ...

[६] लार्ड कार्नवालिस का प्रशासन, १७८५-१७९३

१७८५-१७८६. वारेन हेस्टिंग्ज़ के रिटायर (कार्यनिवृत्ति) हो जाने के बाद कलकत्ते की कौन्सिल के वरिष्ठ सदस्य, सर जौन मैकफर्सन फिलहाल गवर्नर जनरल बन गये। वित्तीय सुधार के द्वारा उन्होंने सरकारी कर

[1] १८०६ मे, लार्ड्स सभा मे डुन्डाज़ (मेलविल) के ऊपर सरकार की भारी रकमों का गबन कर लेने के अपराध मे मुकदमा चलाया गया था। ये रकमें उसने (१८०४-१८०५ में) नौसेना के हिसाब में से उस समय उड़ा ली थी जिस समय कि वह "नौवाहन का प्रधान" (एडमिरलटी का प्रथम लार्ड) था।

मे १० लाख पौंड की कमी कर दी। **लार्ड मेकार्टने** गवर्नर जनरल नामजद होने वाला था, किन्तु पार्लमिन्ट मे डुडाज का विरोध होने की वजह से यह प्रस्ताव तुरन्त खत्म कर दिया गया।

१७८६. **कार्नवालिस** कलकत्ते पहुंचे।–अवध के नवाब, **आसफ़ुद्दौला** ने उससे प्रार्थना की कि **उसकी अमलदारी में ब्रिटिश सेना के रख-रखाव के लिए** उससे जो खर्चा लिया जाता था उसमे कमी कर दी जाय, कार्नवालिस ने, रेजीडेन्ट की सलाह के विरुद्ध, उक्त रकम को घटाकर **७४ लाख से ५० लाख कर दिया।** रेजीडेन्ट का कहना था कि ऐसा न किया जाय क्योंकि जो रुपया बचेगा उसे आसफ **रंडियों और शिकार में उड़ा देगा।**—नाना फड़नवीस ने निज़ाम के साथ सुलह कर ली और टीपू के खिलाफ खुले आम लडाई की तैयारियाँ करने लगा। **टीपू** ने उसे ४५ लाख देकर तुष्ट कर दिया।

१७८८ ब्रिटिश फौजो ने **गुन्टूर के सरकार के इलाकों** को हड़प लिया। सच बात यह है कि **१७६८ की सन्धि** मे, निजाम ने कम्पनी से वादा किया था कि उस प्रान्त के गवर्नर, **बसालत जंग** की मृत्यु के बाद गुन्टूर सरकार के इलाको को वह उसे दे देगा। १७८२ मे बसालत जग की मृत्यु हो गयी। अब निजाम ने अंग्रेजो से माँग की कि वे **सन्धि के दूसरे अंश** को भी **पूरा करें,** अर्थात् **हैदर अली के वंश से कर्नाटक के बालाघाट को भी उसके लिए जीत दें,** जिससे कि उसकी आमदनी से वह मराठों को **चौथ** चुका सके! किन्तु एक के बाद एक **दो सन्धियों में अंग्रेज खुद ही** हैदर और टीपू को **कर्नाटक के बालाघाट** का राजा स्वीकार कर चुके थे! कार्नवालिस ने—

१७८८–मे, निजाम से वादा किया कि किसी भी सत्ता के विरुद्ध–जिसका इगलैण्ड के साथ कोई समझौता नही है–ब्रिटिश फौजे उसकी मदद करेंगी; **उसने यह भी वादा किया कि कर्नाटक का बालाघाट ज्योंही अंग्रेजो का हो जाता है त्योंही वह उसके नाम स्थानांतरित कर दिया जायगा!** कार्नवालिस की **"इस धोखेबाजी पर" टीपू सुलतान आग-बबूला हो उठा।**

ईस्ट इंडिया कम्पनी के सहयोगी, **त्रावनकोर के राजा** ने **कोचीन में डच लोगों** से **दो शहर** खरीद लिये थे और उनको किलेबन्द कर दिया था। **कोचीन** के सरदार ने, जो टीपू का गुमाश्ता था, उसके आदेश पर घोषणा कर दी कि वे दोनों शहर उसके थे। राजा ने अंग्रेजो से मदद की अपील की और कोचीन के सरदार ने टीपू से। टीपू ने त्रावनकोर की रक्षापाँतों

पर हमला किया, किन्तु राजा ने उसे हरा दिया।—टीपू और अंग्रेजों के बीच युद्ध की घोषणा हो गयी।

१७९०. कार्नवालिस की "त्रिदलीय सन्धि", अर्थात् नाना फड़नवीस और निज़ाम के साथ उसका आक्रमणात्मक तथा रक्षात्मक समझौता।

१७९०-१७९२. मैसूर का तृतीय युद्ध (१७९१ में, कार्नवालिस स्वयम् सेना की कमान कर रहा था)। श्रीरंगपट्टम के बाहरी प्राचीरों के ध्वस्त हो जाने के बाद (फरवरी, १७९२), टीपू ने हार मान ली; उसे अपना आधा देश देना पड़ा; मित्रों के गुट को ३० लाख पौण्ड युद्ध के खर्च की मद में देने पड़े, ज़मानत के तौर पर उसे अपने दो बेटे अंग्रेज़ों के पास रखने पड़े और ३० लाख रुपये मराठों को देने पड़े। कम्पनी ने अपने लिए डिंडीगुल और बड़ा महल को उनके आसपास के इलाक़ों के साथ ले लिया; बम्बई के पास भी उसने कुछ ज़मीन ले ली। टीपू के राज्य के बाकी भाग का एक-तिहाई हिस्सा (जिसमें कर्नाटक का बालाघाट भी शामिल था) पेशवा को मिला और दूसरा एक-तिहाई भाग निज़ाम ने पाया। कामन्स सभा में राज्यों को हड़पने की उसकी नीति को लेकर कार्नवालिस पर अभियोग लगाया गया, वह पास न हो सका। उल्टे, उसे मारक्विस की उपाधि दे दी गयी।

सितम्बर, १७९३. फ्रान्सीसियों की अन्तिम तथा सबसे महत्वपूर्ण सम्पत्ति, पांडिचेरी को कर्नल ब्रैथवेट ने छीन लिया…कार्नवालिस इंगलैण्ड लौट गया।—उसके न्याय-सम्बन्धी सुधार आगे (पृष्ठ १५६-१५८)।

१७८४-१७९४. सिंधिया की सफलता। सालबाई (ग्वालियर में) की १७८२ की सन्धि के द्वारा दक्षिण भारत में उसे विशाल शक्ति प्राप्त हो गयी थी (देखिए पृष्ठ ९३)[1]।

१७८४. सिंधिया दिल्ली गया, कठपुतली बादशाह शाहआलम (आलमगीर द्वितीय का बेटा और एक ज़माने का बांका रसिया शाहज़ादा) से मिला। उसे "साम्राज्य के प्रधान कार्य-संचालक" की उपाधि उसने दी तथा शाही सेनाओं का उसे प्रमुख सेनाध्यक्ष बना दिया और आगरा तथा दिल्ली के प्रान्त उसे भेंट में दे दिये।—[उसने] राजपूतों पर हमला कर दिया, बुरी तरह पराजित हुआ; उसकी सारी "शाही" सेनाएँ उसे छोड़कर दुश्मन से जा मिलीं।

---

१ इस संस्करण का पृष्ठ ६६।

१७८७. *सिंधिया* पर **इस्माइल बेग** (*भूतपूर्व प्रधान कार्य-संचालक,* **मुहम्मद बेग के भतीजे**) ने हमला कर दिया; इस्माइल ने आगरे पर अधिकार कर लिया, उसकी सहायता के लिए गुलाम कादिर (*ज़ाबिता खाँ* के बेटे) के नेतृत्व मे **रुहेलों का** एक मज़बूत **दल** आकर मिल गया। सिंधिया दिल्ली से चल पडा; उसने मित्र-गुट पर हमला किया, हार गया; रुहेला ने उत्तर की ओर चढाई कर दी; **सिंधिया** ने इस्माइल बेग की छोटी-सी सेना को हरा दिया। किन्तु इसी बीच बर्बर लुटेरे—रुहेलो ने **दिल्ली** पर कब्ज़ा करके उसे लूट डाला था; दो महीने तक वे उसे नष्ट करते और लूटते रहे थे। अन्त मे, **आलमशाह** की, जिसे उन्होंने कैद कर लिया था, आँखें उन्होने फोड़ दी। इस्माइल बेग अब सिंधिया की तरफ हो गया।

१७८८. *इन दोनो सहयोगियो ने संयुक्त रुप से दिल्ली पर कब्ज़ा कर लिया;* **आलमशाह** को फिर गद्दी पर बैठा दिया गया। **ग़ुलाम क़ादिर** को यातनाएं देकर मार डाला गया; इस्माइल बेग को बहुमूल्य जागीर देकर टाल दिया गया। सिंधिया ने—जो एक तरह से दिल्ली का शासक बन गया था—**फ्रान्सीसी, अंग्रेज, और आयरलैण्ड के कुछ अफ़सरों** की देख-रेख मे सिपाहियो की बढिया सेना सगठित की, उसने लोहे के ढलाई के बडे-बडे कारखाने स्थापित किये; अनेक तोपें, आदि, आदि, ढलवायी।

१७९१. **सिन्धिया ने राजपूतों के खिलाफ़ सफल अभियान** चलाया।—*मुग़ल* **साम्राज्य को मराठों के** *कब्जे मे ले लेने लिए—*

१७९२. मे, उसने **शाहआलम** से **पुश्तैनी प्रतिनिधि** का अधिकार अपने और अपने **वारिसों** के **नाम लिखवा लिया** और **पेशवा** को **वकीले मुतलक** (**साम्राज्य का प्रतिसंरक्षक**) बनवा दिया। वह खु़द पूना गया, **पेशवा** को यह सम्मान उसने अपने हाथ से सौंपा। पेशवा ने स्वयम् अपने दरबार मे उसे अपने वजीर, **नाना फड़नवीस** के समकक्ष सम्मान दिया। इसके बाद मे इस युग के *दस सबसे "कुशल राजनीतिज्ञ" तथा सिन्धिया और उसके* वशजो के बीच जो अभिसन्धियाँ चली *मराठों का आगे का इतिहास उन्हीं के* इर्द-गिर्द चक्कर काटता रहा।

१७९३. **होल्कर** को, जो मराठा सरदारों के बीच सत्ता की दृष्टि से दूसरा स्थान रखता था, युद्ध में **सिन्धिया ने हरा दिया;** अब सिंधिया **हिन्दुस्तान का एकछत्र स्वामी बन गया।**

१७९४. महाद जी सिन्धिया की अचानक मृत्यु हो गयी; उसकी तमाम उपाधियाँ तथा पद उसके भतीजे के लड़के दौलतराव सिन्धिया को प्राप्त हुए।

. . . .

१७८६-१७९३. पार्लमिन्ट की कार्यवाहियाँ : १७८६, बिल पास हो गया जिसमे गवर्नर जनरल को यह अधिकार दे दिया गया कि अपनी कौंसिल की सलाह लिए बिना वह ख़ुद क़ानून बना दे; वेलेजली ने, जो बाद मे गवर्नर जनरल बन गया था, देखा कि "सब कुछ ठीक था"; क़ानून इसलिए पास किया गया था कि आइन्दा से [गवर्नर जनरल] उन सब विघ्न-बाधाओं से छुटकारा पा जाय जिन्होंने वारेन हेस्टिंग्स को हलाकान कर डाला था।

१७८८. कम्पनी के डायरेक्टर मंडल तथा ताज के प्रतिनिधि कमिश्नर मंडल मे झगड़े के कारण घोषणात्मक क़ानून पास किया गया। मंत्रिमंडल ने आर्डर दिया कि भारत में विशिष्ट सेवा-कार्य के लिए चार नये रेजीमेंट भर्ती किये जायें, कम्पनी ने उनके पोतारोहण तथा रख-रखाव के खर्चे को देने से इन्कार कर दिया। कमिश्नर मण्डल ने कम्पनी को आदेश दिया कि वह आवश्यक कोष प्रस्तुत करे। डायरेक्टरों ने कहा कि वित्तीय मामलो के सम्बन्ध मे फ़ैसला करने का मुख्य अधिकार उन्ही को था। पिट ने बहुत पहले, १७८४ में ही घोषणा कर दी थी (और अब उसने इस बात को फिर दोहराया) कि मंत्रिमंडल का इरादा यह है कि भविष्य मे किसी समय कम्पनी भारत की समस्त शासकीय सत्ता को राष्ट्र के हाथों में सौंप दे। सदन मे अत्यन्त कोलाहलमयी बहसें हुईं। घोषणात्मक कानून केवल १७८४ के क़ानून को लागू करता था; उसने राज्य सम्बन्धी समस्त मामलो मे कम्पनी के काम-काज को निर्धारित करने की सत्ता कमिश्नर मंडल को सौंप दी था। १७९३ में, कम्पनी के विशेषाधिकारों की मियाद एक नये पट्टे के द्वारा २० वर्ष के लिए और बढ़ा दी गयी।

. . . .

[ज़मींदारों के पक्ष में रैयतों की ज़मीन को ज़ब्त कर लिया गया, १७९३][१]

---

१ इस उप-शीर्षक के नीचे जो अंश—यहां से लेकर पृष्ठ ११८ की बिन्दुकित रेखा तक—दिया गया है वह मार्क्स की उसी नोट-बुक (पेज ६८ और ७०) के "(ई) ब्रिटिश शासन तथा भारत की सार्वजनिक सम्पत्ति पर उसका प्रभाव" नाम के उपभाग से लिया गया है।

१७९३—बंगाल के गवर्नर जनरल, **लार्ड कार्नवालिस** (उनका प्रशासन, १७८६-१७९३) के आर्डर पर भूमि की **मालगुजारी** ठहराने के लिए किये गये प्रथम सर्वेक्षण के दौरान **बंगाल की जमीन को जमींदारों की निजी सम्पत्ति मान लिया गया था।** (१७६५ में अंग्रेज़ो ने देखा कि "सार्वजनिक राजस्व को इकट्ठा करने वाले"—जमींदार यह दावा करने लगे थे कि वे जमींदार राजा है—यह अधिकार धीरे-धीरे उन्होने मुगल साम्राज्य के क्षय के काल में हथिया लिया था।) (उनके अधिकार-काल का स्वरूप **पुश्तैनी** इसलिए हो गया था कि जब तक उन्हे उनका **सालाना टैक्स** मिलता जाता था तब तक महान् मुगल इस बात की परवाह नही करते थे कि अधिकार का ढग क्या था, सालाना **टैक्स एक निश्चित रक़म** होती थी—जिन्ने की अपनी आवश्यकताओं के बाद जो कुछ बचता था उसी को सालाना पैदावार माना जाता था। इसके ऊपर जमींदार जो कुछ हासिल कर लेता था वह उसकी अपनी सम्पत्ति होती थी, **इसलिए वह रैयत को खूब लूटता था।**) राजा माने जाने का दावा वे [जमींदार] इसलिए करने लगे थे कि लूट-खसोट के द्वारा उन्होंने भूमि तथा द्रव्य के रूप मे भारी सम्पदाएँ इकट्ठा कर ली थी, वे फौजों का खर्च देते थे और उन्होने राजकीय अधिकार अख्तियार कर लिये थे। अंग्रेज सरकार (१७६५ [से]) उनके साथ **टैक्स इकट्ठा करने वाले केवल अधीनस्थ कर्मचारियों** जैसा व्यवहार करती थी, उनके काम को उसने कानूनी बंधनो से बाँध दिया था और इस बात की **व्यवस्था कर दी थी** कि नियमित रूप से रुपया देने मे अगर वे ज़रा भी गड़बडी करें तो उन्हें जेल **तक में डाला जा सकेगा या उनके पद से हटा दिया जायगा। दूसरी तरफ, रैयत की हालत में कोई सुधार नहीं किया गया था;** वास्तव में उसे और भी अधिक हीनता तथा उत्पीडन की स्थिति मे पहुचा दिया गया था, और **मालगुजारी की पूरी व्यवस्था को अस्त-व्यस्त कर दिया गया था।**

१७८६. डायरेक्टरो ने, **नीति के रूप में,** आज्ञा दी कि **जमींदारों** के साथ एक नया समझौता किया जाय जिसमे इस बात को बिल्कुल साफ कर दिया जाय कि उन्हे जो भी विशेषाधिकार हासिल है वे उनके अपने अधिकार नही है, बल्कि **गवर्नर** और उसकी **कौन्सिल** की कृपा से मिले हुए अधिकार है। **जमींदारों की** हालत की जाँच-पड़ताल करने और उसके सम्बन्ध मे रिपोर्ट देने के लिए एक **कमीशन** नियुक्त किया गया; रैयत ने, जमींदारो द्वारा बदला लिये जाने के डर से, उसके सामने गवाही देने से इन्कार कर

दिया; जमींदारों ने तमाम प्रश्नों का उत्तर देने मे टाल-मटोल की, फलस्वरूप कमिश्नरो का काम ठप हो गया।

१७९३. लार्ड कार्नवालिस ने कमीशन को खत्म कर दिया और बिना किसी पूर्व चेतावनी के, अचानक कौन्सिल मे यह प्रस्ताव पास कर दिया कि अभी से जिस [इलाके पर] जमीदार अपने अधिकार का दावा करते थे उस सबके वे स्वामी समझे जाएंगे। ज़िले की तमाम ज़मीन के वे पुश्तैनी मालिक समझे जाएँगे, हर साल सरकार को वे सरकार के लिए इकट्ठा किये जाने वाले सार्वजनिक टैक्सों का कोटा नहीं, बल्कि राज्य के कोष को एक प्रकार की भेंट दिया करेंगे।

मिस्टर शोर ने, जो बाद मे सर जौन शोर हो गया था, यानी उस धूर्त ने जो कार्नवालिस के पद पर उसका उत्तराधिकारी बना था, कौन्सिल मे भारतीय परम्परा को पूर्णरूप से नष्ट करने के विरुद्ध एक जबर्दस्त भाषण दिया; और जब उसने देखा कि कौन्सिल का बहुमत तै कर चुका था कि (लगातार क़ानून के बोझ से तथा हिन्दुओ की हैसियत के सम्बन्ध मे बराबर होते रहने वाले झगडो से छुटकारा पाने के लिए) जमींदारो को जमीन का मालिक घोषित कर दिया जाय, तब उसने यह प्रस्ताव रखा कि हर दस वर्ष पर पैमाइश की जाय, किन्तु कौन्सिल ने स्थायी पैमाइश के पक्ष मे ही फैसला किया। कमिश्नर मण्डल ने उसके प्रस्ताव की प्रशसा की और—

१७९३—में, पिट के प्रधान मंत्रीत्व के काल में, "भारत के जमींदारों को" स्थायी तौर से "पुश्तैनी भूस्वामी" बनाने का बिल पास कर दिया। मार्च, १७९३ में यह फैसला कलकत्ते मे लागू कर दिया गया। आश्चर्य-चकित जमीदार ख़ुशी से फूले नही समाये। यह कानून जितना अचानक और अनपेक्षित था, उतना ही अवैध था, क्योकि अंग्रेजों का काम हिन्दू जाति की ओर से कानून बनाना तथा, जहाँ तक सम्भव हो, उनके ऊपर स्वय उनके क़ानूनों को लागू करना था। साथ-साथ अग्रेज सरकार ने कई ऐसे कानून पास किये जिनसे कि जमींदारों के खिलाफ़ दीवानी की अदालत में जाकर राहत पाने का अधिकार रैयत को मिल गया तथा उसके लिए इस बात की सुरक्षा हो गयी कि लगान नहीं बढ़ाया जायगा। देश की अवस्था को देखते हुए ये [कानून] निरर्थक मृत-पत्र जैसे थे, क्योंकि रैयत इस तरह पूर्णतया जमीदारों की कृपा पर निर्भर करती थी कि अपनी

के निमित्त कुछ भी करने की विरले ही उसकी हिम्मत होती थी।—ऊपर जिन कानूनो का जिक्र किया गया है उनमे से **एक के द्वारा जमीन के लगान को हमेशा के लिए निश्चित कर दिया गया था।** उसमे कहा गया था कि रैयत को एक लिखित पट्टा दिया जाय। इस दस्तावेज़ मे लिखा रहना चाहिए कि उसके अधिकार की क्या शर्ते हैं और **लगान की कितनी रक़म उसे हर साल देनी होगी।** इस कानून मे ज़मीदार को इस बात की छूट थी कि **नयी ज़मीनों को जोत कर वह अपनी अमलदारी के मूल्य को बढ़ा ले और जिन खेतों पर ऊंची क़ीमत वाले ग़ल्ले की बोआई होती हो उनके लगान को बढ़ा दे।**

१७९३. इस प्रकार **कार्नवालिस और पिट** ने बंगाल की **ग्रामीण आबादी की सम्पत्ति को चालाकी से छीन लिया।** (पृष्ठ १६१)।

१७८४. पार्लामेन्ट ने "ईस्ट इडिया कम्पनी के मामलो" तथा "भारत में" ब्रिटिश "सम्पत्ति" को ठीक करने के लिए निर्णायक ढग से हस्तक्षेप किया। इसी उद्देश्य से **जोर्ज तृतीय का २४वां क़ानून,** अध्याय २५ पास किया गया। फिर यही कानून ब्रिटिश भारत के विधान का आधार बना। इस कानून ने **भारत के मामलात की** देख-भाल के लिए कमिश्नरों का एक बोर्ड कायम किया। आमतौर से इसे **नियंत्रण बोर्ड** कहा जाता था। *इसका काम था कि अपने अधिकारों के राजनीतिक भाग का इस्तेमाल* करते हुए वह **ईस्ट इंडिया कम्पनी** की देख-भाल और उसका नियन्त्रण करे। कानून की **२९वीं धारा** के अन्तर्गत, कम्पनी को इस बात का *आदेश दिया गया था कि ब्रिटिश भारत में* **विभिन्न राजाओ, ज़मींदारों, पोलीगरों तथा अन्य भूपतियों** के ऊपर किये गये जुल्मों के सम्बन्ध मे जो कुछ **शिकायतें** थी उनकी सच्चाई की जाँच-पड़ताल करे, और, "**भारत के विधान तथा क़ानूनों के, अनुसार, नरमी तथा न्याय के सिद्धान्तों के आधार पर**" ज़मीन की मालगुज़ारी वसूलने के सम्बन्ध मे भविष्य के लिए स्थायी नियम बना दे।

१७८६. **मारक्विस कार्नवालिस** गवर्नर जनरल के रूप मे भारत [आया]; **डायरेक्टर मंडल तथा नियंत्रण बोर्ड** के आदेश के अनुसार (जिसे इगलैण्ड मे वह अपने साथ लेता आया था), इस आदमी ने फौरन—

१७८७ में—**नागरिक न्याय और पुलिस दण्ड सम्बन्धी अधिकारों को वित्तीय प्रबन्ध के अधिकारों के साथ फिर से मिला दिया और उन्हें कलक्टर को सौंप दिया;** ऐसा करने के लिए उसने कलक्टर को **प्रान्तीय दिवानी**

अदालत (मुफ़स्सिल दीवानी अदालत) का मजिस्ट्रेट और जज दोनों बना दिया, किन्तु राजस्व सम्बन्धी मुकदमों के जज (न्यायाधीश) की हैसियत से कलक्टर की खास अदालत उस दीवानी[1] अदालत से अलग बनी रही जिसका वह प्रधान था। दीवानी अदालत की अपील सदर दीवानी अदालत में होती थी, किन्तु उसकी [कलक्टर की] राजस्व सम्बन्धी अदालत की अपीलें कलकत्ते में स्थित रेवन्यू बोर्ड के पास ही जा सकती थी।

१७९३. बंगाल, बिहार और उड़ीसा के तीन प्रान्तों में कार्नवालिस ने इस्तमरारी (स्थायी) बन्दोबस्त कर दिया था। यहां पर पिछली वसूलियों के औसत के आधार पर हमेशा के लिए तै कर दिया गया था कि ये तीनों प्रान्त ज़मीन का कितना लगान देंगे। कार्नवालिस के इस बन्दोबस्त में यह व्यवस्था की गयी थी कि अगर मालगुजारी की रक़म न चुकायी जाय तो उसकी क़ीमत को ज़मीन को बेचकर उसे पूरा कर दिया जाय; किन्तु ज़मींदार "लगान पर लेने वाले किसान से अपने बक़ायों को केवल क़ानूनी कार्रवाई करके ही वसूल कर सकता था"। ज़मींदारों ने शिकायत की कि इस प्रकार के क़ानून से उन्हें निम्न वर्ग के असामियों की दया पर छोड़ दिया गया है। उनका कहना था कि सरकार तो उनसे सालाना वसूली करती थी, इसे न देने पर उनकी ज़मीन के बिक जाने का ख़तरा रहता था, किन्तु जिस रक़म को सरकार उनसे इस तरह ले लेती थी उसे अपने असामियों से वे क़ानून की एक लम्बी क्रिया के द्वारा ही वसूल कर सकते थे। इसलिए नये नियम बनाये गये। इनके अन्तर्गत, किन्हीं ख़ास मामलों में और अत्यन्त सावधानी से निर्धारित किये गये रूपों में, ज़मींदार को इस बात का अधिकार दे दिया गया कि अपने काश्तकारों से पैसा वसूलने के लिये वह उन्हें गिरफ़्तार कर ले। इसी प्रकार, ज़मींदारों के सम्बन्ध में यही अधिकार कलक्टर को दे दिया गया। यह १८१२[2] में [किया गया था]।

"बन्दोबस्त" के नतीजे : रैयत की "सामुदायिक तथा निजी सम्पत्ति" की इस लूट का पहला फल यह निकला कि "भूस्वामियों" [जो वे बना दिये गये थे] के ख़िलाफ़ रैयत ने स्थायी पैमाने पर जगह-जगह अनेक विद्रोह

---

१ सिविल कोर्ट।

२ देखिये · हॅरिंगटन की रचना : "बंगाल के क़ानूनों और नियमों का साधारण विश्ले... और कोलब्रुक की, "बंगाल के क़ानूनों और नियमों के सार-संग्रह का परिशिष्ट की टिप्पणी।

कर दिये; कही-कही तो ज़मीदारों को निकाल बाहर किया गया और उनके स्थान पर ईस्ट इंडिया कम्पनी को मालिक बना कर बैठा दिया गया। अन्य स्थानो पर जमींदार निर्धन हो गये और राजस्व के बकायों तथा निजी क़र्ज़ों को चुकाने के लिये उनकी जमींदारियों को जब्त कर लिया गया या उनकी मर्ज़ी से ले लिया गया। फलस्वरूप, प्रान्त की जोतों का अधिकतर भाग तेज़ी से शहर के कुछ थोड़े से उन पूंजीपतियों के हाथ में पहुंच गया जिनके पास अतिरिक्त पूजी थी और जो उसे ज़मीन मे लगाने के लिए आसानी से तैयार हो गये।[1]

... ...

[७] सर जौन शोर का प्रशासन, १७९३-१७९८

(कार्नवालिस के अवकाश-ग्रहण के समय कौंसिल के वरिष्ठ सदस्य की हैसियत से अन्तरिम काल के लिए उसे नियुक्त कर दिया गया था, बाद मे कमिश्नर मंडल ने ५ साल के लिए उसे गवर्नर जनरल बना दिया।)

१७९३. गवर्नर जनरल के कहने पर, (टीपू साहेब के विरुद्ध) १७९० की त्रिदलीय सन्धि के हस्ताक्षर-कर्त्ताओं ने एक गारंटी सन्धि पर भी दस्तख़त किये। इस सन्धि के परिशिष्ट मे यह स्पष्ट कर दिया गया कि अगर तीनो शक्तियों में से कोई एक किसी अवैध उद्देश्य के लिए टीपू सुल्तान के खिलाफ लड़ाई छेड़ देती है, तो दूसरी शक्तिया फिर इस सन्धि से बँधी नही मानी जाएँगी। नाना फड़नवीस ने इस पर हस्ताक्षर करने से इन्कार कर दिया, किन्तु निज़ाम ने उसे स्वीकार कर लिया।

१७९४. पेशवा, और आम मराठों ने, निज़ाम के खिलाफ़ लूट-खसोट की लड़ाई छेड़ दी। *त्रिदलीय सन्धि के आधार पर निज़ाम* ने सर जौन शोर से [मदद देने के लिए] कहा; विशाल मराठा फौज से डर कर, सर जौन शोर ने मदद देने से इन्कार कर दिया। तब निज़ाम ने फ्रान्सीसियों से सहायता मांगी। उन्होंने उसकी मदद के लिए दो बटालियनें भेज दी,

---

१ यह पैरा कोवालेव्स्की की पुस्तक का जो सारांश मार्क्स ने तैयार किया था उससे लिया गया है। यह सारांश मार्क्स की कालानुसारी टिप्पणियों के फ़ौरन बाद आता है।

इसके अलावा, फ्रांसीसी दुस्साहसिकों के नेतृत्व में [उसने] १८,००० सिपाहियों की एक फौज संगठित की.।

नवम्बर, १७९४. पेशवा यानी नौजवान माधोराव द्वितीय के नेतृत्व मे १५० तोपें और १ लाख ३० हज़ार आदमियों की सेना लेकर मराठों ने मध्य भारत पर चढाई कर दी । (इस सेना के लिए जनरल द-ब्वॉय के नेतृत्व मे २५ हज़ार सैनिक दौलतराव सिंधिया ने दिये थे; १५ हज़ार बरार के राजा ने; १० हज़ार होल्कर ने; १० हजार पिंडारियों ने; ५ हज़ार गायकवाड गोविन्दराव ने, और ६५ हजार पेशवा ने ।) खर्दा में फ़ौजो का सामना हुआ ।

नवम्बर, १७९४ निज़ाम अली की ज़बर्दस्त हार हुई, उसने हथियार डाल दिये तथा वादा किया कि ३० लाख पौंड तो वह फ़ौरन देगा और ३५ हज़ार पौंड आमदनी के मूल्य की वह ज़मीनें दे देगा । अपने योग्यतम मन्त्री को जमानत के तौर पर उसने मराठों के हाथ मे सौंप दिया—अंग्रेज़ो की "अनुत्तरदायी तटस्थता" से सही-सही नाराज होकर, निज़ाम ने उन तमाम ब्रिटिश सैनिकों को निकाल दिया जिन्हे वह तनखा देता था, [कुछ] और फ्रांसीसी बटालियनों को भर्ती किया, रेमों को उसने बटालियनो का प्रधान बना दिया, हैदराबाद में जो एक फ्रान्सीसी सेना रहने वाली थी उसके खर्चे के एवज मे उसने कुरपा के सम्पन्न प्रान्त को फ्रान्सीसियों को दे दिया। ज़मीन के एक टुकड़े को लेकर जो कम्पनी के इलाके की सीमा पर स्थित था शोर ने हस्तक्षेप किया । कुछ छिट-पुट वारदातो के बाद मामला वहीं रुक गया ।

अक्टूबर, १७९५. माधोराव द्वितीय ने आत्म-हत्या कर ली; उसकी जगह उसका चचेरा भाई, चालाक और धूर्त बाजीराव (राघोबा का बेटा) पदासीन हुआ ।—बाजीराव, नाना फड़नवीस तथा सिंधिया (दौलतराव) की साजिशों के फलस्वरूप, (देखिए पृष्ठ १६४-१६८)—

४ दिसम्बर, १७९६ में—कुछ समय के लिए बाजीराव की जगह उसको हटा कर उसका भाई चिमाजी गद्दी पर बैठ गया, बाद मे निज़ाम, फड़नवीस, आदि की मदद से पूना मे उसे फिर गद्दी पर बैठा दिया गया; अब उसने नाना फड़नवीस को डिसमिस कर दिया और अपने महल की सबसे गहरी काल कोठरी मे बन्द कर दिया । अब उसके सामने सिंधिया को हटाने का काम था । सर्वाजनिक रूप से उसने सिंधिया को वह जागीर देने से मना दिया जिसका उसने वादा किया था; सरजीराव घटके ([illegible]

धोखेबाज अफसर) की मदद से पूना में सिंधिया की सेनाओं से उसने एक भयंकर विद्रोह करवा दिया (सिंधिया इसके बारे मे कुछ नही जानता था ।) इस प्रकार, पूना की जनता को उसने सिंधिया के विरुद्ध कर दिया और उसे वापिस उत्तर की ओर भेज दिया ।

१७९६. कलकत्ते में कम्पनी के अफसरों ने (*शाही ब्रिटिश नें नहीं*) **विद्रोह कर दिया,** उन्हें कम्पनी के सिविल अफसरों से **कम तनखा दी जाती थी;** उन्होंने **तनखा मे वृद्धि,** आदि की माग की (देखिए, पृष्ठ १६८) । इस चीज को **सर रौबर्ट एवरक्रोम्बी** (कानपुर के कमाण्डर) के हस्तक्षेप से खत्म कर दिया गया । (**क्लाइव के काल में १७६६ में** जो सैन्य-द्रोह *हुआ था उसके बाद उस तरह की यह दूसरी घटना थी*) ।

१७९७. मद्रास की मेयर की अदालत को (**जिसे जौर्ज** प्रथम ने **१७२६** मे स्थापित किया था) **जौर्ज तृतीय** के ३६वें कानून के द्वारा खत्म कर दिया गया; उसके स्थान पर लन्दन शहर की **क्वार्टर सेशन अदालत** के नमूने पर **रिकौर्डर्स (दण्डाधिकारी) अदालत** की स्थापना कर दी गयी । (इसमें *मेयर तो नाम का, असली न्यायाधीश रिकौर्डर ही होता था ।*) (देखिए, पृष्ठ १६९, टिप्पणी १)

१७९७. अवध के नवाब, आसुफ़ुद्दौला की (निठल्लेपन और ऐयाशी की जिन्दगी के बाद) मृत्यु हो गयी । उसके एक ख्याति प्राप्त बेटे को, जिसका नाम **वजीर अली** था, **अंग्रेजों ने गद्दी** पर बैठा दिया । बाद मे स्वय अंग्रेजो ने *उसे गद्दी से उतार कर उसकी जगह आसफ के भाई सआदत अली को* सिंहासन पर बैठा दिया । सहादत अली के साथ अंग्रेजो ने **संधि** कर ली कि **अवध मे १० हजार अंग्रेज सैनिकों के गैरीसन को रखा जायगा;** उनका सदर दफ्तर **इलाहाबाद के क़िले में होगा** और **उनके खर्च के लिए** [नवाब] **७६ लाख रुपया सालाना देगा** तथा **गवर्नर जनरल को अनुमति के बिना नवाब और कोई संधियां नहीं करेगा ।**

मार्च, १७९८. सर जौन शोर इगलैण्ड वापिस लौट गया और लार्ड टॅगिनमाउथ बना दिया गया ।

[८] लार्ड वेलेजली का प्रशासन, १७९८-१८०५

जिस समय वह कलकत्ते पहुंचा टीपू साहेब बदले के लिए बेचैन हो रहे थे; निज़ाम के पास हैदराबाद मे रेमों के नेतृत्व में १४००० फ्रान्सीसियों की एक सेना थी, और ३६ तोपें थीं; दिल्ली मे ४०,००० सिपाहियों की फौज की मदद से, जिसके अफसर द ब्वांय के नेतृत्व में फ्रान्सीसी लोग थे, सिन्धिया शासन करता था। ४६० तोपें भी उसके पास थीं, खजाना खाली था।

१७९९. चौथा और अन्तिम मैसूर युद्ध। (टीपू साहेब ने मारीशस से फ्रान्सीसी सेना को बुलाया था और वह उन्हें मिल भी गयी थी। इस पर वेलेजली ने युद्ध की घोषणा कर दी।) वेलेजली ने निज़ाम के साथ यह *समझौता कर लिया कि हैदराबाद के फ्रान्सीसी सैनिकों को हटाकर* उनकी जगह अंग्रेज सैनिक रख लिए जाएँ। पेशवा और निज़ाम दोनों ने सन्धि की शर्तें पूरी कर दीं। सिन्धिया और नागपुर के राजा ने वेलेजली को मदद देने से और उसके साथ मित्रता करने से इन्कार कर दिया। अंग्रेज कमिश्नर मंडल ने टीपू के खिलाफ युद्ध करने की अनुमति दे दी।

५ फरवरी, १७९९ वेलेजली ने २०,००० अंग्रेज सैनिकों, १०० तोपों, २०,००० सिपाहियों और देशी घुड़सवार सेना को लेकर चढ़ाई कर दी, हैरिस कमान्डर-इन-चीफ (प्रधान सेनापति) था।—मलावली (मैसूर में) की लड़ाई मे, जहां टीपू की पराजय हुई थी, कर्नल वेलेजली ने (जो बाद मे ड्यूक आफ वेलिंगटन हो गया था) पहली बार भारतीय भूमि पर पैर रखा था।

३ मई[१] १७९९. श्रीरंगपट्टम पर अधिकार कर लिया गया। टीपू साहेब की लाश (उसके सिर मे गोली मार दी गयी थी, इत्यादि) खाई के पास मिली। (वेलेजली को मारक्विस बना दिया गया।) वेलेजली ने मैसूर को *पांच वर्ष के बच्चे को दे दिया। यह* मैसूर के पुराने हिन्दू राजवंश (जिसे टीपू ने सिंहासन-च्युत कर दिया था) से सम्बन्ध

---

१ विल्क्स की पुस्तक, "मैसूर का पता लगाने की कोशिश के रूप मे दक्षिण भारत के रेखा-चित्र", खण्ड ३, लन्दन १८१७ के अनुसार—४ मई।

रखता था; **पूर्णिया** को उसका मन्त्री बना दिया गया था। (यह बालक १८६८ तक जीवित रहा, फिर उसकी जगह उसका **गोद लिया हुआ बेटा** गद्दी पर बैठा। वह चार वर्ष का था।) **पूर्णिया** के साथ जो **सन्धि की गई थी** उसने **मैसूर** को एक प्रकार से अंग्रेजों के अधीन बना दिया। मैसूर को **अंग्रेजों के अनुशासन और आदेशों के अनुसार** एक **सैन्यदल** रखना था और राज्य को उनका एक उपहार समझना था। प्रशासन में गड़बड़ी होने पर अथवा सैन्यदल के लिए **वार्षिक सहायता** न देने पर, कम्पनी को यह अधिकार था कि सहायता की रकम को पूरा करने के लिए जितना **इलाका** जरूरी समझे उस पर वह अधिकार कर ले; [**मैसूर को**] **कम्पनी** को हर साल ३ लाख १० हजार पौंड देना था। इसमें से कम्पनी ९६ हजार पौंड हर साल टीपू के वारिसों को देती थी और [मैसूर द्वारा] निजाम को [दिये जाने वाले] २ लाख ४० हजार पौंड के मालियाने में से २८ हजार पौंड **मैसूर** के प्रधान कमाण्डर को देने थे (क्योंकि इस आदमी ने बिना किसी शर्त के आत्म-समर्पण कर दिया था) और ९२ हजार पौंड **पेशवा** को देने थे। पेशवा ने उसे लेने से इन्कार कर दिया। इसलिए **जमीन को निजाम और कम्पनी के** बीच बाँट लिया गया। बाद में **मैसूर** में केवल एक ही **गम्भीर** किस्म का **विद्रोह** हुआ [था]–**धूंढ़ियाबाग** का विद्रोह, इसे कुछ महीने बाद कुचल दिया गया था और वह स्वयम् मारा गया था।—**निजाम** ने माँग की कि **और भी अधिक अंग्रेज सैनिक हैदराबाद** भेजे जायँ. उनके खर्चे के लिए उसने कुछ और ज़िले दे दिये जिन्हें अभी तक "**दे दिये गये ज़िले**" कहा जाता है।

१७९९. तंजोर को हड़प लिया गया (देखिये पृष्ठ १७५)। उसकी स्थापना १२० वर्ष पहले शिवाजी के भाई वेन्कोजी ने की थी। **कर्नाटक को हड़प लिया गया** (पृष्ठ १७६, १७७)—**१७९५** में ख़र्चीले **मुहम्मद अली**,"कम्पनी के नवाब" की मृत्यु हो गई; **१७९९** में उसके उत्तराधिकारी और बेटे, अपव्ययी **उमदतुल उमरा** की मृत्यु हो गयी; वेलेज़ली ने उसके भतीजे, **अज़ीमुल उमरा** को नवाब बना दिया; **कर्नाटक** को उसने कम्पनी को इस आश्वासन पर **हड़प कर** लेने दिया कि उसके अपने खर्चे के लिए कर्नाटक की **आमदनी का पाँचवां भाग** हर साल कम्पनी उसे देती रहेगी।

१७९९-१८०१. अवध के एक **भाग को बेशर्मी** से **हड़प** लिया गया।

१८००. वेलेज़ली ने अवध के नवाब, **सआदत अली** को हुक्म दिया कि अपनी फौजों को वह तोड़ दे, उनकी जगह अंग्रेज़ अफसरों के नेतृत्व में **अंग्रेज**

सैनिकों या सिपाहियों को रखे और इन ब्रिटिश सेनाओं के खर्चे के लिए रुपया दे ! मतलब था : अवध की पूरी सैनिक कमान को कम्पनी के हाथों में सौंप दो, और गुलाम बनाये जाने के लिए खुद ही तुम पैसा दो ! सआदत ने वेलेज़ली को एक पत्र मे लिखा कि देश की स्वतन्त्रता को इस तरह वलि चढा देने के बजाय वह इस बात को अधिक पसन्द करेगा कि अपने किसी एक बेटे को गद्दी दे कर वह खुद हट जाय। इसके उत्तर मे लिखे गये पत्र मे, वेलेज़ली ने साफ झूठ बोल दिया। [उसने कहा] कि सआदत अली ने वास्तव में गद्दी छोड़ दी है, कि पूरे शाही खजाने को अब उसके हवाले कर दिया जाना चाहिए और पूरे देश को अंग्रेजों का घोषित कर दिया जाना चाहिए। इसके बाद से अब जो भी नवाब होगा उसे अंग्रेज गवर्नर जनरल के उपहार के रूप मे ही गद्दी मिला करेगी। इस पर सआदत अली ने गद्दी छोड़ने की बात को, जिसे पत्र मे केवल एक इरादे के रूप मे लिखा गया था, वापिस ले लिया। वेलेज़ली ने फौजें भेज दीं; नवाब को उसकी बात मानने के लिए मजबूर होना पडा, उसने अपनी फौजों के एक बड़े भाग को खत्म कर दिया और उनकी जगह अंग्रेजों को तैनात किया।

नवम्बर, १८००. वेलेज़ली ने माँग की कि शेष देशी सैनिकों को भी हटा दिया जाय और चूंकि उनकी जगह ब्रिटिश रेजीमेन्टें रखी जायेंगी, इसलिए आर्थिक सहायता को ५५ लाख से बढ़ाकर ७६ लाख रुपया कर दिया जाय। नवाब व्यर्थ ही कहता रहा कि इतनी भारी मदद वह "नही दे सकता" ! इसके बाद उसने [अंग्रेजों को] इलाहाबाद, आजमगढ़, गोरखपुर तथा दक्षिणी दोआब और कुछ और इलाकों को देकर इस मदद के भार से अपने को मुक्त किया। इन सब की मिल कर सालाना आमदनी १३ लाख ५२ हज़ार ३४७ पौंड थी। हेनरी वेलेज़ली, गवर्नर जनरल के भाई (जो बाद में लार्ड काउले हो गया था) की देख-रेख मे बने एक कमीशन ने देश को अच्छी तरह कब्ज़े मे लिया।

१८००. काबुल का शासक जमान था (यह उस अहमद खाँ अब्दाली के बेटे तैमूरशाह का लड़का था जिसने १७५७ मे दिल्ली पर अधिकार कर लिया था और १७६१ मे पानीपत के युद्ध के बाद, काबुल[1] को [फिर से] जीत लिया था और वहाँ पर दुर्रानी राजवंश की [फिर] स्थापना कर दी

१ यहाँ पर मार्क्स ने जिस पुस्तक के आधार पर यह लिखा है उसमें एक गलती थी : यह शहर काबुल नहीं कंधार था। जेम्स मिल जैसे अंग्रेज लेखक इसी वजह से काबुल को अहमदशाह की राजधानी मानते हैं यद्यपि उसने कंधार मे राज्य किया था और वह वहीं [illegible] ।

थी), वह टीपू सुल्तान के साथ बातचीत चला रहा था और कम्पनी डर रही थी कि कहीं वह हमला न कर दे। यह मुख्य कारण था जिससे वेलेज़ली ने, शत्रु के बढ़ाव को रोकने की गरज से, अवध को हड़प लिया था। ज़मन ने कई बार सीमा पर अपनी सेनाएँ लाया, हिन्दुस्तान के मुसलमानों से "इस्लाम के रक्षक" के रूप में उसने अपीलें कीं और भिन्न-भिन्न हिन्दू राजाओं तक से उसे सहायता के आश्वासन मिले थे। उधर पूर्व में नेपोलियन षड्यन्त्र रच रहा था। कलकत्ते के "दफ़्तरी छोकरे" फ्रान्स, फारस और अफ़गानिस्तान के मिल जाने के खयाल से ही काँप उठे। इसीलिए फ़ारस में कैप्टन मालकम की देख-रेख में जो दूतावास था [उसने] बेशुमार रुपया खर्च किया। "शाह से लेकर ऊँट चलाने वाले तक" हर चीज को "खरीद लिया"; और निम्न सन्धि करा लेने में कामयाब हो गया . फ़ारस का बादशाह हर फ्रान्सीसी को फारस से निकाल बाहर करेगा; भारत पर किये जाने वाले तमाम हमलों को बन्द कर देगा और, ज़रूरत होने पर, हथियारों से उनको रोकेगा, विदेशी व्यापार की जगह अब अंग्रेजों के व्यापार को पूरा संरक्षण देगा। इस सन्धि पर तेहरान में दस्तखत हुये थे।

१८०२ वेलेज़ली ने कमिश्नर मण्डल को त्यागपत्र दे दिया, किन्तु उसके आग्रह से १८०५ तक [भारत में] बना रहा। असल बात यह थी कि भारत में निजी व्यापारियों के अधिकारों का वह विस्तार करना चाहता था और इसी चीज़ को लेकर कम्पनी से उसने झगड़ा कर लिया था।

शताब्दी का प्रारम्भ। अंग्रेजों के अलावा [भारत में] केवल एक और बड़ी शक्ति [थी]—मराठों की। ये पाँच बड़े दलों में बँटे हुए थे जो अधिकांशतया आपस में लड़ते रहते थे . (१) पेशवा, मराठों का बरायनाम सर्वोच्च नेता, बाजीराव था। वह पूना में शासन करता था। छोटे-छोटे राज्य, जिनके नाम यहाँ नहीं दिये जा रहे है, अर्ध स्वतन्त्र थे; और वंशानुगत महाराजा के रूप में सामन्ती ढंग से आधे तौर से वे पेशवा के अधीन थे। (२) दौलतराव सिंधिया, [यह] मराठा वंश का सबसे शक्तिशाली प्रतिनिधि [था]; यह ग्वालियर में रहता था और दिल्ली, आदि पर अधिकार रखता था। (३) जसवन्तराव होल्कर—यह इंदौर में था, सिंधिया का जानी दुश्मन था। (४) रघुजी भोंसले, नागपुर का राजा, जो कुछ मिलने पर किसी से भी लड़ने के लिये तैयार रहता था।

(५) फतेसिंह, गुजरात का गायकवाड़, जो मराठा राजनीति में मुश्किल से ही कभी भाग लेता था।

१८००. नाना फड़नवीस की जेल में मृत्यु हो गयी।—सिंधिया ने पूना का परित्याग कर दिया, क्योंकि होल्कर ने सागर नगर को (जो इन्दौर मे था और सिंधिया का था) लूट डाला था और रुहेले सरदार अमीर खाँ मे मिलकर मालवा को, जो सिंधिया का था, तबाह कर डाला था।—सिंधिया और होल्कर की फ़ौजों में उज्जैन (मालवा) में मुठभेड़ हुई, सिंधिया हार गया; उसने सहायता के लिए पूना सन्देश भेजा और—

१८०१—में, वहाँ से सर्जोराव घटके के नेतृत्व मे उसकी सहायता के लिए सैनिक आ गये; सयुक्त सेनाओ ने १४ अक्टूबर को होल्कर को हरा दिया, उसकी राजधानी इन्दौर पर उन्होने चढाई कर दी, उसे लूट डाला; होल्कर भाग कर खानदेश चला गया, रास्ते मे आस-पास के तमाम इलाके को उसने वीरान बना दिया; वहाँ से चंदोर की तरफ बढ गया और वहाँ से उसने पेशवा के पास सन्देश भेजा कि अपनी तमाम फौज को लेकर वह आ रहा है, सिंधिया से उसकी वह रक्षा करे।

१८०२. बाजीराव ने—जिसने होल्कर के भाई नौजवान लुटेरे सरदार विठोजी की, जिसे उसने थोड़े ही दिन पहले पकड़ा था, अत्यन्त हिंस्र ढग से हत्या कर दी थी—इस सन्देश को लड़ाई की खुली घोषणा को छिपाने का केवल एक बहाना समझा। पूना मे स्थित ब्रिटिश रेजीडेन्ट, कर्नल क्लोज के होल्कर से लड़ने के लिए कम्पनी के हथियारों की मदद के प्रस्ताव को पेशवा ने दृढतापूर्वक ठुकरा दिया। सिंधिया तेजी से आगे बढ़ा और पूना के समीप उसने अपना पड़ाव डाल दिया।

२५ अक्टूबर, १८०२. जबर्दस्त लड़ाई। होल्कर जीत गया; पेशवा सिंगार भाग गया, जो अहमद नगर से लगभग ५० मील दूर था; वहां से वह बेसिन (जो कम्पनी का था) चला गया। पूना में अपने दो महीने के निवास काल में, होल्कर ने पेशवा के भाई, अमृतराव को गद्दी पर बैठा दिया और सिंधिया उत्तर की ओर [चला गया]।

१८०२. बाजीराव और कर्नल क्लोज के बीच बेसिन की संधि: तै हुआ कि पेशवा तोपों के साथ ६,००० घुड़सवारों को अपने यहाँ रखेगा और उनके खर्च के लिए दक्षिण के कुछ ऐसे जिले कम्पनी को वह सौंप देगा जिनसे कम्पनी को २५ लाख[1] रुपये सालाना की आमदनी हो सके; अपनी नौकरी में अंग्रेजों को छोड़कर और किसी यूरोपियन को वह नहीं रखेगा; निजाम

---

[1] स्मिथ के कथनानुसार, २६ लाख, "द आक्सफ़ोर्ड हिस्ट्री ऑफ़ इण्डिया," ११२१।

गायकवाड के खिलाफ जो उसके दावे थे उन सबको गवर्नर जनरल के पास पंच-फैसले के लिए भेज देगा; उसकी सह-स्वकृित के बिना कोई राजनीतिक परिवर्तन नही करेगा, दोनों फरीक अपने को आपस मे एक सुरक्षात्मक सन्धि में बँधा समझेगे।—तमाम मराठों मे इस "पूरक सन्धि" को लेकर क्रोध की लहर फैल गयी; उन्होने कहा कि यह सधि उनकी स्वतंत्रता का अन्त कर देगी और अंग्रेजो को उच्चतर शक्ति मानने के लिए उन्हें मजबूर कर देगी।—इसलिए सिंधिया ने कुछ कदम उठाये; उसने—
१८०३—में, अंग्रेजो के खिलाफ मराठा संघ की [स्थापना की]; इस सघ मे सिंधिया, अमृतराव, भोंसले (नागपुर का राजा) थे; होल्कर शामिल होने के लिए राज़ी हो गया था; किन्तु बाद में उसने अपना वादा पूरा नहीं किया; गायकवाड़ तटस्थ बना रहा।

. . . .

महान् मराठा युद्ध,
१८०३-१८०५

१७ अप्रैल, १८०३. सिंधिया और भोसले नागपुर मे मिले, फौरन अमृतराव से मिलने के लिए वे पूना रवाना हो गये।—लार्ड वेलेज़ली ने फौजो को तैयार होने का हुक्म दे दिया, और जनरल वेलेज़ली (वेलिंगटन) ने, जो फौजो का वास्तविक नेतृत्व पहली बार कर रहा था, मैसूर सेना (लगभग १२ हज़ार सैनिकों) को साथ लेकर—उनसे जबर्दस्ती मार्च कराते हुए, पूना पर चढ़ाई कर दी। उसका तथाकथित उद्देश्य बाजीराव को फिर से गद्दी पर बैठाना था। होल्कर चंदौर वापिस चला गया, वेलेज़ली ने पूना पर अधिकार कर लिया, अमृतराव भाग कर सिंधिया की छावनी में पहुच गया।—मित्र मराठों ने पूना पर चढाई कर दी, सम्मेलनों से कोई नतीजा नही निकला; लेकिन, इसी बीच, कुछ महीने बीत गये। तमाम आवश्यक आदेश देने के बाद, जनरल वेलेज़ली ने कर्नल कौलिंस को मित्रो के शिविर से वापिस बुला लिया और युद्ध आरम्भ हो गया। जनरल वेलेज़ली के आदेश पर तै हुआ कि जनरल लेक ग्वालियर में पेरन के कमान में खड़ी सिंधिया की रिज़र्व सेना पर हमला करे और अन्य दो सेनाएं भड़ोच में सिंधिया के और

में होल्कर के राज्य पर क़ब्ज़ा कर ले। कटक (बंगाल प्रेसीडेन्सी) जिलों की रक्षा के लिए लगभग हैदराबाद तथा दे दिये गये (सीडेड) ३,००० सैनिक पीछे छोड़ दिये गये; मुख्य सेना—जिसमें १७,००० सैनिक थे,—वेलेज़ली के साथ चली गयी।

अगस्त, १८०३. वेलेज़ली ने अहमदनगर पर अधिकार कर लिया; कर्नल डीन हटन ने भड़ौच पर कब्ज़ा कर लिया। जनरल लेक ने अलीगढ़ (दिल्ली प्रान्त) के किले पर हमला कर दिया और २ सितम्बर को किले पर अधिकार कर लिया, ४ सितम्बर को नगर ने हथियार डाल दिये।

३ सितम्बर,[1] १८०३ असई की महान लड़ाई; मराठों को जनरल वेलेज़ली ने हरा दिया।

लगभग इसी के साथ-साथ, हारकोर्ट ने कटक पर (बंगाल की खाड़ी में) कब्ज़ा कर लिया और स्टीवेंसन ने बुरहानपुर के क़िले पर और सतपुड़ा की पहाड़ियों में स्थित असीरगढ़ पर अधिकार कर लिया। सिंधिया ने वेलेज़ली के साथ समझौता कर लिया; वेलेज़ली ने स्टीवेन्सन की भड़ौच की सेना के साथ मिलकर भोंसले के ख़िलाफ़ गाविलगढ़ के मज़बूत क़िले पर चढ़ाई कर दी।

२८ नवम्बर,[2] १८०३. अरगाँव (इलिचपुर के समीप) की लड़ाई। वेलेज़ली की जीत हुई, भोंसले भाग गया, कर्नल स्टीवेन्सन को नागपुर (बरार की राजधानी) पर चढ़ाई करने के लिए भेज दिया गया, भोंसले ने सन्धि की प्रार्थना की, इसलिए—

८ दिसम्बर,[3] १८०३ को—भोंसले और ईस्ट इण्डिया कम्पनी की तरफ़ से माउन्ट स्टुआर्ट एलफिन्सटन के बीच देवगाँव की सन्धि हुई: अंग्रेज़ों ने बरार के इलाक़ों को छोड़ दिया; राजा ने कटक कम्पनी को दे दिया; निज़ाम को कई ज़िले दे दिये; तमाम फ़्रान्सीसियों और योरोपियनों को, जिनकी इंगलैण्ड में लड़ाई चल रही थी, निकाल दिया; [वादा किया कि] जो भी मतभेद होंगे उन सबको निर्णय के लिए गवर्नर जनरल के पास भेज दिया जायगा।

---

१ बर्गेस के अनुसार, २३ सितम्बर।
२ बर्गेस के अनुसार, २९ नवम्बर।
३ बर्गेस के अनुसार, १७ दिसम्बर।

१४ सितम्बर, लेक को—जो अलीगढ़ पर अधिकार करने के बाद सीधे दिल्ली की तरफ बढ़ता चला गया था—शहर से ६ मील की दूरी पर फ्रान्सीसी अफ़सरों के नेतृत्व में काम करने वाली सिंधिया की सेनाओं से मुठभेड़ हो गयी; फ्रान्सीसियों को उसने हरा दिया; उसी दिन शाम को उसने दिल्ली पर कब्ज़ा कर लिया और अन्धे शाह आलम को (जो ८३ वर्ष का बूढ़ा था) ब्रिटिश सरक्षण मे गद्दी पर बैठा दिया।

१७ अक्तूबर, आगरा ने, जिस पर भरतपुर के राजा का अधिकार था, लेक के सामने आत्म-समर्पण कर दिया।—दुश्मन की दक्षिणी और दिल्ली की भारी सेनाओ के विरुद्ध लेक ने कूच कर दिया; भयकर लड़ाई के बाद लासवाड़ी में (दिल्ली के दक्षिण में १२८ मील की दूरी पर स्थित एक गांव में) लेक की विजय हुई, सिन्धिया की हालत खराब हो गयी।

४ दिसम्बर,[1] १८०३. लेक (जो कम्पनी की तरफ़ से था) और सिंधिया के बीच अजगांव की सन्धि हुई; सिन्धिया ने जयपुर और जोधपुर के उत्तर के अपने तमाम इलाक़े दे दिये; भड़ौच और अहमदनगर को भी उसने दे दिया, निज़ाम, पेशवा, गायकवाड़ और कम्पनी के ऊपर अपने सारे दावे उसने छोड दिये; उन राज्यो की स्वतन्त्रता उसे स्वीकार करनी पडी जिन्हे कम्पनी स्वतन्त्र मानती थी; तमाम विदेशियों को डिसमिस करने तथा तमाम विवादों को फ़ैसले के लिए कम्पनी के सामने पेश करने की शर्त भी उसे माननी पडी।—गवर्नर जनरल, वेलेज़ली ने बरार निजाम को दे दिया, अहमदनगर पेशवा को, और कटक को कम्पनी के लिए रख लिया; साथ ही साथ भरतपुर, जयपुर और जोधपुर के राजाओ के साथ उसने सन्धियां कर ली, गोहद (सिन्धिया के ग्वालियर के इलाके मे स्थित) के राजा के साथ भी उसने सन्धि कर कर ली—उसे उसने ग्वालियर नगर [देने का वादा किया], सिंधिया के जनरल, अम्बाजी इंगलिया के साथ उसने सधि कर ली।

१८०४ के प्रारम्भिक भाग में। होलकर ने (जिसने अपने वादे के अनुसार मराठा सघ मे शामिल होने के बजाय, अपने ६० हज़ार घुडसवारों की मदद से सिन्धिया की अमलदारियों को लूट-पाट डाला था) अंग्रेज़ो के मित्र, जयपुर के राजा के प्रदेश पर हमला करना शुरू कर दिया। इसलिए वेलेज़ली और लेक की विजयी सेनाएँ उसके पास पहुंची; होल्कर जयपुर से पीछे हटकर चम्बल नदी के उस पार चला गया; वहां कर्नल मॉन्सन

[1] बर्गेस के अनुसार, ३० दिसम्बर।

की, जिसे एक छोटे सैन्य दल के साथ उसका पीछा करने के लिए भेजा गया था, उसने ऐसी पिटाई की कि मौन्सन की तोपें, सारा सामान, छावनी का साज-सामान और डिवीजन की रसद, आदि सब उससे छिन गयी; और उसकी पैदल सेना के लगभग पांच बटालियन काम आ गये। अन्त मे, अपने कुछ बचे-खुचे अभागे लोगो को लेकर वह आगरा आया।—होल्कर ने अब—बिना किसी सफलता के—दिल्ली पर हमला किया, और आस-पास के इलाके को लूट डाला; जनरल लेक पूरी तेज़ी से उसके पास पहुंच गया।

१३ नवम्बर, १८०४. डीग की लड़ाई (भरतपुर के इलाके मे); होल्कर हरा दिया गया, वह मथुरा (जमुना नदी के तट पर, आगरा के उत्तर में) भाग गया; विजय के बाद डीग के क़िले को, जो भरतपुर के राजा का था और जिसने लडाई के दिनो में अग्रेजो पर गोलाबार किया था, हमला करके अधिकार में ले लिया गया।

१८०५. लेक ने भरतपुर पर हमला किया, किन्तु कोई सफलता नही मिली; इस पर भी राजा ने अग्रेज़ों के साथ सुलह कर ली।—होल्कर सिंधिया के साथ मिल गया; सिंधिया अब अपनी सेनाओ के साथ-साथ, होल्कर, भरतपुर के राजा और अमीर ख़ां रुहेले की सेनाओं के एक नये संयुक्त दल का नेता था। वास्तविक बात यह है कि जब गवर्नर जनरल, वेलेज़ली ने गोहद के राजा को उसकी पुरानी पुश्तैनी राजधानी ग्वालियर[1] दे दी थी तो सिंधिया ने इसका विरोध किया था। उसने कहा था कि उसके जनरल अम्बाजी इंगलिया ने अग्रेज़ों के साथ बिना उससे पूछे ही संधि कर ली थी और वह शहर उनको सौंप दिया था। जनरल वेलेज़ली ने कहा कि सिंधिया की बात सही है, किन्तु गवर्नर जनरल वेलेज़ली ने सिंधिया की ग्वालियर को वापिस लौटाने की माग को मानने से इन्कार कर दिया और उसे बहुत बुरी तरह से डाटा। इसके फलस्वरूप, सिंधिया के नेतृत्व में एक नये संघ का निर्माण हुआ। सिंधिया अपने ४० हज़ार सैनिकों को लेकर अग्रेज़ो के खिलाफ फिर लड़ाई मे कूद पडा। किन्तु वेलेज़ली के उत्तराधिकारी, सर जौर्ज बार्लो ने ग्वालियर सिंधिया को वापिस लौटा दिया और उसके साथ नयी संधि कर ली।

---

१ यहां पर जिस पुस्तक का मार्क्स ने उपयोग किया है उसमे एक गलती है। वेलेज़ली ने गोहद के राजा को ग्वालियर देने का वादा तो किया था, किन्तु उसका इरादा ऐसा करने का नहीं था। उसने वहां पर एक ब्रिटिश सेना रख छोड़ी थी।

२० जुलाई, १८०५. गवर्नर जनरल वेलेज़ली का कार्य-काल समाप्त हो गया, इसलिए वह इंगलैण्ड चला गया।

वेलेज़ली के प्रशासन सम्बन्धी सुधार। सदर दीवानी अदालत के स्थान पर, जिसे १७९३ में (सर्वोच्च न्यायालय की जगह) लार्ड कार्नवालिस ने स्थापित किया था और जिसकी अध्यक्षता दरवाज़े बन्द करके गवर्नर जनरल तथा कौन्सिल के सदस्य किया करते थे, वेलेज़ली ने—

१८०१—में एक अलग अदालत की स्थापना की जो पब्लिक के लिए खुली रहती थी और जिसकी अध्यक्षता नियमित रूप से नियुक्त किये गये मुख्य न्यायाधीश करते थे। इनमें से पहला न्यायाधीश [कोलब्रुक था। उसी वर्ष, मद्रास में सदर दीवानी अदालत के स्थान पर एक सर्वोच्च न्यायालय [की स्थापना की गयी थी]। इसकी स्थापना उसी सिद्धान्त पर की गई थी जो कार्नवालिस के पहले कलकत्ते में व्यवहार में लाया जाता था। यह न्यायालय १८६२ तक कायम रहा था; उस साल उसकी जगह हाईकोर्ट ने ले ली थी। जौर्ज तृतीय द्वारा चलाई गई रिकौर्डर की अदालत का अन्त कर दिया गया और उसके अधिकारों को नये मुख्य न्यायाधीशों तथा अन्य छोटे न्यायाधीशों ने ग्रहण कर लिया (जौर्ज तृतीय के ३९वें और ४०वें क़ानून के द्वारा, देखिए ७९। नयी अदालत को दिवालिए क़र्ज़दारों के मामलों में फ़ैसला करने का अधिकार इसी कानून ने दे दिया—ये ऐसे अपराधी थे जिनकी तरफ तब तक भारत में कोई विशेष ध्यान नहीं दिया गया था)। इसी कानून ने भारत की प्रेसीडेन्सी वाले शहरों के मुख्य न्यायालयों को उप-नाविक न्यायक्षेत्र के मुकदमों में फ़ैसला करने का अधिकार प्रदान कर दिया। इस तरह, नये योरोपीय (अंग्रेजी) तत्वों की हर जगह वृद्धि हो गयी।

[illegible] लार्ड वेलेज़ली ने कलकत्ते में एक बड़े कालेज की, जिसका नाम फोर्ट विलियम का कालेज रखा गया, स्थापना की। इसका उद्देश्य यह था कि: (१) इंगलैण्ड से जो अनाड़ी नौजवान सिविलियन (नागरिक अधिकारी) भेजे जाते थे, उनके लिए शिक्षा की एक संस्था का काम करे; (२) देशी लोगों के लिए कानून और धर्म सम्बन्धी विषयों पर एक बहस-भवन का काम करे। ईस्ट इंडिया कम्पनी के डायरेक्टरों ने कालेज के काम की देख-भाल की जिम्मेदारी शिक्षा विभाग के हाथ में रखी। साथ ही साथ कम्पनी ने भारत भेजने से पहले अपने लिपिकों (क्लर्कों) को शिक्षा देने के लिए इंगलैण्ड में हेलबरी कालेज की स्थापना की।

[९] लार्ड कार्नवालिस का द्वितीय प्रशासन काल, १८०५

(वह २० जुलाई को कलकत्ता पहुंचा था)

१ अगस्त, कार्नवालिस ने अपने पद के अधिकार-चिह्न को ग्रहण किया। उसने कहा कि उसका सिद्धांत राज्यों को हड़पने का नहीं है। उसने कहा कि यमुना के पश्चिम के तमाम इलाक़ों को वह छोड़ देगा। लेक ने (जो बैरन और फिर १८०७ में, विस्काउन्ट बना दिया गया था) इसका विरोध किया।

५ अक्टूबर। बूढ़े कार्नवालिस की मृत्यु हो गयी; कौंसिल का वरिष्ठ सदस्य सर जौर्ज बार्लो, जो राज्यों को हड़पने का कट्टर विरोधी था, उसका उत्तराधिकारी बना।

. . . .

[१०] सर जौर्ज बार्लो का प्रशासन, १८०५—१८०६

१८०५ का अन्तिम भाग। सिंधिया के साथ सन्धि : इस शर्त पर कि अंजगांव की सन्धि पर वह कायम रहेगा, सिंधिया को गोहद और ग्वालियर मिल गये, बार्लो ने गारन्टी की कि बिना सिंधिया की रज़ामन्दी के राजपूत अमलदारी के उसके किसी भी सामन्ती राज्य के साथ ब्रिटिश सरकार कोई सन्धि नहीं करेगी। सिंधिया के अधीन बन जाने के बाद, होल्कर ने अपने शिविर को छोड़ दिया और अपनी आम क्रूर निर्दयता के साथ सतलज के समीप के प्रदेश को लूटना और तबाह करना शुरू कर दिया; सतलज पार के ज़बर्दस्त सरदार, रणजीत सिंह की सहायता लेकर लेक ने उसका पीछा किया; होल्कर बुरी तरह हार गया, और सुलह की प्रार्थना करता हुआ वहां से भाग खड़ा हुआ।

जनवरी, १८०६ लार्ड लेक ने होल्कर के साथ सन्धि पर दस्तख़त कर दि[illegible] इस सन्धि के मातहत रामपुरा, टोंक, बूंदी तथा बूंदी को पहा[illegible] उत्तर की तमाम जगहों को होल्कर को छोड़ देना पड़ा। सर [illegible] ने इस सन्धि पर जिसमे बूंदी—हटा लो जाकर !—कम्पनी

जाती थी, दस्तखत करने से इन्कार कर दिया। अंग्रेज़ सैनिकों को उसने आर्डर दिया कि **चम्बल नदी के उस पार से वे वापिस लौट आएं।** ऐसा होते ही **होल्कर** ने **बूंदी** के राजा के राज्य को फिर लूट डाला।—इसी तरह, अंग्रेजों के मित्र, **जयपुर** के राजा को **बार्लो** ने मराठा सिपाहियों के हवाले कर दिया।—इस पर **लार्ड लेक ने अपने तमाम नागरिक अधिकारों से त्यागपत्र देकर** यह कहते हुए उन्हें बार्लो को सौंप दिया कि अगर उसके सन्धि करने के फ़ौरन बाद ही सदर दफ्तर में उसे ख़त्म कर दिया जाना है तो आगे से फिर कभी कोई **सन्धि** वह नहीं करेगा।

होल्कर ने क्रोधावेश में अपने भाई और भतीजे की हत्या कर दी थी, इसलिए उसकी मानसिक स्थिति अस्थिर थी; **१८११ में पागलपन की हालत में इन्दौर में उसकी मृत्यु हो गयी।**

१८०७. बार्लो को हटाकर उसके स्थान पर लार्ड मिन्टो की नियुक्ति की गयी; वह भी **यह प्रतिज्ञा करके** भारत आया कि **देशी राज्यों के अन्दरूनी मामलों में हस्तक्षेप नहीं करेगा।** मिन्टो ३१ जूलाई, १८०७ को कलकत्ता पहुँचा। बार्लो का **मद्रास सरकार** के यहा तबादला कर दिया गया।

. . . .

[११] लार्ड मिन्टो का प्रशासन, १८०७—१८१३

जूलाई, १८०७. विल्लौर (मद्रास प्रेसीडेन्सी) में बगावत; विल्लौर के किले में **टीपू के बेटों** को कैद [कर रखा गया था]। यह बगावत उन्हीं की तरफ से मैसूर के उनके **नौकरों-चाकरों** ने की थी। उन्होंने टीपू का झंडा गाड़ दिया। **कर्नल गिलेस्पी** ने **अर्काट** के घुड़सवार रेजीमेन्ट की मदद से उनको कुचल दिया, अनेकों को मार डाला।—किन्तु, लार्ड मिन्टो ने उनके *साथ* "मद्रता का" व्यवहार किया।

१८०८. रणजीत सिंह ने—जो एक सिख, तथा सतलज के पश्चिम में सम्पूर्ण **प्रदेश का राजा था** (उसने लाहौर के राजा के रूप में जीवन आरम्भ किया था; लाहौर का जिला उसे विजयी अफ़गान, **ज़मान शाह** ने दिया था)—सतलज पार करके **सरहिंद की अमलदारी में** प्रवेश किया। यह अमलदारी ब्रिटिश संरक्षण में [थी]। फिर उसने **पटियाला के राजा के** प्रदेश पर

हमला कर दिया। उसका मुकाबला करने के लिए मिन्टो ने कर्नल मेटकाफ को भेजा। उसने रणजीत सिंह के साथ पहली सन्धि की। रणजीत सिंह सतलज पार वापिस लौट गया, नदी के दक्षिण के जितने इलाके पर उसने क़ब्ज़ा किया था उसे उसने वापिस कर दिया। लेकिन अंग्रेज़ों को भी यह आश्वासन देना पड़ा कि सतलज के उत्तरी तट की सिख अमलदारी को वे कभी हाथ नहीं लगाएँगे। रणजीत सिंह ने ईमानदारी से अपने वादों को पूरा किया।

१८०९. अमीर ख़ाँ ने, जो अब पठानों के डाका डालने वाले क़बीले का सर्वमान्य नेता था, बरार के राजा, भोंसले के इलाको को लूट डाला; अंग्रेज़ो का सहयोगी होने के नाते भोसले ने मिन्टो से मदद की अपील की, लेकिन मुश्किल से भेजे गये अंग्रेज़ो के सैन्यदल के नागपुर पहुँचने से पहले ही दुश्मन को सतपुड़ा की पहाड़ियों की तरफ़ उसने खदेड़ कर भगा दिया।

फ़ारस में दूसरा राजदूतावास : (नेपोलियन के पाशविक डर से) धन सम्पदा बटोरने के विरोधी सर हरफ़ोर्ड जोन्स को लन्दन से और सर जौन मालकम को कलकत्ता से राजदूत के रूप में तेहरान भेज दिया गया [१८०८] उनमे कौन बडा है इसको लेकर झगडा हुआ, आदि (पृष्ठ १९४)। बाद मे दोनों को हटाकर उनके स्थान पर एक आवासी राजदूत के रूप मे इगलैण्ड से सर गोर औसले को तेहरान भेजा गया। साथ ही साथ—

काबुल को लार्ड मिन्टो ने तीसरा दूत मण्डल भेजा। उस समय ज़मान शाह का भाई और उत्तराधिकारी शाहशुजा गद्दी पर था। राजदूत का नाम माउन्ट स्टुआर्ट एल्फिंस्टन था, [वह] असफल हुआ, क्योंकि शाहशुजा को एक विद्रोह के द्वारा गद्दी से हटा दिया गया; उसके उत्तराधिकारी, महमूद ने फ्रान्सीसियों और रूसियों के संरक्षण को स्वीकार कर लिया।

मद्रास प्रेसीडेन्सी : यहाँ भी फ्रान्स की वजह से बराबर घबराहट रहती थी।—कुछ समय तक वहां पर एक नियम का चलन था जिसके अन्तर्गत कमांन्डिग अफसरों को इस बात का अधिकार था कि उनके रेजीमेन्टों के लिए जिन तम्बुओं की आवश्यकता हो उनकी वे स्वयम् व्यवस्था कर लें। यह "आमदनी" का एक बढ़िया साधन था। सर जौर्ज बार्लो ने, जो अब मद्रास का प्रेसीडेन्ट था, इस परेशान करने वाली चीज़ को सख़्ती से ख़त्म कर दिया; उसने कमान्डर-इन-चीफ (प्रधान सेनापति) जनरल मेकडोवेल को क्वार्टर मास्टर जनरल (सामग्री महाध्यक्ष), कर्नल मुनरो को गिरफ्तार करने के

जुर्म मे डिसमिस कर दिया । कर्नल मुनरो ने **बार्लो के आदेश से** एक रिपोर्ट मे **तम्बू की प्रथा को धोखा देने-जैसी एक चीज़** कहकर भर्त्सना की थी। इसके फौरन ही बाद बार्लो ने **उच्च स्तर के चार अफ़सरों को निलम्बित कर दिया**। अब सारी सेना मे बगावत की भावना उमड़ पडी [और अफसरों ने] गवर्नर के पास अत्यन्त उद्दण्डतापूर्ण विरोध पत्र भेजे । **देशी सिपाहियों की मदद** से बार्लो ने शीघ्र ही अफसरो को ठण्डा कर दिया ।

१८१०. फ़ारस के डाकुओं के विरुद्ध अभियान । १८१० के आरम्भिक काल से ही फारस की खाडी मे जल-दस्युओ के अनेक गिरोह घूमते थे । वे अग्रेजो के व्यापार को नुकसान पहुचा रहे थे । इसके बाद उन्होने कम्पनी के एक जहाज–**मिनरवा**–को पकड लिया । मिन्टो ने बम्बई से एक सैन्य दल भेजा; उसने **मलिआ** (गुजरात मे) स्थित जल-दस्युओ के सदर दफ्तर पर अधिकार कर लिया और, **मसकत के इमाम** की मदद से, **फारस में सिराज** के उनके मजबूत गढ पर धावा कर दिया और उसे जला दिया। इसके बाद डाकुओ का "सघ" छिन्न-विछिन्न हो गया ।

मकावो पर चढ़ाई । कम्पनी के प्रभाव के कारण, जो व्यापारिक प्रतिद्विन्द्वता से जली जा रही थी, मिन्टो ने वहाँ की **पुर्तगाली बस्ती** को नष्ट करने के लिए एक **जहाज़ मकावो** भेज दिया । यह बस्ती चीनी सम्राट के सरक्षण मे थी । वहाँ जो रेजीमेन्ट भेजा गया था वह बिना कोई सफलता प्राप्त किये ही बगाल लौट आया । **चीन के सम्राट ने मकावो में होने वाले अंग्रेज़ों के व्यापार को फ़ौरन ख़त्म कर दिया** ।

मारीशस तथा बोर्बन पर अधिकार।– इंगलैण्ड के साथ फ्रान्सीसी युद्ध के समय, **मारीशस और बोर्बन के द्वीपों** पर फ्रान्सीसी हमलों की वजह से कम्पनी **के व्यापार** को अत्यधिक हानि उठानी पड़ी थी । इस चीज का अन्त करने के लिए, मिन्टो ने **कर्नल कीटिंग की कमान में** एक सैन्य दल रवाना किया। इस सैन्य दल ने सबसे पहले मारीशस से २०० मील के फासले पर स्थित **रौडरीग्स के द्वीप** पर अधिकार कर लिया ।

मई, १८१०. उसने रौडरीग्स को अपनी कार्रवाइयों का अड्डा बना लिया; **बोर्बन के द्वीप** पर पहला हमला किया गया, सैनिक उतार दिये गये, **सेन्ट पौल्स के शहर और बन्दरगाह** पर हमला किया गया, चार तोपों को ध्वस्त कर दिया गया, तीन घटे की लडाई के बाद, **स्थान पर कब्ज़ा कर लिया गया** । अग्रेज़ो के जहाज़ी बेडे से घिरे हुए **दुश्मन के जहाज़ी बेड़े ने आत्म-समर्पण कर दिया**।

जुलाई. बोर्बन के द्वीप में कई दूसरे फ्रान्सीसी केन्द्रों पर अधिकार कर लिये जाने के बाद, उसकी राजधानी सेन्ट डेनिस का पतन हो गया, और सम्पूर्ण फ्रान्सीसी सेना ने हथियार डाल दिये। कर्नल विलग्बी को कमान सौंप कर वहां छोड दिया गया, शस्त्रागार को अंग्रेज़ो का भण्डार बना दिया गया। यहाँ से मारीशस, अर्थात् इले द फ्रान्स पर आक्रमण करने की तैयारियाँ की गयीं। समुद्र मे, फ्रान्सीसियों ने अंग्रेजों के ग्यारह जहाजों पर क़ब्ज़ा कर लिया।

२९ अक्टूबर, १८१०. मारीशस के खिलाफ अभियान शुरू: एक हजार सैनिक उस पार उतार दिये गये; ३० अक्टूबर[1] को फ्रान्सीसी कमान्डर ने मारीशस का समर्पण कर दिया; अंग्रेज अब तक उसे अपने कब्ज़े मे रखे हुए है, किन्तु बोर्बन द्वीप को १८१४ में फ्रान्सीसियों को वापिस दे दिया गया था।

१८११. मिन्टो ने जावा के ख़िलाफ़ सैन्य दल रवाना किया। सबसे पहले मसालों के टापू अम्बोयना पर उसने कब्ज़ा किया; यहाँ १६२३ मे डच लोगों ने भयंकर क़त्ले-आम किया था। इसके तुरन्त बाद पाँच छोटे-छोटे मलक्का द्वीपों पर उसने अधिकार कर लिया; इसके फौरन बाद बान्डा नीरा पर अधिकार कर लिया गया (यह भी एक मलक्का द्वीप था)। (इस पूरी चढ़ाई की वजह यह थी कि ईस्ट इंडिया कम्पनी डचों के व्यापार को लालच की दृष्टि से देखती थी)।

४ अगस्त, १८११ रात में अंग्रेज़ बटाविया (जावा की राजधानी) पहुच गये। रक्षा के लिए डच सैन्य शक्ति फ़ोर्टकार्नेलिस मे इकट्ठी हो गयी।

५ अगस्त. लड़ाई, और कर्नल गिलेस्पी द्वारा बटाविया पर अधिकार। इसके तुरन्त बाद ही, अभियान के कमाण्डर, सर सेमुअल आक्मुटी ने जावा के समस्त सुदृढ़ स्थानों पर अधिकार कर लिया। फ्रान्सीसी और डच लोगों ने हार मान ली, सर स्टैम्फोर्ड रैफ़िल्स को जावा का गवर्नर नियुक्त कर दिया गया।

पिण्डारियों का उदय: ये घोड़ों पर सवार डाकू थे, पेशे से चोर। (पिण्डारी = पहाड़ी, मालवे का—जो होल्कर, सिंधिया और भोपाल के अधिकार में था—एक कबीला (peuplade)—विंध्य पर्वतमाला में उनमे डाकुओं के गिरोह (ramas), भागे हुए अपराधी, भगोड़े सिपाही, दुस्साहसिक लड़ाके थे, पहले पहल वे १७६१ में पानीपत की लड़ाई के समय मराठों की तरफ़

---

[1] बर्गेस के अनुसार, ६ दिसम्बर।

दिखाई पड़े थे।) पेशवा बाजीराव के नेतृत्व में वे हमेशा उस तरफ़ हो जाते थे जिस तरफ से उन्हें सबसे भारी रक़म मिलती थी।

१८०८. दो भाई, हेरन और बारन (हीरू और बूडन) उनके नेता थे; उनकी मृत्यु के बाद, चीतू नामक एक जाट ने उनकी कमान सँभाल ली, और अपने को राजा कहलवाने लगा, उसकी सहायता करने के उद्देश्य से सिंधिया ने उसे एक छोटा-सा इलाक़ा दे दिया; इसी तरह, दूसरे पिण्डारी सरदार भी छोटी-छोटी जागीरों के मालिक बन गये। दो वर्ष बाद, चीतू रुहेले अमीर ख़ाँ के साथ मिल गया, और ६०,००० की सेना लेकर उन्होंने मध्य भारत को लूटना शुरू कर दिया। नियन्त्रण बोर्ड ने लार्ड मिन्टो को उन पर हमला करने की अनुमति देने से इन्कार कर दिया। इस इन्कार का आधार कार्नवालिस का हस्तक्षेप न करने का सिद्धांत था।

मद्रास में रैयतवारी प्रथा, जिसकी स्थापना सर टामस मुनरो ने की थी; पहले उसे मद्रास प्रेसीडेन्सी में मालगुज़ारी की व्यवस्था के आधार के रूप में स्वीकार किया गया था; स्थायी कानून का रूप उसे १८२० तक नहीं दिया गया था। उस पर निम्न प्रकार अमल किया जाता था : सरकार के राजस्व अधिकारी वर्ष के आरम्भिक भाग में उस समय वार्षिक बन्दोबस्त करते थे जिस समय कि फसल इतनी काफी उग आती थी कि उसकी मात्रा तथा प्रकृति का अनुमान किया जा सके; इस समय, सरकारी कर की मात्रा उपज के एक-तिहाई भाग के बराबर होती थी; यह कर काश्तकार के उस पट्टे या सनद पर लिख दिया जाता था जो उसे हर साल दिया जाता था, फिर उसे चुकाने की ज़िम्मेदारी उसी काश्तकार पर होती थी। यदि मौसम की ख़राबी की वजह से फ़सल नहीं होती थी तो आदेश हो जाता था कि पूरे गांव के ऊपर इस तरह से टैक्स लगा दिया जाय कि जिस ज़मीन पर फ़सल नहीं हुई थी उसके कर को भी वह पूरा कर दे; यदि [यह विश्वास हो जाता था कि] फ़सल के ख़राब होने का कारण उस रैयत की जान-बूझ कर की गयी शरारत थी जिसने, पट्टा ले लेने के बाद, अपनी ज़मीन पर जान-बूझ कर खेती नहीं की थी, तो कलक्टर को इस बात का अधिकार होता था कि वह उसको जुर्माने या शारीरिक यातना तक की सज़ा दे दे। पट्टा रोक देने या देने का अक्षुण्ण अधिकार उसके पास होने की वजह से कलक्टर का हर माल हर ज़िले पर पूर्ण नियन्त्रण रहता था।

अक्टूबर, १८१३. लार्ड मिन्टो इंगलैण्ड वापिस चला गया; उसके स्थान पर

मारक्विस हेस्टिग्ज, जो उस वक्त मोयरा का अर्ल कहलाता था, की [नियुक्ति की गयी]।

पार्लमिन्ट की कार्यवाही। १ मार्च, १८१३—ईस्ट इण्डिया कम्पनी के पट्टे की मियाद फिर खत्म हो गयी।

२२ मार्च, १८१३. इस प्रश्न पर ब्योरे से विचार करने के लिए कामन्स सभा ने एक समिति बना दी। इण्डिया हाऊस में रहने वाले डायरेक्टर मंडल ने प्रार्थना की कि विजित देश पर ताज का नही, कम्पनी का अधिकार था; [व्यापार के सम्बन्ध मे] उनकी [कम्पनी की] इजारेदारी आवश्यक थी; उन्होने माग की कि पहले ही वाले आधार पर उन्हे २० साल की मियाद के लिए फिर से नया पट्टा दे दिया जाय। *कमिश्नर मंडल के अध्यक्ष*, अर्ल आफ बकिंघमशायर ने इन तमाम दलीलो का विरोध किया। [उन्होने कहा] भारत इंगलैण्ड की सम्पत्ति है, कम्पनी की नहीं; भारत का व्यापार समस्त ब्रिटिश प्रजा के लिए मुक्त कर दिया जाना चाहिए और कम्पनी की इजारेदारी का अन्त हो जाना चाहिए; दरअसल, इससे भी अच्छा तो यह होगा कि भारत की सरकार को ताज पूरे तौर से अपने हाथों में ले ले।

२३ मार्च, मंत्रिमंडल की ओर से कैसलरीख ने प्रस्ताव पेश किया: कम्पनी के पट्टे को २० साल के लिए बढ़ा दिया जाय; चीनी व्यापार पर कम्पनी की इजारेदारी रहे, किन्तु भारतीय व्यापार, किन्ही प्रतिबन्धों के साथ, जिससे कि कम्पनी को नुकसान न पहुचे, सारी दुनिया के लिए खोल दिया जाय; फ़ौज पर कम्पनी का आधिपत्य बना रहे और अपने नागरिक तथा अन्य नौकरो को नियुक्त करने की सत्ता उसी के पास रहे।

जुलाई का अन्तिम भाग। यह—कैसलरीख का बिल—बहुत थोड़े परिवर्तनो के साथ पास हो गया (अधिक जानकारी के लिए देखिए, पृष्ठ २००)। लार्ड ग्रेनविल ने सरकार से आग्रह किया कि पूरे भारत को वह पूर्णतया अपने हाथो मे ले ले और सिविल सर्विस (नागरिक सेवा) मे नियुक्तियां खुली प्रतियोगिता के द्वारा करे।

इसी साल, कलकत्ते के धर्मक्षेत्र में एक बड़े पादरी की नियुक्ति करके ईसाई धर्म को भारत में खुले तौर से चालू कर दिया गया।

. . . .

[१२] लार्ड हेस्टिंग्ज का प्रशासन, १८१३—१८२२

अक्टूबर, १८१३ लार्ड हेस्टिंग्ज कलकत्ता पहुंचा।—१८११ में, **जसवन्त राव** होल्कर की मृत्यु हो गयी। उसकी विधवा, तुलसी बाई, अन्य कई अपने प्रिय पात्रों, आदि के साथ रहने के बाद, चार साल तक लुटेरे पठानों के सरदार, **ग़फ़ूर खां** के साथ रही थी; **इन्दौर की सरकार पूरे तौर से उसके** कब्जे मे [थी]।—**१८१३ में सिंधिया** ने आस-पास के इलाके को लूटा, *[किन्तु] अंग्रेजी सरकार की तरफ से जरा भी घुड़की मिलने पर वह* शान्त हो जाता था।—रुहेले **सरदार, अमीर खां** के पास उस समय भारत की एक सबसे अच्छी सेना [थी]; उसमें दुस्साहसी **जवां मर्दों के उसके अपने गिरोहों** के साथ-साथ **होल्कर की फ़ौजें** भी थी। १८११ मे, पिंडारियों के नेता, **चीतू** से उसका झगडा हो जाने के बाद, **अमीर खां** होल्कर की फौजो का कमान्डर-इन-चीफ (मुख्य सेनापति) बन गया था।—**पेशवा बाजीराव** अंग्रेज़ो के जुए के नीचे बेचैन हो रहा था। उसके दरबार मे नियुक्त रेजीडेन्ट, **माउन्ट स्टुआर्ट एलफिस्टन** की तेज कार्रवइयों की वजह से उसकी स्थिति और भी अधिक "नीची" हो गई थी। **अहमदाबाद** के प्रदेश को लेकर **गायकवाड़ के साथ उसके झगड़े उठे;** सन्धि की शर्तों के अनुसार फैसला करने के लिए **अंग्रेजों** को बुलाया गया। इसलिए गायकवाड ने **गंगाधर शास्त्री** को पूना भेजा—इस काम को बम्बई के अध्यक्ष ने पसन्द किया। **गंगाधर शास्त्री** के विरुद्ध पेशवा के कुटिल प्रिय पात्र, **त्र्यम्बकजी डांगलिया** ने षड्यन्त्र रचा और जब वह वापिस गुजरात लौटा तो **पंढारपुर** *मे अपने गुर्गों से निर्दयतापूर्वक उसने उसकी हत्या करवा दी।* पेशवा के प्रतिरोध, आदि के बावजूद (देखिये, पृष्ठ २०२), एलफिस्टन ने उसे इस बात के लिए मजबूर कर दिया कि **डांगलिया** को वह उसके हाथों मे सौंप दे। डांगलिया को आगे की जांच-पड़ताल के लिए जेल में डाल दिया गया। जिस समय हेस्टिंग्ज ने सरकार का आसन ग्रहण किया उस समय यही हालत थी। खजाना उसे ख़ाली मिला था।

१८१४. नेपाल के गोरखे; राजपूतों की एक जाति; मूल रूप मे वे राजपूताना से आये थे, और हिमालय के नीचे तराई में, नेपाल मे, उसे जीतकर बस गये थे। अनेक सरकारों के मातहत रहने के बाद, **१८वीं शताब्दी के मध्यकाल में** वे एक सरदार के आधिपत्य मे [थे] जो अपने को "नेपाल

का राजा कहता था। उसने अपनी सीमाओं का विस्तार किया। इसकी वजह से कभी-कभी उसका सम्पर्क रणजीत सिंह से हो जाया करता था और कभी-कभी ब्रिटिश संरक्षण मे रहने वाले राजों-रजवाड़ों से। इसलिए सर जौर्ज बार्लो और लार्ड मिन्टो से उसके पहले ही झगड़े हो चुके थे। —१८१३ के अन्तिम भाग में अवध राज्य के हड़प लिये गये भाग के ब्रिटिश संरक्षण वाले २०० गांवों के एक जिले पर गोरखों ने अधिकार कर लिया था। लार्ड हेस्टिंग्ज ने माग की कि २५ दिनों के अन्दर ज़िले को वापिस लौटा दिया जाय; इस पर गोरखो ने बुटवल मे एक ब्रिटिश मजिस्ट्रेट की हत्या कर दी। इस पर—

(अक्टूबर) १८१४—में, गोरखो के खिलाफ़ युद्ध की घोषणा हो गयी; जनरल गिलेस्पी को सतलज के किनारे अमरसिंह की कमान मे काम करने वाली गोरखों की सेना पर हमला करना था; जनरल उड के मातहत एक दूसरे डिवीजन को बुटवल पर चढ़ाई करनी थी, जनरल आक्टरलोनी के नेतृत्व मे एक तीसरे डिवीज़न को शिमला पर, चौथे डिवीजन को जनरल मार्ले के नेतृत्व मे, सीधे राजधानी, काठमांडू पर धावा करना था। युद्ध के खर्चे के लिए अवध के नवाब से २० लाख का क़र्ज़ ले लिया गया था।

२९ अक्टूबर को गिलेस्पी ने कलंगा के किले पर हमला किया, ५०० गोरखे उसकी रक्षा कर रहे थे; उसने आर्डर दिया कि फौरन हमला किया जाय, और स्वयं हमले का नेतृत्व किया, उसे खुद को गोली लगी; ७०० अफसरों और सैनिकों को खोने के बाद, डिवीजन अपनी छावनी पर वापिस लौट आया। अब जनरल मार्टिडेल ने कमान सभाली, बेकार के घेरे मे उसने महीनों बर्बाद कर दिये; जब रास्ता बना लिया गया और आखिरकार किले पर क़ब्ज़ा कर लिया गया, तब [देखा गया] कि उसे पहले ही खाली कर दिया गया उसके रक्षक अपने तमाम भंडारों के साथ हमले से पहले वाली रात को ही उसमे से निकल गये थे। अपने से बड़ी छोटी सेना के ऊपर विजय प्राप्त करने के बाद जनरल उड डर गया; वह ब्रिटिश सीमान्त की तरफ़ लौट गया और बाकी पूरे हमले के समय हाथ पर हाथ रखे बैठा रहा।

१८१५. जनरल मार्ले, जो सीमा पर पहुंच गया था, १८१५ के आरम्भिक काल तक वहीं रुककर काठमांडू पर हमला करने के लिए तोपखाने का इन्तजार करता रहा; कूच के समय उसने अपने डिवीजन को दो कमजोर दलों मे बांट दिया था—गोरखों ने उन दोनों पर हमला किया और उन्हें

हरा दिया; मार्ले वहीं चहलकदमी करता रहा और १० फ़रवरी, १८१५ को एकदम अकेला *सीमा के उस पार भाग गया !*

१५ मई। कई महीनों की सफल लड़ाइयों और घेरेबन्दियों के बाद, अमरसिंह *मलाऊ (सतलज के बायें तट पर स्थित एक सुदृढ़ पहाड़ी दुर्ग में)* चला गया; जनरल ऑक्टरलोनी ने एक महीने तक मलाऊ पर गोलन्दाज़ी की, *१५ मई को दुर्ग का पतन हो गया, अमरसिंह[1] घेरे के समय मारा गया।*—इसी बीच कुमायूं ज़िले में अल्मोड़ा का पतन हो गया था, इसकी वजह से ऑक्टरलोनी का विरोध करने वाले गोरखों को मिलने वाली सारी रसद वग़ैरा के रास्ते कट गये; उन्होंने समझौता कर लिया।

१८१६. लम्बी बातचीत चलाने के बाद, *नयी लड़ाई छेड़ दी गयी।* पहाड़ों के बहुत कठिन रास्ते से चलकर सर डेविड ऑक्टरलोनी मकवानपुर पहुंचा और गोरखों को भारी नुक़सान पहुंचाकर उसने वहाँ से पीछे हटा दिया; फिर उन्होंने उसके साथ सन्धि कर ली, जिसे वफ़ादारी के साथ गोरखों ने निभाया। वे खुद अपने इलाके में बने रहने के लिए बाध्य कर दिये गये थे और जो ज़मीन उन्होंने जीती थी उसके अधिकांश भाग को उन्हें दे देना पड़ा था।—इस लड़ाई ने इंगलैण्ड और नेपाल के बीच आवागमन का मार्ग खोल दिया; अनेक गोरखे अंग्रेज़ों की सेना में भर्ती हो गये, उन्हें गोरखा रेजीमेन्टों में जबर्दस्ती रख दिया गया, १८५७ के सिपाही विद्रोह के दिनों में अंग्रेज़ों के वे बहुत काम आये।

गोरखा युद्ध के दौरान शुरू में कम्पनी की जो अनेक बार हार हुई थी उसकी वजह से देशी राजाओं के अन्दर भी अशान्ति फैल गयी थी, ख़ास तौर से हाथरस और बरेली में (दोनों दिल्ली प्रान्त में थे) जन-विद्रोह उठ खड़े हुए थे।

१८१६-१८१८. पिण्डारी। १८१५ में ५०,००० से ६०,००० तक की संख्या में ये लुटेरे मध्य भारत में लूट-पाट मचा रहे थे; दूसरी तरफ़, अमीर ख़ाँ सीमा पर हमला करने की धमकी दे रहा था और शत्रुतापूर्ण रुख अपना कर, मराठे राजे फ़ौजें इकट्ठी कर रहे थे। गठजोड़ों के द्वारा अमीर ख़ाँ के विरुद्ध एक मज़बूत संघ क़ायम करने की हेस्टिंग्ज़ की कोशिशें बेकार साबित हुईं (२०६)।

---

१ मिल, खण्ड ८ के अनुसार, अमरसिंह का जनरल भक्ति सिंह।

१४ अक्टूबर, १८१५. पिंडारियों के एक बड़े दल ने निज़ाम के राज्य पर हमला करके उसे लूट डाला।

फरवरी, १८१६. पिंडारियों की लगभग आधी सेना ने गुन्टूर सरकार के ज़िलों (कम्पनी की अमलदारी) पर चढ़ाई कर दी, इलाके को उन्होंने मरुभूमि बना दिया, और इससे पहले कि मद्रास की सेना उनके ऊपर बाकायदा हमला कर सके वे वहाँ से अन्तर्धान हो गये।

बरार के राजा, रघुजी भोंसले की मृत्यु हो गयी; उसका चचेरा भाई अप्पा साहेब उसकी गद्दी पर बैठा, उसने भोंसले के बेटे की हत्या कर दी और कम्पनी के साथ एक सन्धि करके उसे अपनी तरफ़ कर लिया। इस सन्धि के अन्तर्गत अंग्रेजों की ८ हजार की एक सहायक सेना को नागपुर में [रखना तै हुआ]।

नवम्बर, १८१६. कम्पनी की अमलदारी में पिंडारियों ने नयी घुस-पैठ की, जब नागपुर की सेना मैदान में आयी तो अलग-अलग दलों में बँटकर वे स्वयम् अपने प्रदेश में गायब हो गये।

१८१७. वर्ष के प्रारम्भ में, हेस्टिंग्ज स्वयम् १,२०,००० सिपाहियों की सेना लेकर (यह ब्रिटिश झण्डे के नीचे [भारत में] इकट्ठा की जाने वाली सबसे बड़ी सेना थी) रणक्षेत्र में पहुंच गया। बूंदी, जोधपुर, उदयपुर, जयपुर, और कोटा के राजाओं के साथ उसने समझौते कर लिए, और सिंधिया को तटस्थता की सन्धि पर दस्तख़त करने के लिए मजबूर कर दि.. गया।

मराठा राज्यों का अन्त। जेल से निकल भागने के बाद त्र्यम्बक जी डांगलिया फिर पूना में बाजीराव का प्रमुख सलाहकार बन गया, बाजीराव ने "पिंडारियों से रक्षा करने" के नाम पर अंग्रेजों के ख़िलाफ़ शत्रुतापूर्ण तैयारियाँ शुरू कर दीं। एलफिंस्टन ने बम्बई से सेनाओं को बुला भेजा और बाजीराव से स्पष्ट रूप से कह दिया कि, २४ घंटे के अन्दर तै कर ले कि वह लड़ाई चाहता है या शान्ति और अपने तीन मुख्य दुर्गों तथा त्र्यम्बक जी डांगलिया को उसके हाथ सौंप दे। बाजीराव ने हिचकिचाहट दिखलाई; बम्बई की फ़ौजें आ गयीं; पेशवा ने हार मान ली, तमाम किले उसने कम्पनी को दे दिये, और वादा किया कि डांगलिया को पकड़ देगा। अब एक सन्धि पर हस्ताक्षर किये गये, जिसके अन्तर्गत पेशवा इस बात के लिए राजी हो गया कि आगे कभी किसी भी दूसरी, मराठा

अथवा विदेशी सत्ता के वकीलों[1] को अपने दरबार में नहीं आने देगा और पूरे तौर से ब्रिटिश रेज़ीडेन्ट की आज्ञा में रहेगा।

इस प्रकार, **मराठों की प्रभुसत्ता का अन्त** [हो गया], पूना के राज दरबार को *नागपुर या इन्दौर* के राज दरबार के नीचे स्तर पर रख दिया गया। इसके अलावा, उसे [पेशवा को] **सागर, बुन्देलखण्ड,** तथा अन्य स्थानो को कम्पनी के हाथ सौप देना पडा। फिर सुरक्षा की दृष्टि से **एल्फिन्स्टन** [पूना से] दो मील के फासले पर ब्रिटिश छावनी मे चला गया, और सेनाएँ वही तैनात रही। *लगभग एक महीने बाद,* अंग्रेजो के खिलाफ कार्रवाई करने के लिए घुड़सवारो और सैनिकों को जमा करते हुए पेशवा पकड़ा गया।

५ नवम्बर, १८१७. एक काफी बडी सेना को लेकर, *जो ब्रिटिश रेजीमेन्टो के* पास ही पड़ी हुई थी, पूना की (ब्रिटिश) **रेज़ीडेन्सी** पर हमला किया गया और उसे जला दिया गया। इसके बाद जो लडाई हुई उसमे पेशवा के **कच्चे, इधर-उधर से बटोरे गये सिपाहियो** को हरा दिया गया, खुद **बाजीराव** ने—

१७ नवम्बर, १८१७ को—*आत्म-समर्पण कर दिया। उस मराठा राज्य की प्रभु-*सत्ता का अन्त हो गया जिसका प्रारम्भ शिवाजी से १६६९ मे हुआ था।

नागपुर के राजा का पतन। अप्पा साहेब ने भी वही—सेना, आदि को इकट्ठा करने का—काम किया जो बाजीराव ने किया था; **ब्रिटिश रेज़ीडेन्ट, मिस्टर जेनकिन्स** ने उने पकड लिया।

सितम्बर, १८१७ अप्पा साहेब ने *अपने दरबार में पिंडारियों के एक प्रतिनिधि* को खुलेआम बुलाया।

नवम्बर, १८१७. उसने जेनकिन्स को सूचित किया कि पेशवा ने उसे (अप्पा साहब को) **मराठा फ़ौजो का कमान्डर-इन-चीफ़** बना दिया था; जेनकिन्स ने जवाब दिया कि चूंकि पेशवा ने कम्पनी के खिलाफ युद्ध छेड रखा था, इसलिए इस नियुक्ति के फलस्वरूप *नागपुर भी कम्पनी के साथ युद्ध* में फँस जायगा। इस पर अप्पा साहब ने (ब्रिटिश) रेज़ीडेन्सी पर हमला कर दिया।—**सीताबल्दी की पहाड़ियों में लड़ाई हुई।** (उनके लिए) बुरी शुरुआत के बाद अंग्रेज जीत गये। नागपुर पर क़ब्ज़ा कर लिया गया; अप्पा साहब को गद्दी से उतार दिया गया, जोधपुर मे एक निर्वासित

---

१ राजदूतों।

व्यक्ति के रूप में उसकी मृत्यु हो गयी। १८२६ तक इस राज्य पर अंग्रेज शासन करते रहे। फिर उन्होंने एक नवयुवक को, जिसे नामजद किया जा चुका था, उसके बालिग हो जाने पर, ब्रिटिश संरक्षण में गद्दी पर बैठा दिया।

होल्कर राजवंश का पतन। तुलसी बाई ने अपने प्रेमी, पठानों के सरदार ग़फ़ूर ख़ाँ को, जो कम्पनी का जानी दुश्मन था, असली गवर्नर बना रखा था। सर जौन मालकम और सर टामस हिस्लोप ने माँग की कि उसे हटा दिया जाय। उसने—रानी ने—लड़ाई की तैयारी शुरू कर दी, किन्तु एक रात एक दल ने—जो उसका विरोधी था—इन्दौर में उसे गिरफ्तार कर लिया, उसका सिर काट दिया, और उसके शरीर को नदी में फेंक दिया।

१८१७. नवयुवक मल्हार राव होल्कर को फौरन राजा घोषित कर दिया गया, नाम के लिए उसके नेतृत्व में, किन्तु वास्तव में ग़फ़ूर ख़ाँ के नेतृत्व में सेना निकल पड़ी।

२१ दिसम्बर, १८१७. मराठों द्वारा किये जाने वाले भयकर गोलीबार के बीच अंग्रेजों ने सिप्रा नदी को पार किया, और उनकी तोपों पर कब्जा कर लिया। महीदपुर में निर्णायक लड़ाई हुई, कठिन सघर्ष के बाद अंग्रेज विजयी हुए। मल्हार राव की बहिन, भूनाबाई को गिरफ्तार कर लिया गया और उसके भाई के पास भेज दिया गया।—इसके बाद जल्दी ही सन्धि हो गयी। जसवन्त राव के बेटे, मल्हार राव होल्कर को राजा मान लिया गया। किन्तु उसकी शक्ति को कम कर दिया गया और उसके राज्य को छोटा कर दिया गया।

लगभग १८१७ के अन्त तक, पिंडारी लोग यहीं भटकते रहे। कोई निर्णायक सघर्ष उन्होंने नहीं किया। लेकिन मराठा राजाओं के, जो उनके दोस्त थे, पतन के बाद, उनके तीनों सरदारों—करीम ख़ाँ, चीतू, और वासिल मुहम्मद—ने फैसला किया कि अब डटकर कुछ करना होगा, उन्होंने अपनी फौजों को एक जगह केन्द्रीकृत कर लिया।—हेस्टिंग्ज यही तो चाहता था। उसने आर्डर दिया कि प्रेसीडेन्सी की विभिन्न सेनाएं मालवा में स्थित डाकुओं के मजबूत अड्डों को चारों तरफ से घेर लें; उसने उनके चारों तरफ बाकायदा घेरा डाल दिया; तीनों नेता भाग गये, और तीनों डिवीजनों पर, जिन्होंने खुद भी भागने की कोशिश की थी, [अंग्रेजों ने] भागते समय हमला कर दिया। करीम ख़ाँ के डिवीजन

को जनरल डोनकिन ने नष्ट कर दिया; चीतू की सेना को जनरल ब्राउन ने तितर-बितर कर दिया; उनका तीसरा डिवीजन, उस पर हमला किये जाने से पहले ही, तमाम दिशाओं में भाग खड़ा हुआ; उनके सरदार, वासिल मुहम्मद ने आत्म-हत्या कर ली; लड़ाई के बाद चीतू एक जंगल में मरा मिला, यह वादा करने पर कि अब वह कोई गड़बड़ी नहीं करेगा, करीम खाँ को एक छोटी-सी जागीर देकर अवकाश ग्रहण करने की अनुमति दे दी गयी। पिंडारियों को इस तरह छिन्न-भिन्न कर दिया गया कि वे फिर कभी न मिल सकें; अमीर खाँ और ग़फ़ूर खाँ के नीचे के पठानों को भी इसी तरह से कुचल दिया गया।

अब सिन्धिया अकेला एक ऐसा सरदार बच गया था जिसके पास एक सेना, अथवा नाममात्र की स्वतन्त्रता थी; किन्तु वह भी अब पूर्णतया कम्पनी के ऊपर निर्भर हो गया था।—**भारत अब अंग्रेजों का था।**

अगस्त, १८१७. भारत में पहली बार भयानक तेजी से हैजे का प्रकोप हुआ; सबसे पहले वह कलकत्ते के पास जेसोर जिले में शुरू हुआ, एशिया को पार करके वह योरोपीय महाद्वीप पर पहुंच गया, उसे उसने धराशायी कर दिया, वहाँ से वह इंगलैण्ड गया, और वहां से अमरीका। नवम्बर, १८१७ में, उसने हेस्टिंग्ज की सेना पर धावा बोल दिया, इस बीमारी को कलकत्ते से एक नयी सैनिक टुकड़ी अपने साथ ले आयी थी, और जिस समय हेस्टिंग्ज़ की सेना बुन्देलखण्ड के निचले प्रदेश से गुजर रही थी उस समय वह जोरों से फैला हुआ था। हफ्तों तक उस रास्ते पर मरे और मरते हुए लोगों की पाँते पड़ी थी।

१ जनवरी, १८१८. पेशवा (पूना से वह दक्षिण की ओर भाग गया था) के साथ त्र्यम्बकजी डागलिया आकर मिल गया। लगभग २० हजार सैनिकों को लेकर उन्होंने कैप्टन स्टाण्टन के मातहत रहने वाली अंग्रेजी सेना की एक टुकड़ी से लड़ाई की; भयंकर लड़ाई के बाद कैप्टन स्टान्टन जीत गया; मराठे छिन्न-भिन्न हो गये और भाग गये। तब जनरल स्मिथ ने कमान अपने हाथ में ले ली और सतारा पर चढ़ाई कर दी। सतारा ने तुरन्त आत्म-समर्पण कर दिया। बाजीराव भाग गया, अन्त में उसने सर जौन मालकम के सामने आत्म-समर्पण कर दिया, सर जौन ने घोषित कर दिया कि उसे गद्दी से उतार दिया गया है। लार्ड हेस्टिंग्ज ने सतारा के राजा को, जो कि वास्तव में मराठा राजाओं में से था (जिन्हें उनके मंत्रियों, पेशवाओं ने गद्दी से हटा दिया था), शिवाजी का वंशज था, गद्दी

राजा बना दिया। पेशवा सरकार का एक पेन्शन पाने वाला व्यक्ति बन गया। इस प्रकार, घूम-फिर कर स्थिति फिर १७०८ की पहले की हालत में पहुंच गयी जबकि सतारा के राजा, साहू ने बालाजी विश्वनाथ को अपना पेशवा बनाया था। (१८५७ के विद्रोह वाले नाना साहब बाजीराव के दत्तक पुत्र थे। बाजीराव की मृत्यु के बाद ब्रिटिश सरकार उन्हें जो वार्षिकी दिया करती थी उसे बन्द कर दिया गया।) इसके अलावा, कुछ महत्वपूर्ण दुर्गों—तालनेर, मालीगांव तथा असीरगढ़ के दुर्गों—को युद्ध के उस पिछले प्रदर्शन के समय कब्जे में ले लिया गया था।—लार्ड हेस्टिंग्ज ने भारत में समाचार पत्रों की स्वतन्त्रता की घोषणा की।

१८१९. सर स्टैम्फोर्ड रैफिल्स ने जोहोर के तुमांग्वाय अथवा गवर्नर से सिंगापुर को प्राप्त कर लिया।

१८२०. हैदराबाद की सेना के रख-रखाव पर होने वाले भारी खर्चे और अपने मंत्री, चन्दरलाल की कुख्यात कुव्यवस्था की वजह से निजाम भारी कर्जे में फंस गया था। पामर एण्ड कम्पनी का संस्थापक निजाम को जितना भी कर्ज़ उसने चाहा उतना खुशी-खुशी तब तक देता गया जब तक कि कर्ज़ की रकम बहुत बड़ी नहीं हो गयी। पामर गृह के भागीदारों ने हैदराबाद पर अत्यन्त अनुचित दबाव डलवाया। मिस्टर मेटकाफ़ ने, जो उस समय वहाँ रेजीडेन्ट था, हेस्टिंग्ज से हस्तक्षेप करने के लिए कहा, हेस्टिंग्ज ने पामर एण्ड कम्पनी को और अधिक क़र्ज़ देने से मना कर दिया और आदेश दिया कि उत्तरी सरकार के इलाकों की मालगुज़ारी को फौरन पूंजीकृत मूल्य में बदल दिया जाय; इस प्रकार जो धन प्राप्त हुआ उसे क़र्ज़ चुकाने के लिए देने का आदेश दे दिया गया। पामर एण्ड कम्पनी इसके तुरन्त ही बाद फ़ेल हो गयी; हेस्टिंग्ज को इस बात से नुकसान पहुंचा कि इस संस्था से उसका सम्बन्ध था (कहा जाता था कि इस सम्बन्ध का आधार उसके एक सदस्य के साथ उसकी दोस्ती थी)। उसे इस बात से भी नुकसान पहुंचा कि उसने कम्पनी की पहले की अनेक अत्यन्त अनुचित ढंग की कार्रवाइयों को स्वीकृति दे दी थी और केवल तभी हस्तक्षेप किया था जब कि, मेटकाफ़ द्वारा उठाये गये कदमों के परिणाम-स्वरूप, इस मामले का इतना प्रचार हो गया था कि हेस्टिंग्ज के लिए पामर कम्पनी के "साथ कोई सम्बन्ध रखना" सम्भव नहीं रह गया था।

१८२२. का अन्तिम भाग। हेस्टिंग्ज ने अपने पद से त्याग-पत्र दे दिया।

१ जनवरी,१८२३ को वह इंगलैण्ड वापिस लौट गया। वह यह प्रतिज्ञा करके भारत आया था कि राज्यों को हड़पने की नीति पर अमल नहीं करेगा !

अन्तिम काल

१८२३-१८५८

(ईस्ट इंडिया कम्पनी का अन्त)

[१] लार्ड एमहर्स्ट का प्रशासन,
१८२३-१८२८

जनवरी १८२३. हेस्टिंग्ज के चले जाने के बाद, कौंसिल के वरिष्ठ सदस्य, मिस्टर एडम, अन्तरिम काल के लिए, [गवर्नर जनरल बन गये]।— नियन्त्रण बोर्ड ने लार्ड एमहर्स्ट को वाइसराय बनाया।

अगस्त, १८२३. एमहर्स्ट कलकत्ते पहुंचा; फ़ौरन ही वह वर्मा के साथ युद्ध में उलझ गया।—आवा के वर्मी लोग शुरु-शुरू में पेगू राज्य के केवल आश्रित थे; बाद मे वे स्वतंत्र हो गये; उनका नेता एक दुस्साहसिक आदमी, अलोम्प्रा [था], उसने उनकी सेनाओं को सदा विजयी बनाया था; उन्होंने स्याम से तनासरीम को जीत लिया, अनेक अवसरों पर चीनियों को हरा दिया, पूरे अराकान को अधीन कर लिया, पेगू के स्वयम् अपने सामन्ती वरिष्ठ लोगों को ग़ुलाम बना लिया, पूरे प्रायद्वीप के राजा बन बैठे, और आवा को उन्होंने अपनी राजधानी बना लिया। वर्मा के राजा ने अपने को "श्वेत हाथियों का स्वामी, सागर और पृथ्वी का सम्राट" घोषित कर दिया। १८१८–में आवा के राज दरबार में उन लोगों को इस बात का विश्वास हो चुका था कि धराशायी हिन्दुओं पर विजय प्राप्त कर लेने वाले अंग्रेज अजेय वर्मियों के सामने पराजित हो जायेंगे; उनके राजा ने कलकत्ते लिख कर ईस्ट इण्डिया कम्पनी से मांग की कि चटगांव तथा कुछ और ज़िलों को वह उसे दे दे क्योंकि, उसने कहा, ये अराकान के उस प्रदेश के अंग थे जिसका वह मालिक था। किन्तु हेस्टिंग्ज का शिष्टाचारपूर्ण यह जवाब पाने के बाद कि ऐसा सोचना उसकी "भूल" थी, वह चुप रह गया।

१८२२. अपने **महाबन्धुल** (कमाण्डर-इन-चीफ) के नेतृत्व मे बर्मी सेना ने **आसाम को फ़तह कर लिया और अपने राज्य मे मिला लिया।**

१८२३. उन्होंने **अराकान** के तट पर स्थित अंग्रेज़ों के **शाहपुरी** द्वीप पर **कब्ज़ा कर लिया** और वहा पर जो छोटा-सा रक्षक सैन्य-दल था उसका क़त्लेआम कर दिया। **एमहर्स्ट** ने बर्मियो को वहाँ से हटाने के लिए एक सेना भेजी, आवा मे राजा के नाम एक शिष्टाचारपूर्ण पत्र लिखकर उसने प्रार्थना की कि वह गडबडी करने वाले लोगो को, जिन्हे कि वह महज़ **समुद्री डाकू** *समझता था*, सजा दे।

जनवरी, १८२४ इसे कमजोरी का लक्षण समझकर, बर्मियो ने **कछार** प्रान्त पर [जो कि] ब्रिटिश सरक्षण मे [था], आक्रमण कर दिया; अंग्रेज़ फौजो ने उन्हे हरा दिया और खदेड कर **मणिपुर** की तरफ भगा दिया। —अब कलकत्ते से दो सैनिक अभियान भेजे गये, एक **आसाम** पर कब्ज़ा करने के लिए, दूसरा **रंगून** तथा **बर्मा के अन्य बन्दरगाहों** को छीनने के लिए।

१८२४. बिना हमला किये ही **रंगून** पर अधिकार कर लिया गया, उसका रक्षक सैन्य-दल देश मे अन्दर की ओर भाग गया। इस अभियान के कमाण्डर **सर आर्चीबाल्ड कैम्पबेल ने** इसी तरह पास-पड़ोस की कुछ खाईबन्दियो पर कब्जा कर लिया और, लम्बे प्रतिरोध के बाद, **कैमेन्डीन** को (जो रगून से ४ मील के फासले पर था) कब्ज़े मे ले लिया। फिर, गर्म मौसम होने की वजह से उसके सैनिक **रगून** की छावनियो मे रख दिये गये; **रसद की कमी हो गयी,** उसके सैनिको मे **हैज़ा फ़ैल गया।**

दिसम्बर, १८२४. ६० हजार सैनिको को लेकर **महाबन्धुल** कैम्पबेल की सेना पर टूट पडा, अंग्रेज़ो ने उसे दो बार हरा दिया, वह **दोनाबू** की तरफ पीछे हट गया, अंग्रेजो ने उसका पीछा किया और नगर को मजबूती से घेर लिया।

अप्रैल, १८२५. महाबन्धुल एक गोले से **मारा गया।** **दोनाबू** के रक्षक सैन्य-दल **ने आत्म-सम्पर्ण कर दिया।** कैम्पबेल आगे बढता गया, **प्रोम** (उर्फ प्री) नगर पर बिना एक भी गोली चलाये उसने कब्ज़ा कर लिया; **आसाम** के अभियान के परिणाम की प्रतीक्षा करते हुए उसने वहाँ विश्राम किया, **कर्नल रिचर्ड्स** के नेतृत्व मे वहाँ जो सेना भेजी गयी थी उसने **रंगपुर** और **सिलहट** पर क़ब्ज़ा कर लिया, आसाम से बर्मियो को निकाल बाहर किया और, जनरल मैकबीन की कमान मे—

मार्च, १८२५. मे—वह **अराकान** मे बढ गयी; वहाँ उसे ऐसी पहाड़ियों के बीच

मे गुजरना पड़ा जिनकी बहादुरी के साथ रक्षा की जा रही थी; अंग्रेज विजयी हुए; वे मैदानों मे उतर आये, और अराकान की राजधानी के सामने आ उपस्थित हुए। आवा के राज दरबार के साथ होनेवाली बातचीत का कोई फल न निकला।

नवम्बर, १८२५. कैम्पबेल ने फ़ौरन आवा पर चढ़ाई कर दी; दुश्मन उसके पहुँचते ही भाग गये।

फरवरी, १८२६ दो निर्णायक संघर्ष, बर्मी पराजित हो गये; अंग्रेज आवा से दो दिन की यात्रा के फ़ासले पर स्थित, यान्डेबू पहुँच गये; बर्मी राजा ने अधीनता स्वीकार कर ली।

१८२६. बर्मा के साथ सन्धि : बर्मा के राजा ने आसाम, येह् (तनासरीम का एक प्रान्त), तनासरीम तथा अराकान का एक भाग कम्पनी को दे दिया; उसने वादा किया कि कछार प्रान्त में किसी प्रकार का हस्तक्षेप नहीं करेगा, युद्ध के खर्चे के एवज मे १० लाख पौंड देगा, और आवा मे एक ब्रिटिश रेज़ीडेन्ट को रहने की अनुमति भी दे देगा।

इस प्रथम बर्मी युद्ध (१८२४–१८२६) मे ब्रिटिश सरकार का १ करोड़ ३० लाख पौंड खर्च हुआ था; इंगलैण्ड मे इसे नापसन्द किया गया।

अक्टूबर, १८२४. (युद्ध के दिनों में), बंगाल की ४७वीं पैदल सेना ने, जो बारकपुर मे रहती थी, रंगून जाने का आदेश पाने पर खुली बग़ावत कर दी (देखिए, पृष्ठ २१८)।

१८२६. युद्ध के अन्त में, उसी स्थान पर एक और बग़ावत हुई (देखिए, पृष्ठ २१८)।

१८ जनवरी, १८२६. लार्ड काम्बरमियर के नेतृत्व मे फौज ने भरतपुर पर, जिसे अभेद्य समझा जाता था, हमला करके अधिकार कर लिया। भरतपुर के इस राज्य की स्थापना जाटों ने, जो देश के आदिवासी थे, मुग़ल साम्राज्य के टूटने के समय की थी। उस समय [१८२६] उस पर दुर्जनसाल शासन करता था; इसने "गद्दर" को उसके असली वारिस, बलदेव सिंह (जो बच्चा था) से छीन लिया था–बलदेव सिंह के समर्थकों ने अंग्रेजों से मदद माँगी; काम्बरमियर को इसीलिए उसके खिलाफ़ भेजा गया था, इत्यादि। भरतपुर के पतन के बाद, दुर्जनसाल को एक ब्रिटिश बन्दी की हैसियत से बनारस भेज दिया गया था और ब्रिटिश संरक्षण मे बलदेव सिंह को राजा बना दिया गया था।

१८२७. बर्मी युद्ध के लिए एमहर्स्ट को पार्लमेंट से धन्यवाद प्राप्त हुआ,*

उसे अर्ल बना दिया गया और फरवरी, १८२७ में, वह इंगलैण्ड वापिस चला गया।

... ...

[२] लार्ड विलियम बेंटिक का प्रशासन, १८२८–१८३५

(कम्पनी की इच्छा के विरुद्ध बेंटिक के चुनाव के सम्बन्ध में देखिए, पृष्ठ २१९)

४ जुलाई, १८२८. बेंटिक कलकत्ते पहुंचा—जोधपुर के राजपूत राज्य में राजा मानसिंह को, उसके विद्रोही सरदारों की मर्जी के खिलाफ, अंग्रेजों ने फिर गद्दी पर बैठा दिया।

ग्वालियर, १८२७. दौलतराव सिंधिया की मृत्यु हो गयी, उसके न तो कोई सन्तान थी, और न कोई दत्तक पुत्र। बेंटिक ने उसकी पत्नी—रानी—को आदेश दिया कि वह किसी लड़के को गोद ले ले; उसने सबसे नजदीकी पुरुष सम्बन्धी, आलीजाह जनकोजी सिंधिया को चुना; १८३३ में इसी ने रानी के खिलाफ लड़ाई छेड़ दी; बेंटिक ने रानी को आज्ञा दी कि वह पूरे तौर से सरकार उसके हाथों में सौंप दे।

जयपुर में, वजीर ने राजा और उसकी मां, रानी को विष दे दिया और सरकार पर कब्जा कर लिया। ब्रिटिश रेजीडेन्ट ने हस्तक्षेप किया; एक बालक को, जो राजवंश का एकमात्र प्रतिनिधि था, उसने गद्दी पर बैठा दिया। उसकी नाबालिगी के काल के लिए रेजीडेन्ट ने स्वयम् राज्य का शासन अपने हाथ में ले लिया।

अवध, १८३४. मिस्टर मेडोक ने अवध के राजा के कुप्रशासन की जांच-पड़ताल की, वह सारी आमदनी को खुद उड़ा डालता था; गवर्नर जनरल ने राजा को गम्भीर चेतावनी दी।

भोपाल, १८२०. भोपाल के राजा की मृत्यु हो गयी, राज्य का शासन उसकी विधवा, सिकन्दर बेगम ने चलाना शुरू किया; उसके भतीजे ने, जो कि सही वारिस था, १८३५ में ब्रिटिश सरकार से अपील की। बेंटिक ने हस्तक्षेप किया, उसे गद्दी पर बैठा दिया (आजकल जो बेगम राज्य कर रही है वह उसी राजा की बेटी है)।

कुर्ग, १८३४. बेंटिक ने कुर्ग (दक्षिणी मलबार के तट पर) को हड़प लिया।

१८२० में वीर राजा गद्दी पर बैठा था और उसने अपने शासन का श्रीगणेश अपने सम्बन्धियों का कत्लेआम करके किया था।

१८३४ में, वीर राजा ने कम्पनी के खिलाफ युद्ध की घोषणा कर दी; मद्रास की सेना ने उसकी राजधानी पर अधिकार कर लिया, उसने सब कुछ छोड़ दिया, [राज्य को] कम्पनी की अमलदारी में मिला लिया गया क्योंकि अन्य कोई राजकुमार जिन्दा नहीं था।

कछार। १८३० में कम्पनी के राज्य में मिला लिया गया; बर्मी युद्ध के दिनों में यह ब्रिटिश संरक्षण में था; किन्तु १८३० में राजा गोविन्दचन्द्र की मृत्यु हो गयी, उसका कोई वारिस न था।

मैसूर, १८११ बालक राजा (प्राचीन राजवंश का, जिसे पाँच वर्ष की अवस्था में १७९९ में वेलेज़्ली ने मैसूर की गद्दी पर फिर से बैठा दिया था और जिसे उसकी नाबालिगी के काल के लिए पूर्णिया की देख-रेख में रख दिया था) बालिग हो गया, पूर्णिया को उसने निकाल बाहर किया, ख़ज़ाने को उड़ा दिया, कर्ज़ में फँस गया, रैयत को निर्दयता से दबाया कुचला—इसके फलस्वरूप, १८३० में, उसके आधे राज्य में विद्रोह की हालत पैदा हो गयी; ब्रिटिश सेना ने विद्रोह को दबा दिया; बेंटिंक ने मैसूर को हड़प लिया; राजा को ४० लाख पौंड तथा उसके राज्य की आमदनी का पाँचवाँ भाग सालाना देकर पेंशन दे दी गयी; मालगुज़ारी की वृद्धि की वजह से यह दूसरा "भाग" अत्यन्त मूल्यवान हो गया था। (इस प्रकार, उनके राज्यों पर कब्ज़ा करते समय अंग्रेज़ जब राजाओं और राजकुमारों को पेंशन देते थे तो गरीब हिन्दुओं [भारतीयों—अनु०] के ऊपर बोझ डालकर उनकी मदद करते थे।)

विद्रोह—बंगाल के दक्षिण-पश्चिम में, रामगढ़, पालामऊ तथा छोटा नागपुर के इलाकों में कोलियों, पहाड़ों तथा संथालों की जंगली जातियों ने विद्रोह कर दिये; और बाकुड़ा के पास के प्रदेश में चुआर जाति के लोगों ने विद्रोह कर दिया; भारी कत्लेआम के बाद विद्रोह कुचल दिया गया।—कलकत्ते के पास बारासात में भी भयंकर उपद्रव हुए, वहाँ पर टीटूमीर को मानने वाले मुसलमान कठमुल्लाओं और हिन्दुओं के बीच पूरी लड़ाई छिड़ गयी। ब्रिटिश रेजीमेन्ट ने बागियों को दबा दिया।

१८२७, लार्ड एमहर्स्ट रनजीत सिंह ("शेरे लाहौर") के साथ मेल-मिलाप किया कर रहा था, १८३१ में लार्ड बेंटिंक ने भी यही किया (सतलज के तट पर दरबार)। (देखिए, पृष्ठ २२२)

१८३२. सिन्ध के अमीरों के साथ व्यापारिक सन्धि; इसके अन्तर्गत, रणजीत सिंह के सहयोग से, सतलज और सिन्धु नदियाँ पहली बार आवागमन के लिए खोल दी गयीं।

बेंटिक और कलकत्ते के अफसरों के बीच झगड़ा, इसका कारण यह था कि उनके बोनस को "इकहरे से घटाकर" आधा कर दिया गया था। (पृष्ठ २२३)। सती प्रथा का अन्त—क़ानूनी सुधार, ठगों का अन्त (पृष्ठ २२४)।—क़ानून और न्याय (२२३-२२४)। १८३५ मे, बेंटिक ने देशी लोगो के लिए कलकत्ते मे एक मेडीकल कालेज कायम किया।

१८३३. उत्तर-पश्चिमी प्रान्तों को एक अलग प्रेसीडेन्सी बना दिया गया; इलाहाबाद मे उनके लिए एक नये [सर्वोच्च] न्यायालय तथा रेवन्यू बोर्ड की स्थापना की गयी। इन प्रान्तो की भूमि का ३० वर्ष के लिए बन्दोबस्त कर दिया गया (इस कार्य की योजना बनाने वाला और उसका नियत्रक रोबर्ट बर्ट था)।

पेनिन्शुलर (प्रायद्वीपीय) तथा ओरियन्टल (प्राच्य) कम्पनी ने, लालसागर के मार्ग से भाप के जहाज़ो के आवागमन का मार्ग खोलकर, भारत को इंगलैण्ड के दो महीने और नजदीक पहुंचा दिया; इस कम्पनी को, जिसकी १८४२ मे स्थापना हुई थी, देश और कलकत्ते दोनो जगहों की सरकारो का समर्थन मिला।

१८३३. (पार्लामेन्ट की कार्यवाहियाँ) पट्टे की मियाद फिर खत्म हो गयी थी, उन्हीं मुद्दों पर फिर वही पुरानी बहसें शुरू हो गयी, किन्तु [इस बार] मुक्त व्यापार वाले दल का जोर था। चीन के साथ होने वाला व्यापार तमाम व्यापारियों के लिए खोल दिया गया; इस प्रकार कम्पनी के व्यापार की जो आखिरी इजारेदारी थी उसे भी निजी व्यापार के पक्ष मे समाप्त कर दिया गया।—पार्लामेन्ट के एक कानून के द्वारा नयी, चौथी प्रेसीडेन्सी—उत्तर-पश्चिमी प्रान्तो की—कायम कर दी गयी।—एक दूसरे क़ानून ने कई प्रान्तो की स्थानीय सरकारों के काम-काज में दखल देने की और अधिक ताकत गवर्नर जनरल और उसकी कौन्सिल को दे दी; तै हुआ कि स्थानीय गवर्नरों के यहाँ न तो कौन्सिलें होगी और न उन्हें कानून बनाने के अधिकार प्राप्त होंगे। तमाम व्यक्तियों के सम्बन्ध मे, चाहे वे योरोपियन हो चाहे देशी, तथा तमाम न्यायालयों के सम्बन्ध मे गवर्नर जनरल ही कानून बनाएगा। इस बात का पता लगाने के लिए कि पूरे भारत के

लिए क़ानूनों की एक ही संहिता बनाने की कितनी सम्भावना है एक कमीशन नियुक्त किया गया।

. . . .

[३] सर चार्ल्स मेटकाफ़, अस्थायी गवर्नर जनरल, १८३५-१८३६

वह आगरा का गवर्नर था, अन्तरिम काल के लिए गवर्नर जनरल नियुक्त कर दिया गया। डायरेक्टर मण्डल चाहता था कि पार्लामिन्ट उसे निश्चित रूप से गवर्नर जनरल बना दे, किन्तु मंत्रिमंडल नियुक्ति के अधिकार को पूरे तौर से अपने ही हाथों में रखे रहना चाहता था; उसने उस पद पर लार्ड हेटिसबरी को नियुक्त कर दिया, किन्तु उसके रवाना होने से पहले ही टोरियों की जगह ह्विग लोगों की सरकार आ गयी; और उनके नियंत्रण मण्डल के नये अध्यक्ष, सर जौन हौबहाउस ने हेटिसबरी की नियुक्ति को रद्द कर दिया, और लार्ड ऑकलैण्ड को नामज़द कर दिया।

१८३५. मेटकाफ ने भारत में समाचार पत्रों की स्वतंत्रता की घोषणा की। लन्दन में स्थित इंडिया हाऊस (भारत निवास) के कुछ डायरेक्टरों (मण्डल) ने मेटकाफ के साथ, जो कि भारत में काम करने वाले सबसे अच्छे अधिकारियों में से एक था, इतना अशिष्ट व्यवहार किया कि ऑकलैण्ड के भारत पहुँचते ही उसने सिविल सर्विस से त्यागपत्र दे दिया, और इंगलैण्ड वापिस लौट गया।

. . . .

[४] लार्ड ऑकलैण्ड का प्रशासन, १८३६-१८४२

२० मार्च, १८३६. ऑकलैण्ड ने कलकत्ते में सरकार का भार ग्रहण किया। उसने (पामर्स्टन की प्रेरणा से) अफ़गान युद्ध का श्रीगणेश किया।

अफ़गान राजवंश। १७५७ में, अहमदशाह दुर्रानी ने दिल्ली को फ़तह किया; १७६१ में, [उसने] मराठों के विरुद्ध पानीपत की भयंकर लड़ाई लड़ी (वह अब्दालियों या दुर्रानियों के अफ़गान क़बीले का सरदार था

१७६१ में, अफगानिस्तान वापिस जाकर **अहमदशाह दुर्रानी काबुल**[1] में राज्य करता था। उसकी मृत्यु (१९७३) के बाद उसका बेटा तैमूरशाह (१७७३-१७९२)[2] उसका उत्तराधिकारी बना; उसके शासन काल में, **बरकजाइयों** के वंश का उदय हुआ; इस वंश का प्रमुख **पयाँदा ख़ाँ** कमज़ोर तैमूर का वज़ीर [था]; तैमूर ने एक बार गुस्से मे आकर **बरकजाइयों** को बुरी तरह से अपमानित कर दिया; उन्होने **बगावत कर दी**, इस पर तैमूर ने **पयाँदा ख़ाँ** को गिरफ्तार कर लिया और मार डाला; **बरकजाइयों** ने प्रण किया कि **सादोजाइयों** (शाही वंश का यही नाम था)[3] से बदला लिये बगैर वे नही रहेगे; तख्त **तैमूर के बेटे**—

१७९२-१८०२—**जमान शाह** को मिला। उसने भारतीय सीमा पर युद्धात्मक कार्रवाइयो का प्रदर्शन करके **कम्पनी** को अत्यधिक नाराज़ कर दिया; **हिन्दुस्तान** के **सम्बन्ध में** उसके **जो इरादे थे** उन्हे **बरकजाइयो** और **स्वयम् उसके भाइयों** ने, जिनमे से चार ने [एक निश्चित] भूमिका अदा की थी, पूरा नहीं होने दिया। उसके ये भाई थे; **शुजा-उल-मुल्क, महमूद, फ़ीरोज, और क़ैसर**।—**बरकजाई कबीले के प्रमुख** के स्थान पर **पयाँदा ख़ाँ** के बाद उसका बेटा फ़तह ख़ां पदारूढ हुआ।

१८०१ जिस समय एक विशाल सेना लेकर हिन्दुस्तान की तरफ आते हुए जमान [शाह] **पेशावर** मे टिका हुआ था, **फ़तह ख़ाँ** ने जमान के भाई **महमूद** के साथ साजिश करके उसे अपनी तरफ मिला लिया; उसने उसका झण्डा ऊंचा किया और **कन्धार** पर अधिकार कर लिया; **जमान** उल्टे पाँव वापिस लौटा, उसे **पकड़ लिया गया**, उसकी **आँखें फोड़ दी गयीं; क़ैद में डाल दिया गया**, इसी दुर्गतिपूर्ण पराधीन अवस्था में वह **एक लम्बे काल तक ज़िन्दा रहा**। उसके असली उत्तराधिकारी, **शुजा-उल-मुल्क** ने

---

१ इस बात के सम्बन्ध मे मार्क्स ने जिस पुस्तक का उपयोग किया था वह गलत है, क्योंकि अहमदशाह ने कन्धार मे राज्य किया था और वही उसकी मृत्यु हुई थी।

२ "कैम्ब्रिज हिस्ट्री आफ इंडिया", खण्ड ५, १९२९ के अनुसार, १७९३।

३ मार्क्स ने जिस पुस्तक का उपयोग किया था उसने इस सम्बन्ध मे भूल की है। तमूर की मृत्यु के बाद पयाँदा ख़ाँ ने जमान को गद्दी पर बैठा दिया था; उसे जमान ने—जो ऐसे अत्यन्त प्रभावशाली वज़ीर से छुटकारा पा लेना चाहता था—मरवा डाला। बरकजाइयों और सादोजाइयो के बीच दुश्मनी का दौर इसी समय से शुरू हो गया था। देखिये फेरियर द्वारा रचित: "अफगानों का इतिहास", 'द' कैम्ब्रिज हिस्ट्री आफ इंडिया", खण्ड ५ इत्यादि।

फ़ौरन काबुल पर चढ़ाई कर दी, किन्तु फतह ने उसे हरा दिया और गद्दी पर—

१८०२[1]-१८१८. महमूदशाह को बैठा दिया; फ़ीरोज़ ने इसी समय हिरात और क़ैसर के सादोज़ाई राज्यों तथा कंधार के राज्यों पर अधिकार कर लिया।

१८०८.[2] काबुल के अनेक दुर्रानी अमीरों के भडकाने पर, शाहशुजा वापिस लौट आया, राज्य पर जबर्दस्ती कब्ज़ा करने वाले लोगों को उसने हरा दिया, सबको माफ कर दिया, अपने भाइयों को हिरात और कन्धार का गवर्नर बना दिया। फ़तह ख़ाँ भाग गया, पहले उसने क़ैसर के साथ षड्यन्त्र रचा और कैसर के नाम से एक नया विद्रोह खड़ा कर दिया, बुरी तरह कुचल दिया गया, कैसर को माफ कर दिया गया।—तब फतह ख़ाँ ने शाह महमूद के सबसे बड़े लडके कामरान के नाम पर बगावत का झण्डा ऊँचा किया और धोखे से कन्धार को कैसर से छीन लिया। विद्रोह को एक बार फिर दबा दिया गया, और विद्रोहियों को शाहशुजा ने एक बार फिर माफ कर दिया।—फतह ख़ाँ ने कैसर को फुसलाया कि वह विद्रोह का नेता बने, दोनों ने मिलकर पेशावर पर कब्ज़ा कर लिया, विद्रोही फिर हार गये, फिर माफ कर दिये गये।—फतह ख़ाँ ने अब नया विद्रोह किया, इस बार वह विजयी हुआ, शाहशुजा को [१८१० में] भागने के लिए मजबूर होना पड़ा; वह कश्मीर में पकड़ा गया, वहाँ के गवर्नर ने कोहिनूर हीरे को उससे छीनने की कोशिश की, शुजा रणजीत सिंह के पास लाहौर भाग गया, रणजीत सिंह ने पहले उसके साथ दोस्ती दिखलाई, उसके बाद दुर्व्यवहार किया और कोहिनूर हीरे को छीन लिया। शुजा वहाँ से भागकर लुधियाना पहुँचा जहाँ उसे राजा किस्तावर के रूप में एक नया मित्र मिला। शुजा ने कश्मीर पर एक असफल आक्रमण किया, और फिर लुधियाना वापिस लौट गया।

१८१६. महमूद कमज़ोर और अयोग्य शासक था; सारी वास्तविक सत्ता फतह ख़ाँ तथा बरकज़ाइयों के हाथों में थी।—फ़तह ख़ाँ के एक छोटे भाई, दोस्त मुहम्मद ने उसके साथ मिलकर बरकज़ाइयों को गद्दी पर बैठाने की योजना बनायी, लेकिन पहले वे पूरे अफ़ग़ानिस्तान को एक मे

---

[1] बर्नेस के अनुसार, १८००।
[2] बर्नेस के अनुसार, १८०३।

व्यक्ति के शासन के अन्तर्गत ले आना चाहते थे। उन्होने **हिरात पर,** (जिस पर **फ़ीरोज़** शासन करता था) चढाई कर दी; हिरात पर उन्होने कब्ज़ा कर लिया और **फ़ीरोज़** भाग गया; उसके भतीजे **शाहज़ादे कामरान** ने कसम खाई की बरकज़ाइयो से, खास तौर से फ़तह खा से, वह बदला लेगा; वह **काबुल** गया, अपने अर्द्ध-मूर्ख पिता **शाह महमूद** को उसने समझाया कि **फ़तह खाँ** ने जो कुछ किया था वह विद्रोह था, उसने उससे इस बात की अनुमति ले ली कि उसे पकडकर वह काबुल ले आये; उसने ऐसा ही किया; **महमूद और उसके बेटे कामरान की उपस्थिति में फ़तह खाँ को** अत्यन्त ही वीभत्स ढग से **काटकर टुकड़े-टुकड़े कर दिया गया** (देखिए, पृष्ठ २३०)। फिर **दोस्त मुहम्मद** एक भारी सेना लेकर आया, **तमाम बरकज़ाई** उसका समर्थन कर रहे थे, **उसने काबुल पर अधिकार कर लिया,** महमूद और कामरान को जलावतन कर दिया; वे भागकर **फ़ीरोज़** के पास हिरात चले गये।—**बरकज़ाइयों** ने अफ़गानिस्तान के राज्य पर अधिकार कर लिया। **दोस्त मुहम्मद** के अलावा, फतह खाँ के निम्न और भाई थे : **मुहम्मद,** जिसने **पेशावर** पर कब्ज़ा कर लिया था, **अज़ीम खाँ** (सबसे बडा भाई)—जिसने यह कहकर **काबुल** पर चढाई कर दी थी कि दोस्त मुहम्मद के वश का मुखिया होने की वजह से वह उसी का है; **पुर्दिल खाँ, कोहनदिल खां** तथा **शेर अली खाँ** ने **कंधार** तथा **खिलजियों के देश पर** कब्ज़ा कर लिया; दोस्त मुहम्मद ने **काबुल अज़ीम खाँ** को दे दिया और **गजनी** की तरफ चला गया।—**अज़ीम खाँ** ने **शाहज़ादा अयूब** नाम के एक कठपुतली राजा को काबुल का बरायनाम **शाह** बना दिया, यह प्राचीन **सदोज़ाई** राजवश का एक प्रतिनिधि था; किन्तु **दोस्त मुहम्मद** ने [उसी राजवश के] एक दूसरे प्रतिनिधि, **सुल्तान अली** को शाह घोषित कर दिया, अयूब ने उसे मार डाला। इसके तुरन्त बाद ही, जब कि **दोस्त मुहम्मद और अज़ीम खाँ** ने **सिक्खों** के खिलाफ लडाई छेड दी थी, अज़ीम खाँ को पता चला कि **उसका भाई दोस्त** उसके विरुद्ध **रणजीत सिंह** से मिल गया है; डर मे वह भागकर **जलालाबाद** चला गया, १८२३ मे वही उसकी मृत्यु हो गयी, रणजीत सिंह ने **दोस्त मुहम्मद को पेशावर** दे दिया, और दोस्त अफ़गानिस्तान का वास्तविक प्रधान बन गया; गडबड़ी के एक मौके पर **कंधार के बरकज़ाइयों** ने काबुल पर अधिकार कर लिया। और—

१८२६—से पहले **दोस्त मुहम्मद** दूसरे दावेदारो को निकाल बाहर करके **काबुल**

का स्वामी नहीं [बन सका था]। उसने सुचारु रूप से तथा संयम के साथ राज्य-शासन चलाया; दुर्रानी क़बीलों को उसने अपनी शक्ति भर कुचलने की कोशिश की।

१८३४. शाहशुजा ने सिन्ध में एक सेना तैयार करके अपने राज्य को प्राप्त करने का फिर प्रयत्न किया; उसे दोस्त के विभिन्न भाइयों का, जो दोस्त से जलते थे, सहयोग प्राप्त था।

१८३४. शुजा को लार्ड बेंटिंक से वह समर्थन नहीं मिला जिसकी उसने आशा की थी, और रणजीत सिंह ने अपने समर्थन के लिए इतनी बड़ी कीमत माँगी कि शुजा ने उसे लेने से इन्कार कर दिया; शुजा ने अफ़गानिस्तान पर चढ़ाई कर दी, कंधार को उसने घेर लिया, किन्तु उस शहर ने अत्यन्त वीरता से अपनी रक्षा की, शुजा के पीछे काबुल से दोस्त मुहम्मद अपनी सेना लेकर आ पहुंचा; एक हल्की-फुलकी लड़ाई के बाद शुजा भारत वापिस भाग गया।—मौक़ा पाकर रणजीत सिंह ने पेशावर को अपने राज्य में मिला लिया; दोस्त मुहम्मद ने सिक्खों के विरुद्ध एक धार्मिक युद्ध की घोषणा कर दी, एक विशाल सेना लेकर उसने पंजाब पर चढ़ाई कर दी, किन्तु रणजीत सिंह से पैसा पाने वाले एक अमरीकी जनरल हार्लन ने उसके अभियान को असफल बना दिया, एक राजदूत की हैसियत से वह अफ़ग़ानों की छावनी में पहुंच गया और वहाँ उसने इतनी कामयाबी से साज़िश रची कि फौज में असन्तोष उभर पड़ा, आधी फौज टूट गयी और उठकर भिन्न-भिन्न रास्तों से इधर-उधर चली गयी, दोस्त काबुल लौट गया।

१८३७.[1] रणजीत सिंह ने कश्मीर और मुल्तान पर अधिकार कर लिया; रणजीत सिंह के खिलाफ़ जो असफल सैनिक अभियान किया गया था उसमें दोस्त के बेटे, अकबर खां ने नामवरी हासिल की।

फ़ारस। आग़ा मुहम्मद तथा उसके [भतीजे] फ़तह अली ने क्रमागत शाहों के रूप में फारस की बहुत तरक्की की थी। फतह अली के दो बेटे थे : शाहज़ादा अब्बास मिर्ज़ा और मुहम्मद।

१८३४.[2] अब्बास मिर्ज़ा ने बूढ़े फ़तह अली को इस बात के लिए राज़ी कर

---

१ "द कैम्ब्रिज हिस्ट्री आफ इण्डिया", खण्ड ५ के अनुसार, कश्मीर पर १८१९ में और मुल्तान पर १८१८ में कब्जा किया गया था।

२ साइक्स, "ए हिस्ट्री आफ परशिया," खण्ड २, लन्दन, १९२१ के अनुसार, १८३३।

लिया कि हिरात के खिलाफ़ वह सैनिक कार्रवाई करे, किन्तु फ़तह की उसी साल [१८३४ मे] मृत्यु हो गयी; **अब्बास मिर्ज़ा** *[मार दिया गया];* **मुहम्मद** *गद्दी पर बैठा* **और,** *तेहरान मे स्थित रूसी राजदूत,* **काउन्ट सिमोनिच** *की प्रेरणा से,* **अंग्रेजों की इच्छा के विरुद्ध—**

१८३७—में हिरात को उसने **घेर लिया।** बहाना यह था कि **मुहम्मद** शाह ने उससे कुछ सहायता माँगी थी जिसे **कामरान** ने, जो हिरात का शाह कहलाता था, उसे देने से इन्कार कर दिया था।

सितम्बर, १८३८. फ़ारसी लोग वापिस चले गये, *नाम के लिए तो* **अंग्रेजों की प्रार्थना पर,** पर वास्तव में इसलिए कि हिरात के **अफ़गान रक्षक सैन्य दल** के खिलाफ वे कुछ कर नहीं सकते थे। घेरे के दौरान, हिरात के रक्षक सैन्य दल के एक व्यक्ति—**एलड्रेड पौटिंजर** ने, जो उस समय एक युवक लेफ्टीनेन्ट ही था, नाम कमाया था।

१८३६. फारस के राज दरबार में नियुक्त ब्रिटिश, मन्त्री ने हिरात **पर होने वाली फ़ारस की चढ़ाई** के सम्बन्ध मे **ऑक्लैण्ड** को चेतावनी दे दी; उसने उसे रूसी चाल, आदि बताया था; इसलिए—

१८३७—ऑक्लैण्ड ने कैप्टन अलेक्जेन्डर बर्न्स को व्यापारिक सन्धि करने तथा अफगानिस्तान के साथ और नजदीकी सम्बन्ध कायम करने के उद्देश्य से **काबुल** *भेजा; काबुल पहुँचने पर [बर्न्स] ने देखा कि* **कन्धार के सरदारों** ने **रणजीत** सिंह के खिलाफ रूसी मदद की याचना की है *और (?) दोस्त मुहम्मद भी उन्हीं की मिसाल पर अमल करने के लिए* **आमादा दिखलाई देता है। बर्न्स** जिन दिनो **काबुल में रह रहा था, रूसी** *आदेश से फ़ारस के साथ बरकजाइयो ने वास्तव मे एक सन्धि कर ली;* **और तेहरान में स्थित अंग्रेज राजदूत, मिस्टर मैकनील** के *साथ "अपमान-जनक" ढग से व्यवहार किया। बर्न्स का मिशन असफल रहा।* **दोस्त मुहम्मद** की माँग थी कि जो भी उसके साथ सम्बन्ध करना चाहे वह **रणजीत** *सिंह से उसे पेशावर दिला दे। रूसी राजदूत ने इसका वादा कर* लिया; **बर्न्स** ऐसा वादा करने मे असमर्थ था; इसके बाद, **दोस्त मुहम्मद** ने *घोषित कर दिया कि वह रूस के साथ है* **और बर्न्स** *अफगानिस्तान छोड़ कर चला गया।*

२६ जून, १८३८. *लार्ड ऑक्लैण्ड, रणजीत सिंह तथा शाह शुजा के दर्म्यान* **लाहौर की त्रिदलीय सन्धि;** तै हुआ कि शाहशुजा पेशावर और सिन्धु के **किनारे के** *राज्यों को पूर्णतया रणजीत सिंह को सौंप देगा; अफ़गान और*

सिक्ख एक दूसरे का समर्थन करेंगे; शुजा को अफ़ग़ानिस्तान की गद्दी पर फिर से बैठा दिया जायगा, गवर्नर जनरल उसे देने के लिए एक रक़म निश्चित कर देगा और इसके एवज में वह सिन्ध सम्बन्धी सारे दावों को छोड़ देगा; हिरात को पूरे तौर से वह अपने भतीजे कामरान को सौंप देगा; और ब्रिटिश अथवा सिक्ख अमलदारी पर अन्य किन्हीं भी विदेशियों को आक्रमण करने से वह रोकेगा।

१ अक्टूबर, १८३८. अंग्रेज़ों के मित्र शुजा को गद्दी पर फिर से बैठाने के लिए अफ़ग़ानिस्तान के विरुद्ध ऑक्लैण्ड द्वारा युद्ध की शिमला घोषणा। ब्रिटिश पार्लामेन्ट में अकारण विरोध, पाम[1] ने, जो इस पूरे, खुले "रूस-विरोधी" स्वांग का असली रचाने वाला था, उसे चक्कर में डाल दिया था। (इसी बीच, ठीक उस समय जिस समय तेहरान के राज दरबार के रूसी सिमोनिच के साथ अत्यन्त मैत्रीपूर्ण घनिष्ट सम्बन्ध थे "फ़ारस को डरवाने के लिए", पाम ने फ़ारस की खाड़ी में स्थित करक द्वीप पर कब्ज़ा करवा लिया) ऑक्लैण्ड के नेतृत्व में युद्ध कौन्सिल की बैठक हुई: तै हुआ कि मुख्य [अंग्रेज़] सेना फिरोज़पुर में रणजीत सिंह की सेना के साथ जाकर मिल जाय; बम्बई का सैन्य दल सिन्धु के मुहाने के लिए रवाना हो गया; तै हुआ कि तीनों डिवीज़न सिन्ध में शिकारपुर में मिलेंगे और साथ-साथ वहाँ से अफ़ग़ानिस्तान पर चढ़ाई करेंगे। इस काम के लिए सिन्ध के अमीरों के सहयोग की दरकार थी।

१७८६. इन अमीरों ने—बलूचियों, तालपुड़ा क़बीले के सरदारों ने—सिन्ध को अफ़ग़ानों से जीतकर छीन लिया था; प्रदेश को आपस में उन्होंने बाँट लिया था और वहाँ सामन्ती व्यवस्था कायम कर दी थी।

१८३१. कैप्टन बर्न्स ने (जिस समय की अपने लद्दू घोड़ों के दल को लेकर [भेंट देने के लिए] वह रणजीत सिंह के दरबार की ओर जा रहा था) अमीरों के साथ मेल-जोल कर लिया था, और १८३२ में लार्ड विलियम बेंटिक ने उनके साथ बाक़ायदा एक सन्धि कर ली थी। ब्रिटिश व्यापारियों के लिए सिन्धु नदी पर व्यापार का मार्ग इसी सन्धि के बाद खुला था।

१८३५. रणजीत सिंह ने अमीरों के साथ लड़ाई छेड़ दी, किन्तु (ईस्ट इंडिया) कम्पनी ने उसे रोक दिया।

---

[1] पामर्स्टन।

१८३८ **त्रिदलीय सन्धि** के द्वारा सिन्ध के अमीरों को इस बात का आश्वासन दे दिया गया कि [अपने इलाकों पर] उन्हे शान्तिपूर्वक अधिकार बनाये रहने दिया जायगा बशर्ते कि गवर्नर जनरल द्वारा निर्धारित की गयी रकम वे शाहशुजा को देते रहे ।

१८३९ **का प्रारम्भिक भाग, पौटिंजर** को [सिन्ध] भेजा गया कि वहाँ जाकर वहाँ के **अमीरों से** वह **एक विशाल धन-राशि की माँग करे** । इस अजब माँग के लिए यह निर्लज्ज बहाना बनाया गया कि यह रकम अमीरो को **सामन्ती नजर** के रूप मे **अफ़ग़ानिस्तान के शाह शुजा** को देनी है। अमीरो ने विनती की कि जिस समय शुजा निर्वासित था उस समय यानी १८३३ मे उन्होंने उसे जो **तात्कालिक** आर्थिक सहायता दी थी उसके एवज मे उसने उन्हें **उस नजर की अदायगी से मुक्त कर दिया था;** [किन्तु] **पौटिंजर** ने "**कोष**" देने पर जोर दिया और कहा कि अगर वे न देंगे तो उन्हे [अमीरो को] उनके स्थानो से हटा दिया जायगा । **उन्होंने** न्यायपूर्ण क्रोध के साथ **रकम दे दी** ।

नवम्बर, १८३८. बगाल सेना सतलज के पास पहुँच गयी; रणजीत सिंह की सेना वही जाकर उससे मिल गयी ।

१० दिसम्बर, १८३८. **सर विलाबी कोटेन** की कमान मे (कमाडर-इन-चीफ, **सर हेनरी फ़ेन द्वारा इन तमाम कार्रवाइयो के विरुद्ध क्रोध मे इस्तीफा दे दिये जाने के बाद) सयुक्त सेनाओं ने शिकारपुर** (**सिन्धु**) मे मिलने के निश्चित स्थान की दिशा मे **फीरोजपुर** से कूच कर दिया । वे—

१४ जनवरी, १८३९. को–**सिन्ध के इलाक़े** में पहुँच गयी । वहाँ उन्होंने सुना कि बम्बई से अपनी सेनाओ को लेकर **सर जौन कीन** सुरक्षित रूप से **ठट्टा** पहुँच गया है ।

२९ जनवरी, १८३९. सर **अलेक्जेन्डर बर्न्स** को (सिन्ध के) **अमीरों** से यह माँग करने के लिए भेजा गया कि सिन्ध नदी पर स्थित **बक्खर** के किले को वे ब्रिटिश सेनाओ के लिए एक **डिपो** (प्रधान कार्यालय) के रूप मे काम करने के लिए दे दें । उसे देने के लिए उन्हें मजबूर कर दिया गया । सेना **सिन्धु नदी के बाएँ (पूर्वी) तट** से **हैदराबाद** की ओर बढती गयी, साथ ही साथ दाहिने तट से **बम्बई का सैन्य दल** आगे बढता गया और हैदराबाद के सामने आकर खडा हो गया । एक ब्रिटिश जहाज ने, जिस पर कुछ रिजर्व सैनिक थे, **कराची** पर अधिकार कर लिया, इन सैनिको ने शहर को एक **अंग्रेजी** किले मे बदल दिया । अमीर लोग हर बात मे

कम्पनी के आदेशों को मानते गये और मुख्य सेना शिकारपुर की ओर कूच करती गयी। वहाँ वह—

१८३९ की फरवरी के अन्त में पहुँच गयी; सर जौन कौन के नेतृत्व में आने वाले बम्बई सैन्य दल तथा उसके साथ आ रहे शाहशुजा का इन्तजार किये बिना—सर विलाबी कोर्टन बोलन दर्रे की तरफ बढ गया; उसे १४६ मील नम्रे एक जलते हुए रेगिस्तान को पार करना पड़ा, उसे बहुत तकलीफ हुई, सामान लाद कर ले जाने वाले उसके कोडियो पशु मर गये।

१० मार्च, १८३९. सैन्य दल दर्रे के मुहाने पर स्थित दादर पहुच गया; कोर्टन ने कुछ दिनों आराम किया, उसने देखा कि खिरात का मेहराब खाँ खिलाफ था; किसी प्रकार की रसद सामग्री नही मिल सकती थी।

मार्च, १८३९ ६ दिनों के अन्दर बिना किसी विरोध के बोलन दर्रे को पार कर लिया गया; सर जौन कौन के आने का इन्तजार करने के लिए कोर्टन क्वेटा में रुक गया; मेहराब खाँ के साथ उसने एक अनुकूल सन्धि कर ली।

अप्रैल, १८३९. सर जौन कौन अपने सैनिक अधिकारी के साथ आकर क्वेटा में मिल गया। अब पूरा सैन्य दल वही जमा था। शाह शुजा भी वहीं छावनी में था। आगे की यात्रा मे बहुत तकलीफ हुई और बीमारियो ने घेरा। जल्दी ही मित्रों का सैन्य दल कन्धार पहुँच गया। कन्धार ने बिना लड़े ही आत्म समर्पण कर दिया।

मई, १८३९ के प्रारम्भिक भाग मे अफ़ग़ानिस्तान के शाह के रूप मे कन्धार मे शुजा का राज्याभिषेक कर दिया गया।

जून, १८३९ के अन्तिम दिनों में, सेना ने ग़ज़नी पर चढ़ाई कर दी; दुर्ग मज़बूत था, किन्तु कैप्टन टौमसन के नेतृत्व मे इजीनियरो ने उसके फाटकों को उड़ा दिया। एक ही दिन मे शहर को फ़तह कर लिया गया और उसके रक्षक दल को भगा दिया गया। काबुल से दोस्त मुहम्मद हिन्दुकुश की ओर भाग गया। अंग्रेजो ने चढ़ाई कर दी। बिना किसी लड़ाई के ही उस पर उन्होंने अधिकार कर लिया, और—

७ अगस्त को—शाह शुजा को, काबुल में उसके पिता के अत्यन्त सुरक्षित बाला हिसार महल मे गद्दी पर बैठा दिया गया।—शाहशुजा का बेटा, शाहज़ादा तैमूर तथा सिक्खों की एक नयी सेना खैबर दर्रे से ऊपर आ गयी और जल्दी ही वह काबुल में स्थित मुख्य सेना से मिल गयी।

(**२७ जून, रणजीतसिंह की मृत्यु** हो गयी; अपने सिक्ख राज्य को वह अपने सबसे बड़े बेटे, खड्गसिंह को दे गये थे और कोहिनूर हीरे को जगन्नाथ

के मंदिर के नाम कर गये थे ।) तै किया गया कि फिलहाल एक बड़ी ब्रिटिश सेना तथा सिक्खों को काबुल मे छोड दिया जाय; १८३९ से १८४१ तक वे वहीं पर बिना किसी परेशानी के बने रहे। अपने को वे इतना सुरक्षित समझते थे कि राजनीतिक एजेन्ट, सर विलियम मैकनाटन ने अपनी पत्नी और बेटी को हिन्दुस्तान से काबुल बुलवा लिया, सेना के अफसरो से घनिष्ट रूप से सम्बन्धित अन्य महिलाओं को भी उसने वहाँ बुलवा लिया, ताकि अफ़गानिस्तान की सुखकर ताजी आबोहवा का वे आनन्द ले सके।

१५ अक्टूबर, १८३९. दक्षिण दिशा मे सिन्ध की ओर वापिस जाते समय, बम्बई की सेना ने खिरात पर अधिकार कर लिया, मेहराब खाँ को मार डाला और उसके देश को लूट-पाट कर नष्ट कर दिया।

१८४० का प्रारम्भिक भाग। मैकनाटन और कोर्टन दोनों ऐसे गधे थे कि काबुल के बालाहिसार के अत्यन्त सुदृढ गढ को उन्होने शाहशुजा को अपना हरम (!) बनाने के लिए दे दिया और सेनाओं को वहाँ से हटा कर छावनियों में भेज दिया। इस तरह, देश के सबसे मजबूत क़िले को एक जनाने में बदल दिया गया। इसके बाद शाह शुजा के विरुद्ध स्वयम् काबुल मे विद्रोह का एक ताँता लग गया; ये विद्रोह पूरे १८४० भर चलते रहे।

नवम्बर, १८४०. घुडसवारो के एक छोटे से दल के साथ, दोस्त मुहम्मद आत्म-समर्पण करने के लिए काबुल आया।—(इससे पहले वह बुख़ारा भाग गया था, वहाँ उसको कोई खास स्वागत नहीं मिला था और वह अफ़गानिस्तान लौट आया था; उज़्बेक और अफ़ग़ान एक भारी सख्या मे उसके साथ शामिल हो गये थे; ब्रिगेडियर डेनी ने हराकर उसे भागने के लिए मजबूर कर दिया।)

१८४० के शेष भाग में तथा १८४१ की गर्मियों में, कन्धार में गम्भीर विद्रोह उठ खड़े हुए, उन्हे सख़्ती से कुचल दिया गया; हिरात के लोगो ने खुले तौर से अंग्रेज़ों के ख़िलाफ़ लड़ाई की घोषणा कर दी। "ब्रिटिश क़ब्ज़ावरों" के विरुद्ध पूरे देश मे क्रोध की ज्वाला भडक उठी।

अक्टूबर, १८४१. महान खैबर दर्रे के खिलजी कबीलों के अन्दर जबर्दस्त विद्रोह उठ खड़ा हुआ। उस दर्रे से हिन्दुस्तान की तरफ वापिस जाने वाली सेनाओ को काफी जानें गँवानी पड़ीं; विद्रोह को कठिनाई से दबाया गया।

२ नवम्बर, १८४१. काबुल में एक गुप्त षडयंत्र रचने के बाद बाग़ियों ने बर्न्स के मकान पर हमला कर दिया, अनेक अन्य अफसरों के साथ-साथ यद उसकी भी भ्रूण हत्या कर दी गयी। विद्रोह को कुचलने के लिए कई रेजीमेन्टें भेजी गयी, किन्तु गलती से वे काबुल की सँकरी गलियों में फँस गयीं। इस प्रकार, कई दिनों तक उन्मत्त भीड़ को उसने जो चाहा उसे करने का निर्विरोध मौका मिला; उन्होंने एक क़िले पर, जिसका सेना के रसद विभाग के भण्डार के रूप में इस्तेमाल किया जाता था, हमला कर दिया। जनरल एल्फिंस्टन ने (जो अब कोटॅन के स्थान पर अफगानिस्तान में कमांडर-इन-चीफ़ था) उसकी इतनी कम सहायता की कि किले के अधिकारी अफसर को अपने छोटे से सैन्य दल के साथ किले से भागने के लिए मजबूर होना पड़ा।—मैकनाटन ने जनरल सेल के पास, जो उस समय ख़ैबर दर्रे के नज़दीक ही था, और जनरल नाट के पास, जो कन्धार में था, अर्जेण्ट (अतिपाती) सन्देश भेजे कि तुरन्त आकर काबुल के रक्षक दल की वे सहायता करें, किन्तु ज़मीन बर्फ़ की मोटी तह से ढकी हुई थी, इसलिए किसी प्रकार का आवागमन बहुत कठिन था। सेनाएँ दो डिवीज़नों में बँटी हुई थीं। एक डिवीज़न योग्य ब्रिगेडियर शेल्टन के मातहत बालाहिसार में नियुक्त था, दूसरा जनरल एल्फिंस्टन के मातहत छावनियों में था। इन दोनों के बीच झगड़ा होने की वजह से, कुछ भी न किया गया।

नवम्बर, १८४१. अफ़ग़ानों ने नियमित रूप से हमले करना शुरू कर दिये, आस-पास की कुछ पहाड़ियों को उन्होंने फ़तह कर लिया; वहाँ से उनको हराने की कोशिशें असफल हुईं।

२३ नवम्बर, १८४१. आम सैनिक कार्रवाइयाँ, अंग्रेज़ पूरी तरह से हरा दिये गये, वे छावनियों में वापिस लौट गये, समझौते की बातचीत बेकार रही; थोड़े दिन बाद, दोस्त का जोशीला लड़का, अकबर ख़ाँ [काबुल] आ पहुँचा।

११ दिसम्बर, १८४१. रसद भण्डार ख़त्म हो गया; आसपास के प्रदेश के निवासियों ने उन्हें कोई भी चीज़ देने से एक स्वर से इन्कार कर दिया; मैकनाटन को विद्रोहियों के साथ सन्धि करनी पड़ी, तै हुआ कि ब्रिटिश और सिक्ख सैनिक देश छोड़ दें; दोस्त मुहम्मद को रिहा कर दिया जाय; शाह शुजा को अफ़ग़ानिस्तान में या भारत में बिना ताज के किन्तु मुक्त भाव से रहने दिया जाय; अफ़ग़ानों ने गारन्टी दी कि अंग्रेज़ी फ़ौज के

वहाँ से सलामती से वापिस जाने में वे रुपये-पैसे, सुरक्षा तथा रसद से मदद देंगे। इसके बाद, १५ हजार ब्रिटिश सैनिकों ने अफगानिस्तान से वापसी की अपनी दयनीय यात्रा शुरू की; अफ़ग़ानों ने हर मौके का इस्तेमाल करके सिपाहियों को लूट-खसोट लिया (ठीक ऐसा ही किया !) और उनके भण्डारों को छीन लिया; काबुल से सैनिको के रवाना होने से पहले, अकबर खाँ ने मैकनाटन के पास एक नयी सन्धि का प्रस्ताव भेजा और अलग मिलने के लिए उसे आमंत्रित किया।

२३ दिसम्बर, १८४१. सेना के लिए और अच्छी शर्तें हासिल करने के उद्देश्य से मैकनाटन ने उसके प्रस्ताव को स्वीकार कर लिया; अकबर ने उसके सीने में पिस्तौल से गोली मार दी।

जनवरी, १८४२. मैकनाटन का स्थान मेजर पौटिंजर ने लिया; निराश जनरलो से कोई निश्चित कार्य कराने मे वह असफल रहा; फौज को सलामती से वापिस चला जाने देने के लिए उसने एक अन्तिम सन्धि की और काबुल छोड़कर वह रवाना हो गया, किन्तु अकबर खाँ ने तो कसम खायी थी कि वह ब्रिटिश का नामोनिशान मिटाकर ही रहेगा। अंग्रेज सैनिको ने छावनियो को छोडा ही था कि जोरो से बर्फ पडने लगी, सैनिको के कष्ट अकथनीय थे; तीन दिन के मार्च के बाद, सैन्य दल का अगला भाग पहाड़ों के एक दर्रे में घुसा; अकबर खाँ घुडसवारो को लेकर वहाँ आ पहुँचा; उसने माँग की कि सैनिकों को सलामती से वह तभी वहाँ से लौट जाने देगा जबकि, उनकी जमानत के रूप मे, (लेडी मैकनाटन तथा लेडी सेल समेत) तमाम महिलाओ, बच्चों और अन्य कई अधिकारियो को अंग्रेज उसके हवाले कर देंगे। अंग्रेजों ने उन्हे उसके हवाले कर दिया। बाकी लोग जब जाने लगे तो तंग घाटी मे, देशी लोगों ने ऊपर के ऊँचे स्थानों से "ब्रिटिश कुत्तो" पर गोलियाँ चलाकर उन्हे मार *गिराया। इस प्रकार सैकडों लोग मारे गये,* सबका सफाया हो गया, केवल दर्रे के किनारे पांच-छै सौ भूखों मरते और घायल लोग वापिस जाने के लिए बच गये। जिस समय घसिटते-घसिटते वे किसी तरह सरहद की तरफ जा रहे थे उस समय उन्हे भी भेड़ बकरियों की तरह काट डाला गया।

१३ जनवरी, १८४२. जलालाबाद (उत्तर-पश्चिमी प्रान्त मे, शाहजहाँपुर के पास) की दीवालो से सन्तरियों ने एक आदमी को देखा जो फटी अंग्रेजी वर्दी पहने था और एक विपद-ग्रस्त टट्टू पर चला आ रहा था। टट्टू

और आदमी दोनों बुरी तरह घायल थे; यह डा० ब्राइडन थे, १५,००० की उस सेना के—जिसने तीन हफ्ते पहले काबुल छोड़ा था—वह अकेले आदमी थे जो ज़िन्दा बच गये थे। वह भूख से मरे जा रहे थे।

लार्ड ऑक्लेंड ने आर्डर दिया कि जलालाबाद में जनरल सेल के ब्रिगेड को, जिसे अफ़गानी लोग परेशान कर रहे थे, सहायता देने के लिए एक नया ब्रिगेड वहाँ जाय। ऑक्लेण्ड बुरी तरह से बेइज्ज़त होकर इंगलैण्ड लौटा; उसके स्थान पर बड़े तोबड़े वाले हाथी, लार्ड एलिनबरा को नियुक्त किया गया, उसे भेजा तो गया था यह वादा लेकर कि वह शान्ति की नीति पर अमल करेगा, किन्तु जिन दो वर्षों तक वह पद पर रहा उनमें तलवार कभी म्यान में नहीं रखी गयी (उसका नेतृत्व पाम करता था)।

. . . .

[५] लार्ड एलिनबरा का (हाथी का) प्रशासन १८४२—१८४४

१८४२ का प्रारम्भिक भाग. भारत पहुंचने पर, "हाथी" ने सुना कि ऑक्लेण्ड ने जलालाबाद की मदद के लिए जनरल वाइल्ड की कमान में जो ब्रिगेड भेजा था वह खैबर दर्रे में बहुत ही बुरी तरह से मारा गया है; कि सिक्ख सेना ने अंग्रेजों के साथ सहयोग करने से अब इन्कार कर दिया है और वाइल्ड के ब्रिगेड के सिपाही भी इसी तरह अत्यन्त भयाक्रान्त अवस्था में हैं।

रणजीत सिंह की मृत्यु हो जाने पर (२७ जून, १८३९), उनका सबसे बड़ा पुत्र, खड़क सिंह पंजाब का शासक बना; उसने चेत सिंह को अपना वज़ीर बनाया, भूतपूर्व वज़ीर ध्यान सिंह द्वारा उसकी हत्या कर दी गयी, ध्यान सिंह ने खड़क को भी गद्दी से हटा दिया और उसकी जगह अपने बेटे, नौनिहाल को गद्दी पर बैठा दिया।

१८४० में, खड़क सिंह की जेल में मृत्यु हो गयी और नौनिहाल आकस्मिक रूप से मारा गया; ध्यान ने रणजीत सिंह के बहादुर बेटे, शेरसिंह को बुलवा भेजा, वह अंग्रेजों के पक्ष में मालूम होता था।

१८४२. वाइल्ड की सहायता के लिए जनरल पोलक के नेतृत्व में एक नया

ब्रिगेड भेजा गया, उसे वाइल्ड को मुक्त करा कर **खैंबर दर्रे** के अन्दर जाना था और **जलालाबाद** मे **जनरल सेल** की जगह लेनी थी।

५ अप्रैल, १८४२. पोलक ने **(खैबर) दर्रे** के दोनों तरफ की पहाड़ियो पर दो ब्रिगेडो को चढा दिया जिससे कि मुख्य सेना के आगे बढने का रास्ता वे साफ कर दें; ऐसा ही हुआ; **खैबर वाले खुद अपने अड्डे पर हार जाने** के बाद, तंग घाटी के अफगान वाले किनारे की तरफ भाग गये। फौज **निर्विरोध** दर्रे से मार्च करती हुई निकल गयी, **१० दिनो में** (१५ अप्रैल को ?) वह **जलालाबाद** पहुच गयी। वहाँ पर उसे मालूम हुआ कि **अकबर खाँ** के व्यक्तिगत नेतृत्व में शहर पर जो घेरा पड़ा हुआ था उसे हमला करके तोड दिया गया [था] और **अकबर खाँ** वहाँ से हट गया था।

जनवरी, १८४२ में, जनरल नाट ने अपनी छोटी-सी सैनिक शक्ति को **कन्धार** मे जमा कर रखा था, अफ़गानों को उसने कई वार हरा दिया था; बाद मे उसे **घेर लिया** गया था। शहर की उसने बहुत होशियारी से हिफाज़त की थी; किन्तु **गजनी** ने दुश्मन के सामने **हथियार डाल** दिये थे और **जनरल इंगलैण्ड** को, जो **क्वेटा** से एक रक्षक सेना के साथ **नाट की फ़ौज से मिलने के लिए आ रहा था** पीछे खदेड़ दिया गया था तथा वापिस जाने के लिए मजबूर कर दिया गया था।

हाथी एलिनबरा ने — जो अब वैसी बडी-बडी बातें नही करता था— पोलक को आर्डर दिया कि **अक्टूबर** तक वह **जलालाबाद** मे ही **बना रहे** और उसके बाद अफगानिस्तान से बिल्कुल वापिस चला आये; **नाट** को भी आज्ञा दी गयी कि वह **कन्धार को नष्ट कर दे** और उसके बाद सिन्ध **की तरफ** हट जाय।—**तमाम एंग्लो-इंडियनों के बीच गुस्से की हुंकार** उठ **रही थी**; इसलिए—

जुलाई, १८४२ में—हाथी ने अफगानिस्तान में स्थित सेना को काबुल पर अधिकार **करने की अनुमति दे दी**। काबुल में, अंग्रेजों के वहाँ से वापिस लौट जाने के बाद, **शाहशुजा** की बर्बरता से हत्या कर दी गयी थी और **अकबर खाँ** ने अपने को **अफगानिस्तान का** शाह घोषित कर दिया था। **अकबर** ने **अंग्रेज महिलाओं**, अफसरो तथा अन्य बन्दियों को **तेगीन** के एक **किले** में भेज दिया। वहाँ उनके साथ अच्छी तरह व्यवहार किया गया। **जनरल एलफिंस्टन** की वहीं **मृत्यु हो गयी**।

अगस्त, १८४२. कन्धार और जलालाबाद की दोनों सेनाओं ने भिन्न-भिन्न दिशाओं से काबुल की ओर कूच कर दिया, पोलक ने खिलजियों को कई बार हरा दिया।

सितम्बर, १८४२. दोनों डिवीजन तेगीन में (जलालाबाद के नजदीक—तेज़ीन में) मिल गये; अकबर खाँ पराजित हुआ।

१५ सितम्बर, १८४२. काबुल फिर अंग्रेज़ों के हाथ में आ गया।—पोलक के आगे बढ़ने पर अंग्रेज बन्दियों को सला मुहम्मद नाम के एक अफसर के साथ हिन्दूकुश में स्थित बमियान भेज दिया गया था। सला मुहम्मद ने जब यह सुना कि अकबर हार गया है तो उसने पौटिन्जर से कहा कि अगर निजी सुरक्षा का आश्वासन दे दिया जाय और इनाम के तौर पर रुपया दिया जाय तो सारे बन्दियों को वह मुक्त कर देगा और उन्हें काबुल पहुंचा देगा; पौटिंजर ने उसके इस प्रस्ताव को स्वीकार कर लिया; अस्तु—

२० सितम्बर—को, क़ैदियों को काबुल में लाकर उनके देशवासियों को वापिस सौंप दिया गया।

अक्टूबर, १८४२. काबुल की अधिकांश क़िले-बन्दियों को नष्ट कर देने के बाद, ब्रिटिश सेना, बिना किसी रोक-टोक के, खैबर दर्रे से होती हुई पेशावर के इलाके में प्रविष्ट हो गयी; फीरोज़पुर में सिक्ख कमान्डर-इन-चीफ ने पौटिंजर का अतिथि सत्कार किया।

१८४२ का अन्तिम भाग. सर चार्ल्स नेपियर के नेतृत्व में सेना सिन्ध के अमीरों के विरुद्ध बढ़ी (यह सेना कन्धार के रेजीमेन्टों तथा बंगाल और बम्बई से भेजे गये ताजे सिपाहियों को मिलाकर बनायी गयी थी)। उसका डिपो (सिन्ध में) सिन्धु नदी के किनारे सक्खर में था।—हैदराबाद में स्थित राजनीतिक प्रतिनिधि, कर्नल आउट्रम के निवास-स्थान पर बलूची घुड़सवार सेना ने भीषण हमला किया; बड़ी मुश्किल से आउट्रम भाग कर नेपियर के शिविर तक पहुंचा; नेपियर तब तक हल्ला पहुंच गया था।

१७ फरवरी, १८४३ हैदराबाद के पास, मियानी में लड़ाई। अमीरों के पास २० हज़ार सैनिक, नेपियर के पास लगभग ३ हज़ार; क़रीब तीन घंटे की खूंखार लड़ाई के बाद नेपियर जीत गया, दुश्मन के अन्दर भगदड़ मच गयी, ६ अमीरों ने बन्दियों के रूप में आत्म-समर्पण कर दिया, [illegible] पर फौरन अधिकार करके उसे लूट डाला गया (!), तथा शहर में अंग्रेज रक्षक दल तैनात कर दिया गया।

मार्च, १८४३. ब्रिटिश गैरीसन (रक्षक दल) को उसमे बगाल के कुछ "देशी" रेजीमेन्टों को जोड़कर और मजबूत कर दिया गया; इस प्रकार नेपियर के पास अब लगभग ६,००० सैनिक हो गये।

२४ मार्च, १८४३. राजधानी के पास हुई एक लड़ाई मे, मीरपुर के अमीर, शेर मुहम्मद को नेपियर ने हरा दिया; इसके बाद मीरपुर शहर पर कब्जा कर लिया गया और उसे लूटकर तबाह कर दिया गया। इसके बाद जिस स्थान पर कब्जा किया गया वह उमरकोट (अमरकोट) था, यह रेगिस्तान मे स्थित एक मजबूत दुर्ग था; (बलूची) रक्षको ने बिना म्यान से तलवार निकाले ही शहर का समर्पण कर दिया।

जून, १८४३. सिन्ध घुड़सवार सेना के कर्नल जैकब ने शेर मुहम्मद को हरा दिया और इस तरह सिन्ध की फ़तह पूरी हो गयी। उसके बाद से सिन्ध एक अंग्रेजी प्रान्त है, इससे सालाना जितनी आमदनी होती है उससे अधिक सरकार को उस पर खर्च करना पड़ता है।

ग्वालियर, दिसम्बर, १८४३. अंग्रेज सैनिक वहाँ अपने पुराने दुश्मनों से लड़ रहे थे। यह इस प्रकार हुआ था :

१८२७. लार्ड हेस्टिंग्ज के साथ एक लाभदायक सन्धि (१८१४) करने के बाद, दौलतराव सिन्धिया बिना कोई सन्तान छोड़े मर गया। उसका उत्तराधिकारी—

१८२७-१८४३ (उसकी मृत्यु का वर्ष)—उसका एकमात्र वारिस जो मिल सका, मुगत राव बना; उसने आलीजाह जनकोजी सिंधिया का नाम धारण किया, उसके भी कोई सन्तान न थी, केवल १३ वर्ष की अपनी विधवा—ताराबाई—को वह पीछे छोड गया। उसने आठ वर्ष के एक बच्चे, भगीरथ राव को अपना उत्तराधिकारी बनाया, उसने आलीजाह जयाजी सिंधिया की पदवी प्राप्त की, राज्य-संरक्षक बनने के दो दावेदार थे—जनकोजी सिंधिया, जो मामा साहब कहलाते थे (देखिए टिप्पणियाँ, पृष्ठ २४५ मामा = मा की तरफ के चाचा, साहब = मालिक); और दूसरे, घर के प्रबन्धकर्त्ता, वाला (मृत महाराज के दूर के एक सम्बन्धी), जो दादा खासजी के नाम से प्रसिद्ध थे (दादा = पिता के पिता, अथवा बड़े भाई—रूसी मे द्यादया = चाचा—और खासजी = घर के प्रबन्ध-कर्त्ता) एलिनबरा ने रेजीडेंट से मामा साहब को [राज्य संरक्षक] नियुक्त करवा दिया, ताराबाई दादा को नियुक्त कराना चाहती थी; इसलिए दरबार में दो दल बन गये। काफी गड़बड़ी तथा कुछ खून-खराबी

के बाद, मामा को डिसमिस कर दिया गया और महारानी, ताराबाई ने दादा को राज्य का संरक्षक नियुक्त कर दिया; किन्तु हार्डी ने मामा की नियुक्ति पर ही ज़ोर दिया, रेजीडेन्ट को उसने ग्वालियर छोड़ देने का आदेश दिया। दादा ने हार्डी का मुकाबला करने के लिए सेनाओं को तैयार करना शुरु कर दिया। एलिनबरा (हार्थी) ने सर ह्यू गफ को आदेश दिया कि ग्वालियर के सैन्य अभियान की कमान वह सभाले और—

१८४३—में, चम्बल नदी को पार करके वह सिंधिया के राज्य में घुस जाय; इस पर रानी और दादा ने अधीनता स्वीकार करने का प्रस्ताव रखा, किन्तु उनकी ६० हज़ार सैनिकों तथा २०० तोपों की सेना मैदान में उतर गयी और उसने अंग्रेज़ों को चम्बल के उस पार तक खदेड़ दिया [चम्बल को पार कर अंग्रेज वापिस चले गये]।

२९ दिसम्बर, १८४३. महाराजपुर के पास (ग्वालियर में) सर ह्यूगफ़ पर १४ हज़ार चुने हुए (मराठा) सैनिकों ने अनेक पक्के निशाने की तोपें लेकर हमला कर दिया; मराठे असीम बहादुरी के साथ लड़े; भारी नुक़सान उठाने के बाद अंग्रेज़ जीत गये।

३१ दिसम्बर, १८४३. महारानी और बालक सिंधिया ब्रिटिश शिविर में आये और वहाँ उन्होंने चुपचाप अधीनता स्वीकार कर ली; ग्वालियर राज्य को सिंधिया के लिए बना रहने दिया गया, रानी को पेंशन दे दी गयी, मराठा सेना को घटाकर उसमें ६ हज़ार सैनिक रहने दिये गये, ब्रिटिश सैन्य शक्ति [ग्वालियर में] मदद पाकर दस हज़ार सैनिकों की सेना बन गयी; तै हुआ कि बालिग़ हो जाने पर सिंधिया राज्याधिकारी बना दिया जायगा; बीच के काल के लिए राज्य के काम-काज की देख-भाल के वास्ते एक कौंसिल नियुक्त कर दी गयी।

इसके तुरन्त ही बाद, १८४४ के आरम्भ में, कार्य-काल के ख़त्म होने से पहले ही डायरेक्टर मंडल ने हार्डी को उसकी "युद्ध लालसा" के कारण वापिस बुला लिया; हार्डी की जगह लेने के लिए सर हेनरी हार्डिंज को भारत भेजा गया।

[६] लार्ड हार्डिंज का प्रशासन, १८४४-१८४८

जून, १८४४. हार्डिंज कलकत्ते पहुँच गया (वह "लार्ड" के रूप मे नही, बल्कि सर हेनरी हार्डिंज के रूप में आया था)।

१८४२. रणजीत सिंह का एक बेटा, **शेरसिंह पंजाब का पूर्ण सत्ताशाली राजा** था; उसके वज़ीर ध्यानसिंह ने अजितसिंह नाम के एक व्यक्ति को शेर सिंह की हत्या करने के लिए तैयार किया; लेकिन अजित ने शेर के सबसे बड़े बेटे, प्रतापसिंह की भी हत्या कर दी, फिर स्वयम् ध्यानसिंह की भी हत्या कर दी; ध्यानसिंह के भाई सुचेतसिह तथा [बेटे] हीरासिंह ने सेनाओं को लेकर लाहौर को घेर लिया, बागियो को (जिनका सरगना अजितसिंह था) पकड़ लिया और उन सब को मार दिया। इसके बाद हीरासिंह ने, जिसने अपने आपको वज़ीर बना लिया था, शेरसिंह के एक मात्र जीवित पुत्र, दिलीपसिंह को (जो १० वर्ष की उम्र का था, प्रतिभाशाली था, **लाहौर का अन्तिम महाराजा था**) [राजा] घोषित कर दिया। हीरासिंह के सामने सबसे कठिन समस्या सिख, अथवा खालसा[1] **सेना की संख्या** को—**जो राज्य की वास्तव में सबसे बड़ी शक्ति थी**—कम करने, अथवा उसकी शक्ति पर अंकुश लगाने की थी; हीरा अपने अफसरों के एक षड्यन्त्र का शिकार हुआ (**मार डाला गया**)।—रानी का प्रियपात्र, एक ब्राह्मण लालसिंह वज़ीर बन गया; कई छोटे-छोटे फौजी हमलो के बाद उसने देखा कि खालसा को शान्त करने का **एकमात्र मार्ग** यह है कि इंगलैण्ड के ख़िलाफ़ युद्ध छेड़ दिया जाए।

१८४५ का वसन्त। लाहौर में युद्ध की तैयारियाँ इतने खुले तौर से हो रही थीं कि सर हेनरी हार्डिंज ने सतलज के पूर्वी तट पर ५० हज़ार सैनिको को जमा कर लिया।

पहला सिख युद्ध, १८४५-१८४६. नवम्बर के अन्त मे ६० *हज़ार सिखों* ने सतलज को पार किया और फ़ीरोज़पुर के समीप अंग्रेज़ी अमलदारी में

---

१ "सम्प्रदाय (मिसल)" सिखों की बिरादरी का प्रारम्भिक नाम था। बाद में सिख राज्य तथा सैनिको के सगठनो का भी यही नाम हो गया था। सैनिको के ये सगठन सिख सरकार की नीतियो को जनवादी दिशा में प्रभावित करते थे। इसलिए सिख सामन्त खालसा की शक्ति को हर कीमत पर तोड़ देना चाहते थे।

पड़ाव डाल दिया। गवर्नर जनरल हार्डिंज तथा उसका कमांडर-इन-चीफ, सर ह्यूगफ़ फ़ौरन उनका विरोध करने के लिए निकल पड़े। यह चीज़ नोट करने की है कि अंग्रेज़ो की जो दुर्गति हुई थी उसका कारण, सिखों की बहादुरी के अलावा, अधिकांशतया गफ़ का गधापन था। वह सोचता था कि संगीनों से हमला करके सिखों के साथ भी वह कुछ भी कर सकता था—उसी तरह जिस तरह कि दक्षिण के आसानी से डर जाने वाले हिन्दुओं के साथ अंग्रेज़ो ने किया था।

१८ दिसम्बर, १८४५ मुदकी की लड़ाई, यह फीरोज़पुर से लगभग २० मील के फासले पर एक गाँव था। अंग्रेज़ विजयी हुए ([यद्यपि] उनकी कई "देशी रेजीमेन्टो" ने पहले ही हथियार डाल दिये थे), लालसिंह अपनी फ़ौज को लेकर रात के समय वहाँ से हट गया।

२१ दिसम्बर, १८४५. फ़ीरोज़शाह (फ़ीरूशहर) की लड़ाई। वहाँ पर सिखों का शिविर था। भारी नुकसान पहुँचाने के बाद अंग्रेज़ों को हर तरफ पीछे हटा दिया गया।

२२ दिसम्बर, १८४५. लड़ाई फिर शुरू हो गयी। अंग्रेज़ जीत गये, यद्यपि उन्हे भारी नुकसान उठाना पड़ा। इसका कारण यह था कि सिखों ने यह नही सोचा था कि अपनी "पराजय" के बाद—जिसका मतलब अधिकांश पूर्वी देशों के लिए घबडाहट और आम भगदड होता है—अंग्रेज अगले दिन सुबह फिर हमला कर देंगे। सिख पीछे हट गये, अंग्रेज़ इतने अधिक थक गये थे कि उनका पीछा नही कर सकते थे। लाहौर पर हमला करने के लिए अंग्रेज़ो ने घेरा डालने वाले तोपखाने का इंतज़ार किया। दिसम्बर के मध्य में उसके बारे मे ख़बर यह थी कि वह रास्ते मे था। उसके रक्षक दल पर ऊपर सिख लोग, जो लुधियाना के पास के एक छोटे गाव, अलीवाल मे पड़ाव डाले पड़े हुए थे,—कहीं हमला न कर दें इसलिए उससे बचने के लिए—

२८ जनवरी, १८४६—को अलीवाल की लड़ाई हुई; कठिन प्रतिरोध के बाद सिखों को नदी की ओर भगा दिया गया।—कुछ दिनों के बाद अंग्रेज़ो के शिविर मे दिल्ली से रक्षक सैन्य दल आ गया।—इसी बीच लाहौर की रक्षा के लिए—सोबराँव, आदि में सिखों ने अत्यन्त सुदृढ़ किले-बन्दियाँ कर ली थी और उनमे लगभग ४० हज़ार सैनिकों को तैनात कर दिया था।

१० फरवरी, १८४६. सोबराँव की लड़ाई। अत्यन्त ओजस्वी, साहसपूर्ण प्रतिरोध

के बाद सिख सेना पूर्णतया छिन्न-विच्छिन्न हो गयी। अंग्रेजों को भी बहुत नुकसान हुआ। (हाथों-हाथ बहुत लड़ाई हुई थी, अंग्रेजों ने जिन लडाइयो मे हिस्सा लिया यह उनमें एक सबसे भयंकर लडाई थी।) जब अंग्रेजो ने सतलज को निर्विरोध पार कर लिया और कसूर (जो लाहौर से अधिक दूर नही था) के मजबूत दुर्ग पर कब्जा कर लिया तब कुछ प्रभावशाली सरदारो को लेकर, जिनका मुखिया गुलाब सिंह था (यह आदमी एक राजपूत था और अंग्रेज जानते थे कि अन्दर ही अन्दर वह सिखों का कट्टर दुश्मन था), दिलीप सिंह (छोटी उम्र का राजा) वहाँ आया। सन्धि हुई; इसके अन्तर्गत व्यास और सतलज नदियों के बीच का प्रदेश कम्पनी को दे दिया गया; १५ लाख पौंड हर्जाने के रूप मे देने का फैसला हुआ; तै हुआ कि फिलहाल लाहौर में अंग्रेज सैनिक उसके रक्षक दल के रूप मे रहे।

२० फरवरी, १८४६ अंग्रेज सेना ने विजयपूर्वक लाहौर में प्रवेश किया। १५ लाख पौंड की रकम चुकाने के लिए खजाने मे चूंकि रुपया नही था, इसलिए हार्डिंज ने एलान कर दिया कि उसके एवज में कम्पनी ने कश्मीर को ले लिया है; किन्तु गुलाब सिंह रुपया देने को तैयार हुआ और इसलिए कश्मीर उसको दे दिया गया। अपने युद्ध के खर्चे हार्डिंग ने इसी तरह पूरे किये थे। खालसा सेना के सैनिकों को उनका वेतन दे दिया गया और सेना को तोड दिया गया; दिलीप सिंह को स्वतंत्र मान लिया गया। लाहौर मे अंग्रेज रक्षक सैन्य दल को रखकर मेजर हेनरी लारेन्स वहाँ से चला गया। मुख्य सेना उन तोपों के साथ, जिन्हें उसने छीना था, लौटकर लुधियाना चली गयी। — हार्डिंज और गफ़ को पार्लामेन्ट से धन्यवाद मिला और उन्हे लार्ड बना दिया गया। —मार्च, १८४८ मे, हार्डिंज इंगलैण्ड वापिस लौट गया। उसके स्थान पर लार्ड डलहौज़ी गवर्नर जनरल बन कर आया।

[७] लार्ड डलहौज़ी का प्रशासन, १८४८-१८५६

अप्रैल, १८४८. मूलराज को, — जो १८४४ मे अपने पिता (सावन) की जगह मुल्तान का गवर्नर बना था—दिलीप सिंह ने उसके पद से हटा दिया और,

वान्स एगन्यू (एक सिविलियन अफसर) तथा लेफ्टीनेन्ट एन्डरसन के साथ, सरदार खां को उनकी जगह लेने के लिए भेज दिया।

२० अप्रैल, १८४८. मूलराज ने शहर की चाभी सौंप दी; तीन दिन के बाद, जब रक्षक सैन्य दल ने उनके फाटकों को खोला, तो सिख अन्दर तक घुस आये, एन्डरसन और वान्स एगन्यू की उन्होंने हत्या कर दी।—लाहौर के नजदीक सिखों की एक रेजीमेन्ट के साथ लेफ्टीनेन्ट एडवर्ड्स को रखा गया था; सिखों ने उसको छोड़ना शुरू कर दिया, तब सहायता के लिए, उसे भावलपुर के राजा के पास भेजा गया; उसने उससे सहायता प्राप्त कर ली।

२० मई, १८४८. सिन्धु के किनारे डेरा गाजी खां में कर्नल कोर्टलैण्ड की सेना के पास आकर वह उसमें शामिल हो गया; कोर्टलैण्ड के पास चार हजार सिपाही थे, उनके साथ बलूचियों के दो दल आकर मिल गये थे; कुल मिलाकर ७ हजार सिपाही उनके पास हो जाने पर कोर्टलैण्ड और एडवर्ड्स ने मुल्तान पर हमला करके अधिकार करने का फ़ैसला किया। कई भाग्यशाली टक्करों के बाद, [अंग्रेज] मुल्तान के सामने सितम्बर, १८४८ तक पड़े रहने में सफल हुए; तब जनरल ह्विश के नेतृत्व में एक बड़ी अंग्रेज सेना उनके पास आ गयी। उन्होंने मुल्तान से आत्म-समर्पण करने के लिए कहा, उसने इन्कार कर दिया। इसी बीच, शेरसिंह (वह दो महीने पहले दोस्त का रूप बनाकर लाहौर में आया था) दुश्मन से जाकर मिल गया। अब सम्पूर्ण पंजाब में विद्रोह की ज्वाला भड़क उठी। लाहौर के मंत्रिमंडल ने उसे पेशावर देने का वादा करके दोस्त मुहम्मद को अपनी तरफ मिला लिया। सर हेनरी लारेन्स का भाई, सर जौर्ज लारेन्स पेशावर में रेजीडेण्ट था; २४ अक्टूबर, १८४८ को रेजीडेन्सी पर सिखों ने अधिकार कर लिया, अंग्रेजों को बन्दी बनाकर सख्त पहरे में रख दिया गया।

दूसरा सिख युद्ध, अक्टूबर, १८४८ फीरोजपुर में जमा फौज के पास जाकर डलहौज़ी उसमें मिल गया। अक्टूबर के अन्त में गफ ने सतलज को पार किया और जालन्धर में जनरल ह्वीलर के साथ जा मिला। सिख लोग रावी और चिनाब नदियों के बीच के दोआबे में जमा होने लगे।

२२ नवम्बर, १८४८. रामनगर में लड़ाई। (सिख शेरसिंह के नेतृत्व में थे।) सिख चिनाब के उस पार चले गये। गफ उधर को नरफ चला जिससे कि, सिखों को लोगों से दूर, कोई दूसरा रास्ता वह ढूंढ निकाले।

२ दिसम्बर, १८४८. सादुल्लापुर गांव की लड़ाई। शेरसिंह के नेतृत्व में सिख

झेलम नदी की तरफ हट गये। वहाँ पर उन्होंने मज़बूती से अपने को जमा लिया; ६ हफ़्ते तक अंग्रेज सेना निष्क्रिय पड़ी रही।

१४ जनवरी, १८४९. **चिलियानवाला की लड़ाई,** यह झेलम नदी के समीप का एक गाँव था। अंग्रेजों के लिए यह लड़ाई बडी विनाशकारी साबित हुई, उनके २,३०० सैनिक खेत आये, **तीन रेजीमेन्टों के झण्डे छिन गये।** वे चिलियानवाला मे विश्राम करने लगे; सिख हट गये और नये मोर्चों पर जम गये।

२२ जनवरी, १८४९. **जनरल ह्विश तथा लेफ्टीनेन्ट एडवर्ड्स ने मुल्तान को फ़तह कर लिया** (मूलराज को बाहर चले जाने की इजाज़त दे दी गयी)। अंग्रेज फौज गफ़ से मिलने के लिए आगे चली गयी, किन्तु एक ब्रिटिश रक्षक सैन्य दल के साथ लेफ्टीनेन्ट एडवर्ड्स मुल्तान में ही रुका रहा।

२६ जनवरी, १८४९. *गफ़ की सेना ने मुल्तान की फ़तह की बात* सुनी; कुछ दिन बाद शेरसिंह ने अधीनता स्वीकार करने का प्रस्ताव रखा, [किन्तु अंग्रेज़ो ने] अस्वीकार कर दिया।

१२ फरवरी, १८४९. शेरसिंह ने **चतुराई के साथ एक बाजू से कूच** कर दिया जिससे कि, ब्रिटिश सेना के उत्तर मे रहते-रहते ही, वह दौडकर लाहौर पर कब्ज़ा कर ले। **गफ़ ने चिनाब के पास के** गांव **गुजरात** मे उसे घेर लिया।

२० फरवरी, १८४९ **गुजरात की** लड़ाई (ब्रिटिश सेना मे २४ हज़ार सैनिक थे)। अंग्रेजों को **अपेक्षाकृत बिना खून बहाये ही विजय प्राप्त हो गयी।**

१२ मार्च, १८४९. शेरसिंह और उसके जनरलों ने अधीनता स्वीकार कर ली— लाहौर पर अधिकार करने के बाद डलहौजी ने **पंजाब को कब्ज़े में ले लिया। दिलीपसिंह को अपने को ब्रिटिश संरक्षण में सौंपना पड़ा;** तै हुआ कि **खालसा फ़ौज** तोड़ दी जायगी, **कोहिनूर** (हीरा, देखिए, पृष्ठ २५६, टिप्पणी १) सुन्दरी विक्टोरिया को भेंट दे दिया जायगा; **सिख नेताओं की निजी भू-सम्पत्तियों को जब्त कर** लिया गया; चार मील के घेरे के अन्दर उनके निवास-स्थानों पर उन्हे कैदियो की तरह रहने के लिए बाध्य कर दिया गया। **मूलराज** को आजीवन कैद की सज़ा दे दी गयी।— **पंजाब के बन्दोबस्त** का काम सर हेनरी लारेन्स की अध्यक्षता मे बने एक कमीशन के जिम्मे कर दिया गया। उसके भाई सर जौन लारेन्स

---

१ स्मिथ की "आक्सफोर्ड हिस्ट्री आफ इण्डिया" के अनुसार, १३ जनवरी।

को (जो बाद में गवर्नर जनरल बना था) उसकी मदद के लिए नियुक्त किया गया।—सिपाहियों को अंग्रेज अफसरों के मातहत रखा जाए—इस सिद्धान्त के आधार पर एक छोटी-सी सिख सेना बनायी गयी; सड़कें बनायीं गईं।

मई, १८४९. सर चार्ल्स नेपियर का स्थान गफ ने लिया। उसके और डलहौजी के बीच झगड़े हुए; इनका अन्त गफ के इस्तीफे में हुआ।

१८४८. सतारा को हड़प लिया गया। शिवाजी के वंश के जिस राजा को १८१८ में हेस्टिंग्ज ने गद्दी पर बैठाया था, उसकी मृत्यु हो गयी। उसके कोई सन्तान न थी; मृत्यु-शैया पर उसने एक लड़के को गोद लिया था और उसे अपना वारिस नियुक्त किया था। डलहौजी ने उसे मान्यता देने से इन्कार कर दिया; [सतारा को] हड़प लिया।

१८४९-१८५१. कई पहाड़ी कबीलों ने विद्रोह किये जिन्हें सर कौलिन कैम्पबेल, कर्नल कैम्पबेल, मिस्टर स्ट्रेन्ज, इत्यादि (पृष्ठ २५७) ने कुचल दिया।—डकैती, ठगी, शिशु-हत्या, मानव बलि, सती, आदि के विरुद्ध एक आम लड़ाई छेड़ दी गयी।

द्वितीय बर्मी युद्ध, १८५२-१८५३ (१२ अप्रैल, १८५२ को आरम्भ हुआ, दोनाबू को १७ और १८ मार्च, १८५३ की लड़ाइयों के फलस्वरूप इसका अन्त हो गया)। २० दिसम्बर, १८५३ की घोषणा के अन्तर्गत, पेगू को कम्पनी के राज्य में मिला लिया गया।

१८५३. बरार को हड़प लिया गया, वहाँ नागपुर के राजा की, जिसे ऑकलैण्ड ने (१८४० में) गद्दी पर बैठाया था, बिना किसी सन्तान अथवा दत्तक पुत्र के मृत्यु हो गयी थी।

कर्नाटक को अन्तिम रूप से हड़प लिया गया। १८०१ में, "कम्पनी का नवाब" अवकाश ग्रहण करके खानगी जीवन बिताने लगा। १८१९ में, उसकी मृत्यु होने पर, उसके पुत्र को गद्दी पर बैठा दिया गया था, १८२५ में उसकी भी मृत्यु हो गयी; तब उसके बालपुत्र को नवाब घोषित कर दिया गया; १८५३[1] में उसकी मृत्यु हो गयी, और अब उसके चाचा, आज़िमशाह ने गद्दी का दावा किया; उसे पेन्शन दे दी गयी, मद्रास के और तमाम अमीरों से उच्च स्थान उसे दिया गया। बाद में विक्टोरिया ने उसे अर्काट के राजकुमार की पदवी से विभूषित कर दिया था। यह आदमी मद्रास में अपने महल में मज़े से रहता रहा।

---

१ बर्डन के अनुसार, १८५५।

१८५४.[1] झाँसी (बुन्देलखण्ड) का हड़प लिया जाना । झाँसी का राजा शुरू में पेशवा का एक सरदार था, १८३२ में उसे स्वतंत्र राजा के रूप में स्वीकार कर लिया गया था । वह बिना कोई सन्तान छोड़े मर गया । किन्तु उसका दत्तक पुत्र जीवित था । डलहौजी महाशय ने उसे मान्यता देने से फिर इन्कार कर दिया, इसलिए राज्य से वंचित रानी क्रुद्ध हो उठी । बाद में, सिपाही विद्रोह के समय, वह एक सबसे प्रमुख नेत्री बनी थी ।

धोंधू पन्त, उर्फ नाना साहब, निकाल दिये गये और पेन्शन पाने वाले पेशवा बाजीराव के—जिसकी १८५३ मे मृत्यु हो गयी थी,—दत्तक पुत्र थे; नाना साहब ने कहा कि उन्हें गोद लेने वाले उनके पिता को १ लाख पौंड सालाना की जो पेन्शन मिलती थी वह उन्हे दी जाय । इसे नही माना गया । नाना चुप बैठ गये, बाद मे '"अंग्रेज कुत्तों" से उन्होंने बदला लिया ।

१८५५-१८५६. बंगाल की राजमहल पहाड़ियों मे एक अर्ध-जंगली क़बीले, संथालों का विद्रोह; सात महीने के छापेमार युद्ध के बाद, फरवरी, १८५६ मे उसे कुचल दिया गया ।

१८५६ का प्रारम्भिक भाग. डलहौजी ने मैसूर के गद्दी से हटा दिये गये राजा की इस "विनम्र विनती" को मानने से इन्कार कर दिया कि उसे फिर से गद्दी पर बैठा दिया जाए ।

१८५६. अवध को हड़प लिया गया, क्योंकि नवाब का शासन बुरा था ।—पंजाब के महाराजा दिलीप सिंह ने ईसाई धर्म स्वीकार कर लिया । "बिदा का" एक गर्वोक्तिपूर्ण "नोट" छोड़कर वह डलहौजी चला गया; अन्य चीजों के साथ-साथ, नहरों, रेलों, बिजली के तार का निर्माण हुआ; मालगुजारी मे ४० लाख पौंड की वृद्धि हो गयी । इसमे अवध के हड़प लिये जाने से प्राप्त होने वाली आमदनी शामिल नही थी । कलकत्ते से व्यापार करने वाले जहाजों के माल का वजन लगभग दो गुना हो गया; वास्तव में, सार्वजनिक लेखे मे कमी हो गयी, किन्तु इसका कारण सार्वजनिक निर्माण कार्यों पर किया जाने वाला भावी खर्चा था ।—इसी शेखी का जवाब सिपाही क्रान्ति थी (१८५७-१८५९) ।

. . . .

[1] बर्गेस के अनुसार, १८५३ ।

१८५७. सिपाही विद्रोह । कुछ वर्षों से सिपाही सेना अत्यन्त असंगठित थी; उसमे अवध के जो ४० हजार सैनिक थे वे जाति और राष्ट्रीयता की वजह से एक साथ बने हुए थे; सेना मे सबकी एक ही भावना थी, ऊपर का कोई अफसर अगर किसी भी रेजीमेन्ट का अपमान करता तो शेष सब लोग भी उसे अपना अपमान समझते थे; अफसरों की कोई शक्ति नही थी; अनुशासन ढीला था; बगावत की खुली कार्रवाइयाँ अक्सर हुआ करती थीं । उन्हे कमोवेश मुश्किल से ही दबाया जा सकता था; रंगून पर हमला करने के लिए समुद्र पार जाने से बंगाल की सेना ने साफ इन्कार कर दिया था, इसकी वजह से उसके स्थान पर सिख रेजीमेन्टो को भेजना पड़ा था (१८५२) । (यह सब १८४९ से—पंजाब के हड़प लिए जाने के बाद से, चल रहा था—१८५६ मे; अवध के हड़प लिये जाने के बाद से स्थिति और भी बिगड़ गयी थी ।) लार्ड कैनिंग ने अपने प्रशासन का श्रीगणेश एक मनमानी कार्यवाई से किया; उस समय तक मद्रास और बम्बई के सिपाही तो कानूनन तमाम दुनिया में काम करने के लिए भर्ती किये जाते थे, किन्तु बंगाली सिपाही केवल भारत में काम करने के लिए भर्ती होते थे। कैनिंग ने बंगाल में भी "आम सेवा कार्य के लिए भर्ती" का नियम बना दिया। "फकीरों" ने इस कदम की यह कहकर भर्त्सना की कि वह जाति, आदि को खत्म कर देने की कोशिश थी ।

१८५७ का प्रारम्भिक भाग । (पाम के) कारतूसों के बारे मे, जो हाल में सिपाहियों को दिये गये थे, फ़क़ीरों ने कहा कि उनमें सुअर और गाय की चर्बी ठीक इसीलिए लगायी गयी है जिससे कि हर सिपाही की जाति खत्म हो जाय। इसलिए, बारकपुर (कलकत्ते के पास) तथा रानीगंज (बाँकुड़ा के पास) मे सिपाही विद्रोह उठ खड़े हुए ।

२६ फरवरी, बहरामपुर में (मुर्शिदाबाद के दक्षिण मे, हुगली नदी पर स्थित) सिपाही विद्रोह; मार्च में बारकपुर में सिपाही विद्रोह; यह सब बंगाल मे हो रहा था (उसे बलपूर्वक कुचल दिया गया) ।

मार्च और अप्रैल । अम्बाला और मेरठ के सिपाहियों ने अपनी बैरकों मे बारम्बार और गुप्त रूप से आग लगा दी; अवध और उत्तर-पश्चिम के जिलों में लोगों को इंगलैण्ड के विरुद्ध फकीरों ने भड़काया । बिठूर (गंगा के तट पर स्थित) के राजा नाना साहब ने रूस, फ़ारस, दिल्ली के राजाओं तथा अवध के भूतपूर्व राजा के साथ मिलकर षड्यंत्र रचा,

चर्बी लगे कारतूसों की वजह से जो सिपाही उपद्रव हुए थे उनका उसने फायदा उठाया।

२४ अप्रैल[1]। लखनऊ में ४८वीं बंगाली (रेजीमेन्ट), तीसरी देशी घुड़सवार सेना, तथा अवध के सातवें अनियमित सैन्यदल का विद्रोह; सर हेनरी लारेन्स ने अंग्रेजी सैनिक लाकर उसे दबाया।

मेरठ (दिल्ली के उत्तर पूर्व) में, ११वीं और २०वीं देशी पैदल सेना ने अंग्रेजों पर हमला कर दिया, अपने अफसरों को उसने गोली मार दी, शहर में आग लगा दी। तमाम अंग्रेज स्त्रियों और बच्चों को उसने मार दिया, और दिल्ली की ओर चल पड़ी।

दिल्ली पहुंच कर, रात में घोड़ों पर सवार होकर कुछ बागी दिल्ली के अन्दर घुस गये, वहां के सिपाहियों (५४वीं, ७४वीं, ३८वीं देशी पैदल सेना) ने विद्रोह कर दिया; अंग्रेज कमिश्नर, पादरी, अफ़सरों की हत्या कर दी गयी; नौ अंग्रेज अफसरों ने शस्त्रागार की रक्षा की, उसे उड़ा दिया (दो[2] उसी में नष्ट हो गये), शहर में जो और अंग्रेज थे वे जंगलों में भाग गये, उनमें से अधिकांश को देशी लोगों ने, अथवा सख्त मौसम ने खत्म कर दिया; कुछ लोग बचकर मेरठ, जो अब सेनाओं से खाली था, पहुंच गये। किन्तु दिल्ली विद्रोहियों के हाथ पहुंच में गया।

फ़ीरोज़पुर में, ४५वीं और ५७वीं देशी सेनाओं ने क़िले पर अधिकार करने की कोशिश की, ६१वीं अंग्रेज सेना ने उन्हें खदेड़ कर भगा दिया; किन्तु उन्होंने शहर को लूट डाला, उसमें आग लगा दी, अगले दिन क़िले से निकली घुड़सवार सेना ने उन्हें वहां से भगा दिया।

लाहौर में, मेरठ और दिल्ली की घटनाओं का समाचार पाकर, जनरल कोर्बेट की आज्ञा से, आम परेड पर खड़े सिपाहियों से हथियार रखवा लिए गये (उन्हें तोपधारी अंग्रेज सैनिकों ने घेर लिया था)।

२० मई। ६४वीं, ५५वीं, ३९वीं देशी पैदल सेनाओं से (लाहौर की ही तरह) पेशावर में हथियार छीन लिये गये; इसके बाद, बाकी जो अंग्रेज सैनिक मौजूद थे उन्होंने और वफादार सिखों ने नौशेरा और मर्दान की घिरी हुई छावनियों को साफ किया और, मई के अन्त में,

---

1 के तथा मैलेसन के "भारतीय विद्रोह का इतिहास", (खण्ड १, लन्दन १८८९-१८९३) के अनुसार, ३ मई।

2 के और मैलेसन, खण्ड २, के अनुसार,—६।

आसपास के केन्द्रों से इकट्ठा किये गये **कई योरोपीय रेजीमेन्टों** से भरी **अम्बाला की बड़ी छावनी** को आजाद किया, यहाँ जनरल एन्सन के नेतृत्व में एक सेना का केन्द्र मौजूद था. . . . .शिमला के हिल के स्टेशन पर, जहाँ गर्मी के मौसम के लिए अंग्रेज परिवारों की भारी भीड थी, हमला नहीं किया गया।

२५ मई। अपनी छोटी-सी सेना लेकर **एन्सन ने दिल्ली पर** चढ़ाई कर दी। २७ मई को उसकी **मृत्यु हो गई**, उसका स्थान **सर हेनरी बर्नार्ड** ने लिया। इसके बाद **७ जून** को **जनरल विल्सन** के नेतृत्व मे अंग्रेज सेनाएँ जाकर उससे मिल गयीं (ये मेरठ से आयी थीं: रास्ते में सिपाहियों से कुछ लड़ाई हुई थी)। **विद्रोह की आग पूरे हिन्दुस्तान में फैल गयी; एक साथ २० भिन्न-भिन्न स्थानों मे सिपाहियों के विद्रोह उठ खड़े हुए और अंग्रेजों को मार डाला गया;** विद्रोह के मुख्य केन्द्र थे : **आगरा, बरेली, मुरादाबाद**। **सिंधिया** "अंग्रेज कुत्तों" के प्रति वफादार था, किन्तु उसके "**सैनिकों**" की हालत यह नहीं थी, **पटियाला के राजा** ने—उसे शर्म से डूब मरना चाहिए!—अंग्रेजों की सहायता के लिए एक बड़ी सेना भेजी! **मैनपुरी** (उत्तर-पश्चिमी प्रान्त) में एक नौजवान बर्बर लेफ्टीनेन्ट, **डे कान्टजोव** ने खजाने और किले को बचा लिया।

कानपुर में, ६ जून, १८५७ को, नाना साहब ने सर ह्यू ग ह्वीलर को घेर लिया। (नाना साहब ने कानपुर मे विद्रोह करने वाले **तीन सिपाही रेजीमेन्टों** तथा **देशी घुड़सवारों के तीन रेजीमेन्टों** की कमान अपने हाथ मे ले ली थी, कानपुर सैन्यदल के कमान्डर, **सर ह्यू ग ह्वीलर** के पास **योरोपीय पैदल सेना** का केवल **एक बटालियन** था और **थोड़ी-सी मदद** उसने बाहर से हासिल कर ली थी; **किले और बैरकों की**, जिनमें तमाम अंग्रेज लोग, उनकी औरतें, बच्चे, भागकर पहुँच गये थे, वह रक्षा कर रहा था)।

२६ जून, १८५७. **नाना साहब** ने कहा अगर **कानपुर** को वे लोग छोड़ दें तो तमाम योरोपियनों को वे निरापद रूप से चला जाने देंगे; (ह्वीलर द्वारा इस प्रस्ताव के मान लिये जाने के बाद), २७ जून को ४०० बचे हुए लोगों को नावों मे बैठा कर गंगा के रास्ते चले जाने की इजाजत दे दी गयी; नाना ने नदी के दोनों तटों से उन पर गोली-बार शुरू कर दिया; एक नाव भाग गयी, उसे और आगे जाकर डुबो दिया गया, पूरे गैरीसन के केवल ४ ही आदमी भाग सके। **औरतों और बच्चों**

मे भरी एक नाव को, जो तट की बालू मे फँस गयी थी, पकड़ लिया गया, वहाँ उन्हें कैदी बनाकर बन्द कर दिया गया; १४ दिन बाद (जुलाई में) विद्रोही सिपाही फ़तेहगढ़ से (फर्रुखाबाद से तीन मील के फ़ासले पर स्थित फौजी केन्द्र से) कुछ और अंग्रेज बन्दियों को वहाँ पकड़ ले आये।

कैनिंग की आज्ञा पर, मद्रास, बम्बई, लंका से वहाँ के लिए सेनाएँ रवाना हो गयीं। २३ मई को मद्रास से सहायतार्थ आने वाले सैनिक नील के नेतृत्व मे आ पहुँचे, और बम्बई का सैन्यदल सिन्धु नदी से होता हुआ लाहौर की ओर रवाना हो गया।

१७ जून. सर पैट्रिक ग्रान्ट (जो बंगाल में एन्सन के बाद प्रधान सेनापति बनकर आया था) और एडजूटेन्ट जनरल, जनरल हैवलाक कलकत्ता पहुँच गये; वहाँ से भी वे फौरन ही रवाना हो गये।

६ जून. इलाहाबाद में सिपाहियों ने विद्रोह कर दिया, (अंग्रेज) अफ़सरों को उनकी पत्नियों और बच्चों के साथ उन्होंने मार डाला; उन्होंने क़िले पर अधिकार करने की कोशिश की, उसकी रक्षा कर्नल सिम्पसन कर रहा था, ११ जून को उसकी सहायता के लिए मद्रास के बन्दूकचियों के साथ कर्नल नील कलकत्ते से पहुँच गया; कर्नल नील ने तमाम सिक्खों को निकाल बाहर किया, क़िले पर उसने अधिकार कर लिया, उसकी सुरक्षा के लिए उसने केवल अंग्रेजों को तैनात किया। (रास्ते में उसने बनारस पर कब्ज़ा कर लिया था और विद्रोह की पहली अवस्था में ३७वीं देसी पैदल सेना को हरा दिया था; सिपाही भाग गये थे); (अंग्रेज) सिपाही चारों तरफ़ से इलाहाबाद पहुँचने लगे।

३० जून. इलाहाबाद पहुँच कर जनरल हैवलाक ने कमान सँभाल ली, लगभग एक हज़ार ब्रिटिश सैनिकों को लेकर उसने कानपुर पर चढ़ाई कर दी; १२ जुलाई को फ़तेहपुर में उसने सिपाहियों को खदेड़ कर पीछे भगा दिया, आदि; युद्ध और लड़ाइयाँ हुईं।

१६ जुलाई. हैवलाक की सेना कानपुर के पास पहुँच गयी, भागियों को उसने हरा दिया, किन्तु दुर्ग के अन्दर न घुस सकी, क्योंकि उसे बहुत देर हो गयी थी; रात में नाना ने तमाम अंग्रेज बन्दियों को—अफसरों, स्त्रियों, बच्चों सब को—मार दिया; फिर तहखाने में उसने आग लगा दी और शहर का परित्याग कर दिया—१७ जुलाई, अंग्रेज सैनिक शहर में घुस गये।—हैवलाक ने नाना के रहने के स्थान, बिठूर पर चढ़ाई कर दी, बिना किसी विरोध के उसने उस पर कब्ज़ा कर लिया; महल को उसने

नष्ट कर दिया, क़िले को उड़ा दिया, फिर मार्च करके कानपुर वापिस लौट गया; रक्षा करने तथा स्थान को बचाये रखने के लिए वहाँ पर उसने नील को छोड़ दिया; हैवलाक स्वयम् लखनऊ की मदद के लिए चल पड़ा; सर हेनरी लारेन्स की कोशिशों के बावजूद, रेज़ीडेन्सी को छोड़कर, वहाँ का पूरा शहर विद्रोहियों के हाथों में पहुँच गया।

३० जून. पूरा रक्षक सैन्यदल विद्रोहियों की आसपास पड़ी सेना के खिलाफ़ निकल पड़ा, उसे खदेड़ कर पीछे हटा दिया गया, वह फिर जाकर रेज़ीडेन्सी में छिप गया; रेज़ीडेन्सी को घेर लिया गया।

४ जुलाई. सर हेनरी लारेन्स की (२ जुलाई को एक गोले से घायल हो जाने की वजह से) मृत्यु हो गयी, कर्नल इंगलिश ने कमान सँभाला; वह तीन महीने तक घिरा पड़ा रहा—बीच-बीच मे, कभी-कभी, छिट-पुट हमलों के लिए उसके आदमी बाहर चले जाते थे।—हैवलाक की कार्रवाइयाँ (पृष्ठ २७१)। हैवलाक के कानपुर वापिस लौट आने पर, विशाल सैन्य दल लेकर सर जेम्स आउट्रम उसके पास पहुँच गया, और भिन्न-भिन्न विद्रोही जिलों से अनेक अलग-थलग पड़े रेजीमेन्टों को भी मदद के लिए उसने बुला लिया।

१९ सितम्बर. हैवलाक, आउट्रम, और नील के नेतृत्व में पूरी फ़ौज ने गंगा को पार किया। १३ तारीख को, लखनऊ से आठ मील के फ़ासले पर आलमबाग़ में स्थित अवध के बादशाहों के ग्रीष्म प्रासाद पर हमला करके उन्होंने उस पर कब्ज़ा कर लिया।

२५ सितम्बर. लखनऊ पर अन्तिम धावा बोला गया, वे रेज़ीडेन्सी पहुच गये, वहाँ संयुक्त सेनाओं को दो महीने तक और चारों तरफ़ से घिरी हुई हालत में रहना पड़ा। (जनरल नील शहर की लड़ाई मे मारा गया; आउट्रम की बाँह में गहरा घाव लग गया।)

२० सितम्बर. जनरल विलसन के नेतृत्व में ६ दिन की वास्तविक लड़ाई के बाद, दिल्ली को फ़तह कर लिया गया। (ब्योरे के लिए देखिए, पृष्ठ २७२, २७३) घुड़सवारों के अपने सैन्य-दल का नेतृत्व करता हुआ हौडसन महल में घुस गया, बूढ़े बादशाह और बेगम (ज़ीनत महल) को उसने गिरफ्तार कर लिया; उन्हें कैदख़ाने में डाल दिया गया और शाहज़ादों को स्वयम् अपने हाथों से (गोली मार कर) ख़त्म कर दिया। दिल्ली में सैन्य रक्षक दल तैनात कर दिया गया और शहर को ख़ामोश कर दिया गया। इसके तुरन्त बाद कर्नल ग्रेटहेड दिल्ली से आगरा गया, आगरा के नज़दीक उसने

होल्कर की राजधानी, इन्दौर के बागियों की एक मजबूत सेना को हरा दिया;

१० अक्टूबर. उसने आगरे पर क़ब्ज़ा कर लिया, फिर कानपुर की तरफ़ बढ़ा। २६ अक्टूबर को वह वहाँ पहुंच गया; इसी दर्म्यान आज़मगढ़, छतना (हज़ारीबाग़ के समीप), धजवा, तथा दिल्ली के आस-पास के इलाके में कैप्टन ब्वायल्, मेजर इंगलिश, पील (वह नौसैनिक ब्रिगेड के साथ था; प्रोबिन और फ़्रेन के घुड़सवार दल भी—जो देश से आये थे—लड़ाई के मैदान में उतरने के लिए तैयार खड़े थे, *स्वयम्-सेवकों के जो रेजीमेंट तैयार किये गये थे वे भी लड़ाई में शामिल हो रहे थे*) तथा शावर्स के नेतृत्व में विद्रोहियों को हरा दिया गया। अगस्त में सर कौलिन कैम्पबेल ने कलकत्ते की कमान सँभाली, उसने युद्ध को और भी बड़े पैमाने पर चलाने की तैयारियाँ शुरू कर दीं।

१९ नवम्बर, १८५७. सर कौलिन कैम्बेल ने लखनऊ की रेज़ीडेन्सी में घिरे हुए गैरीसन (रक्षक सैन्य दल) को मुक्ति दिलायी। *(सर हेनरी हैवलाक की २४ नवम्बर को मृत्यु हो गयी); लखनऊ से—*

२५ नवम्बर, १८५७ को—कौलिन कैम्पबेल कानपुर की तरफ़, जो फिर विद्रोहियों के हाथों में पहुँच गया था, चल पड़ा।

६ दिसम्बर, १८५७. कानपुर में कौलिन कैम्पबेल ने लड़ाई में विजय हासिल की; शहर को खाली छोड़ कर विद्रोही भाग गये, सर होप ग्रान्ट ने उनका पीछा किया और उन्हें बुरी तरह काट डाला। पटियाला और मैनपुरी में विद्रोहियों को क्रमशः कर्नल सीटन और मेजर हौडसन ने पराजित कर दिया; *और भी अनेक जगहों पर ऐसा ही किया गया।*

२७ जनवरी, १८५८. दिल्ली के बादशाह का ड्रामा, आदि के मातहत कोर्ट मार्शल [किया गया]; "महा अपराधी" कहकर उन्हें मौत की सजा दी गयी (वे १५२६ से कायम मुगल राजवंश के प्रतिनिधि थे।) मौत की सजा को रंगून में आजीवन कैद की सजा में बदल दिया गया। साल के अन्त में उन्हें वहीं भेज दिया गया।

सर कौलिन कैम्पबेल का १८५८ का अभियान। २ जनवरी को उसने फर्रुखाबाद और फतेहगढ़ पर अधिकार किया, अगले को उसने कानपुर में जमा किया, हर तरह के तमाम सैनिकों, सामानों और तोपों को उसने वहीं अपने पास मँगवा लिया।—विद्रोही लखनऊ के आसपास जमा थे, वहाँ सर जेम्स आउट्रम उन्हें घेरे हुए था।—लड़ाई और यातनाओं [देखिए, पृष्ठ २०१,

२७७) के बाद, १५ मार्च[1] को (कौलिन कैम्पबेल, सर जेम्स आउट्रम, आदि के नेतृत्व मे) लखनऊ पर पुनः अधिकार कर लिया गया; शहर को, जिसमे प्राच्यकला के अनुपम भंडार भरे हुए थे, लूट डाला गया; २१ मार्च को लड़ाई खत्म हो गई; अन्तिम बार तोप २३ तारीख को चलाई गयी। –दिल्ली के शाह [के बेटे] शाहज़ादा फ़ीरोज़, बिठूर के नाना साहब, फ़ैज़ाबाद के मौलवी तथा अवध की बेगम, हज़रत महल के नेतृत्व में विद्रोही बरेली की तरफ़ भाग गये।

२५ अप्रैल,[2] १८५८. कैम्पबेल, ने शाहजहाँपुर पर कब्ज़ा कर लिया, मौस ने बरेली के पास विद्रोहियो के हमले को असफल कर दिया, ६ मई को घेरे की तोपों ने बरेली पर गोलाबारी शुरू कर दी, इसी बीच मुरादाबाद पर कब्ज़ा कर लेने के बाद जनरल जोन्स, निर्धारित योजना के अनुसार, वहाँ आ गये; नाना और उनके साथी भाग गये, बरेली को बिना किसी प्रतिरोध के अधिकार में ले लिया गया। इसी दर्म्यान, शाहजहाँपुर को, जिसे विद्रोही अच्छी तरह से घेरे हुए थे, जनरल जोन्स ने छुड़ा लिया; ल्यूगार्ड के डिवीज़न पर, जो लखनऊ से मार्च करके जा रहा था, हमला किया गया, कुमार सिंह के नेतृत्व मे विद्रोहियों ने उसको बहुत नुकसान पहुँचाया; सर होप ग्रान्ट ने बेगम को हरा दिया, नयी सैन्य शक्ति बटोरने के लिए वह घाघरा नदी की तरफ भाग गयी; इसके तुरन्त बाद ही फ़ैज़ाबाद के मौलवी मार डाले गये।

जून, १८५८ के मध्य तक, विद्रोह तमाम जगह परास्त हो गये, अब मिलकर लड़ने की क्षमता उनमे नहीं रह गयी; वे लुटेरों के गिरोहों में बँट गये और अंग्रेज़ों की बँटी हुई सेनाओं को खूब तंग करने लगे। लड़ाई के केन्द्र : बेगम की रण पताका, दिल्ली का शाहज़ादा और नाना साहब।

विद्रोह को सर ह्यू रोज़ के मध्य भारत के दो महीने (मई और जून) के अभियान ने अन्तिम रूप से धराशायी कर दिया।

जनवरी १८५८. रोज़ ने रथगढ़ पर कब्ज़ा कर लिया, फरवरी मे उसने सागुर और गाराकोटा पर कब्ज़ा कर लिया। झांसी पर, जहाँ रानी डटी हुई थी, उसने धावा बोल दिया।

१ अप्रैल, १८५८. नाना साहब के चचेरे भाई, तांत्या टोपे के खिलाफ़—जो

---

१ के पीर मैलीसन, खण्ड ४, के अनुसार, १४ मार्च।

२ के पीर मैलीसन, खण्ड ३, के अनुसार, ३० अप्रैल।

झांसी की रक्षा करने कालपी से इधर गये थे—सख्त लड़ाई की गई; तांत्या पराजित हुए।

४ अप्रैल[1] : झांसी को फ़तह कर लिया गया; रानी और तांत्या टोपे भागकर निकल गये, और कालपी में अंग्रेजों का इन्तज़ार करने लगे; वहां मार्च करते समय—

मई, १८५८—के दिन काञ्चा के कस्बे में दुश्मन की एक मज़बूत सेना ने रोज़ पर हमला कर दिया, उसने उनको बुरी तरह पराजित कर दिया।

१६ मई, १८५८. रोज़ कालपी से कुछ ही मील दूर रह गया, विद्रोही उसे खूब तंग कर रहे थे।

२२ मई, १८५८. कालपी में विद्रोहियों ने एक दुस्साहसिक हमला किया; वे हरा दिये गये, भाग निकले;

२३ मई, १८५८. रोज़ ने कालपी पर अधिकार कर लिया। अपने सिपाहियों को, जो [युद्ध अभियान की वजह से] और गर्मी के सख्त मौसम की वजह से एकदम थक गये थे, आराम देने के लिए वह वहीं रुक गया।

२ जून, नौजवान सिंधिया (अंग्रेजों के कुत्ते) को सख्त लड़ाई के बाद खुद उसकी सेनाओं ने ग्वालियर से खदेड़ कर बाहर कर दिया, जान बचाने के लिए वह आगरा भाग गया। रोज़ ने ग्वालियर पर चढ़ाई कर दी; विद्रोहियों का नेतृत्व करते हुए झांसी की रानी[2] और तांत्या टोपे ने—

१९ जून—के दिन, लश्कर की पहाड़ी (ग्वालियर के सामने) पर उसने मोर्चा लिया; रानी मारी गयी, काफी बड़े हत्याकाण्ड के बाद उनकी सेना तितर-बितर हो गयी; ग्वालियर अंग्रेजों के हाथों में पहुँच गया।

जुलाई, अगस्त, और सितम्बर, १८५८ के दर्म्यान सर कोलिन कैम्पबेल, सर होप ग्राण्ट तथा जनरल वालपोल ने अपना समय अधिक प्रमुख विद्रोहियों को पकड़ने और उन तमाम किलों पर अधिकार करने में लगाया जिनके ग्वालियर के दर्रे में लगता था; बेगम ने कुछ और जगहों पर अन्तिम बार लड़ने की कोशिशें कीं, फिर नाना साहब के साथ राप्ती नदी के उस पार भागकर वह अंग्रेजों के कुत्ते, नेपाल के जंग बहादुर की अमलदारी में चली गयी; जंग बहादुर ने अंग्रेजों को इस बात की इजाज़त दे दी कि उसके देश में वे विद्रोहियों को पकड़ लें; इस प्रकार "दुस्साहसिक लड़ाई

---

१ के और मैलीसन, खण्ड ४, के अनुसार, ३ अप्रैल।

२ उसका नाम लक्ष्मीबाई था।

के अन्तिम गिरोहों को भी तितर-बितर कर दिया गया" ; नाना और बेगम भागकर पहाड़ियों में चले गये, और उनके अनुयायियों ने हथियार डाल दिये।

१८५९ के प्रारम्भिक भाग में, तांत्या टोपे के गुप्त निवास-स्थान का पता चल गया, उन पर मुकदमा चलाया गया और उन्हें फांसी दे दी गयी।—"समझा जाता है" कि नाना साहब की मृत्यु नेपाल मे हुई थी। बरेली के खान को पकड लिया गया था और गोली से उडा दिया गया था; लखनऊ के मम्मू खाँ को आजीवन कैद की सजा दे दी गयी; दूसरो को कालेपानी भेज दिया गया, अथवा भिन्न-भिन्न मियादों के लिए जेल मे डाल दिया गया; विद्रोहियों के अधिकांश भाग ने—उनकी रेजीमेन्टें तो टूट ही चुकी थी—तलवार रख दी, रैयत बन गये। अवध की बेगम नेपाल मे काठमाण्डू मे रहने लगी।

अवध की भूमि को जब्त कर लिया गया, कैनिंग ने उसे एंगलो-इंडियन सरकार की सम्पत्ति घोषित कर दिया। सर जेम्स आउट्रम के स्थान पर सर रौबर्ट मोंटगुमरी को अवध का चीफ़ कमिश्नर बना दिया गया। ईस्ट इंडिया कम्पनी को खत्म कर दिया गया। वह युद्ध के खत्म [होने] के पहले ही टूट गयी थी।

दिसम्बर, १८५७. पार्मस्टन का भारत सम्बन्धी बिल; डायरेक्टर-मण्डल के संगीन विरोध के बावजूद, उसका प्रथम पाठ फरवरी, १८५८ में पूरा कर दिया गया, लेकिन उदारदलीय मंत्रिमण्डल के स्थान पर टोरी मन्त्रि-मण्डल आ गया।

१९ फरवरी, १८५८. डिज़राएली का भारत सम्बन्धी बिल (देखिए, पृष्ठ २८१) पास न हो सका।

२ अगस्त, १८५८. लार्ड स्टैनली का इण्डिया बिल पास हो गया और, इस प्रकार, ईस्ट इण्डिया कम्पनी की इतिक्रिया पूर्ण हो गयी। भारत "महान" विक्टोरिया के साम्राज्य का एक प्रान्त बन गया!

०००

अनुक्रमणिका

[आ]

[प]

[स]